उमाशंकर

प्रकाशक • उमेश प्रकाशन,
५, नाथ मार्केट, नई सड़क, दिल्ल

मुद्रक • राष्ट्रभाषा प्रिन्टर्स,
२७ शिवाश्रम, क्वीन्स रोड, दि

संस्करण • अक्टूबर, १९६१
(प्रथम संस्करण)

मूल्य • पाँच रुपये पचास नए पैसे

दो शब्द

विगत जीवन में जो देखा और अनुभव किया
है उसे कहने की बड़ी उत्कट अभिलाषा थी।
आज वह पूरी हुई।
घटनाएँ सत्य और वास्तविक हैं।
उनमें नमक-मिर्च मिलाकर न तो उनके
स्वयं के आकर्षण को बरबाद किया गया है
और न स्वाभाविकता की छीछालेदार की गई है।
कृत्रिमता लेशमात्र भी नहीं है।
जो कुछ जैसा है उसे उसी प्रकार रख दिया गयाहै—
शब्दों को सुन्दर वाक्यों की लड़ियों में पिरो कर।

आशा है प्रस्तुत सामग्री पठनीय और
रोचक होगी।
मेरे अनुज प्रेम शंकर जो स्वयं भी उपन्यासकार
हैं—पांडुलिपि सम्बन्धी कार्यों में मेरा हाथ
बटाते रहे हैं। वह बधाई के पात्र हैं।

खास बाज़ार,
कानपुर

उमा शंकर

उमेश की ओर से हरनाथसिंह
की
स्मृति में—

प्यार की मंजिल बहुत मुश्किल बहुत मुश्किल है मंजिल,
जिन्दगी में मौत की मंजिल बहुत मुश्किल है मंजिल;
कौन किसको मिल सकेगी इस सफर में राम जाने—
बदनसीबों के लिए मुश्किल बहुत मुश्किल है मंजिल।

प्रथम इयत्ता

सहाय बाबू से वकील साहब कह रहे थे, "आप उमेश का एडमीशन इलाहाबाद, कायस्थ पाठशाला में क्यों नहीं करा देते ? पढ़ाई के साथ-साथ संगीत वाली समस्या भी हल हो जाएगी और डीवीज़न भी ईश्वर चाहेगा तो अच्छा बन जाएगा। वहाँ एक विषय संगीत भी है।"

"यह तो ठीक है, लेकिन रहने वाला मसला कैसे हल होगा ? मैं उसे हॉस्टल या किसी होटल में रखना नहीं चाहता। तब वह बिल्कुल आज़ाद हो जाएगा। अगर कोई परिवार होता···।"

वकील साहब मुसकराये, "अंकुश बनाये रखने के आप बड़े पक्षपाती हैं ? खैर, इस प्रकार का प्रबन्ध हो जाएगा। मैं अगले इतवार को जब इलाहाबाद जाऊँगा तो उसे साथ लेता जाऊँगा। वहाँ कटरे में मेरे एक सम्बन्धी हैं। उनके यहाँ उमेश को सब प्रकार की सुविधाएँ भी होंगी और बक़ौल आपके बिल्कुल आज़ाद भी नहीं हो पाएँगे।"

"अभी नहीं। यह भी तय कर दीजिए कि रहने और खाने-पीने में जो खर्चा होगा वह पाई-पाई मुझसे हिसाब करके लिया जाएगा।"

"ना। तब मैं उमेश को नहीं ले जा सकता। इस शर्त पर मेरे सम्बन्धी तैयार न होंगे। आप स्वयं उचित समझकर उन्हें मासिक भेजते रहें वह तो बात और है, लेकिन वह आपको हिसाब भेजें—यह नामुमकिन है।"

"अच्छा, यों ही सही। मैं ही भेजता रहूँगा। तो अगले इतवार को आपका जाना निश्चित है ?"

"हाँ। एक हफ्ते की छुट्टी ले रहा हूँ। बनारस भी जाना है।"

नौकर चाय दे गया। दोनों चुस्की लेते हुए अन्य बातों में उलझ गए।

वकील साहब सी० ओ० डी० कानपुर में काम करते हैं और सहाय बाबू के साथ-साथ रहते हैं। इनका घर बनारस में है। यद्यपि वकील साहब वकालत की परीक्षा में उत्तीर्ण न हो सके थे फिर भी सब लोग उन्हें 'वकील

साहब' कहकर ही सम्बोन्धित करते हैं । सहाय बाबू से इनकी भेंट विद्य
जीवन की है जब दोनों हिन्दू विश्वविद्यालय में पढ़ा करते थे ।

सहाय बाबू हारनेस फैक्टरी में एक पदाधिकारी हैं और नारि
बाजार में रहते हैं । उमेश इनका छोटा भाई है जिसने इस वर्ष हाई स्
की परीक्षा पास की है ।

उमेश का नाम कायस्थ पाठशाला कालेज में फर्स्टइयर में लिख गय
छरहरे वदन का आकर्षक चेहरे वाला उमेश गौर वर्ण का था । बातच
में चपल और मुँहफट था । पीठ पीछे उसकी बात करने की आदत न
थी । उसकी आवाज़ तेज़ थी और वह सदैव ऊँचे स्वर में वार्तालाप
करता था । कष्ट में पड़े किसी भी व्यक्ति के लिए वह हर तरह से जोखि
उठा सकता था । ऐसी उसकी प्रकृति थी और सम्भवत: वह पैदाइशी थ

इलाहाबाद, कलाकारों का नगर है । लेखकों, कवियों, संगीत
विद्वानों और चित्रकारों की यहाँ भरमार है । जिस मुहल्ले में जाइए,
प्रकार के दो-चार व्यक्ति आपको अवश्य नज़र आजाएँगे । किसी भी हो
या रेस्ट्राँ में घुसिये, सामने आपको क़हकहे के साथ साहित्यिक चर्चा अव
सुनाई पड़ जाएगी । कविगोष्ठी, मुशायरा, नाटक, संगीत-सम्मेलन त
साहित्यकार-सम्मेलन अथवा छोटी-मोटी जमघट यत्र-तत्र नगर में नि
दिखलाई पड़ेंगी । यह तो मैंने साहित्यिक होने के नाते अपनी बात कही
किन्तु अगर किसी राजनीतिज्ञ से इलाहाबाद के विषय में चर्चा चलाएँ
वह तुरन्त कह उठेगा कि इलाहाबाद सदैव से धुरन्धर राजनीतिज्ञों
अड्डा रहा है और यह एक प्रकार से सत्य भी है । स्वतन्त्रता मिलने से प
सम्पूर्ण देश की राजनीति यहीं से संचालित होती रही है ।

अतः निष्कर्ष यह निकला कि इलाहाबाद जैसे नगर में यदि कोई व्य
अपने व्यक्तित्व का परिचय देने का उत्साह रखता हो तो निस्संदेह वह
नगर की सीमा के भीतर ही नहीं, वरन् देश और देश के बाहर तक अ
कार्यों द्वारा अपनी ख्याति फैला सकता है । उत्साही और कलाकार उमे
को यह अवसर मिला, उसके मनसूबे बढ़े । उसका कण्ठ सुरीला था
साथ ही बाल्यकाल से संगीत में अभिरुचि होने के कारण पिता और ब
भाई द्वारा प्रोत्साहन मिलने के फलस्वरूप उसकी-संगीत में जानकारी

अच्छी थी। फिर क्या था? उसने अपने गुण का परिचय दिया। कुशालकरजी जो कायस्थ पाठशाला में संगीत के शिक्षक तथा नगर के प्रसिद्ध संगीतज्ञों में गिने जाते थे—उमेश से बड़े प्रभावित हुए। और जब गुरु शिष्य से प्रसन्न हो जाए तब कहना ही क्या है? इससे गुरु की भी तो ख्याति बढ़ती है। कुशालकर जी उमेश को बढ़ावा देने लगे। कालेज अथवा कालेज के बाहर के आयोजनों में उमेश का कार्यक्रम होने लगा। उसकी सुरीली आवाज़ ने अपना रंग हर जगह जमाया। धीरे-धीरे उसका क्षेत्र व्यापक होने लगा। नित्य निमन्त्रण आने लगे और इनमें दिन-प्रतिदिन वृद्धि होती गई।

दशहरे की छुट्टी में जब उमेश कानपुर आया तो उसने गर्व सहित अपनी सारी प्रगति बड़े भाई को बतलाई। सहाय बाबू मन-ही-मन बड़े प्रसन्न हुए। उन्हें उमेश से बड़ा स्नेह था। उनकी हार्दिक इच्छा थी कि उमेश एक ख्यातिनामा व्यक्ति बने। फिर भी इस विचार से कि वह पढ़ाई में ढीला न पड़े, उन्होंने दिखावटी गम्भीरता प्रदर्शित की "लिखने-पढ़ने में भी समय देते हो न?"

"जी हाँ! उसमें किसी प्रकार की कमी नहीं है।"

'हाँ! वह पहले है। उसके बाद और कुछ। कलाकार बनकर ख्याति प्राप्त करना बुरा नहीं है, परन्तु लिखे-पढ़े कलाकार और अनपढ़ कलाकार में ज़मीन-आसमान का अन्तर होता है। उसकी प्रतिष्ठा कुछ और ही होती है। समझे?"

"जी।"

"और वहाँ कोई परेशानी तो नहीं?"

"जी नहीं।"

सहाय बाबू टहलते हुए दूसरे कमरे में चले गये।

छुट्टियाँ समाप्त होने पर उमेश इलाहाबाद आया। पुराने कटरे के चौराहे के समीप कचहरी को जाती हुई सड़क की दाहिनी पटरी की एक पतली गली के अन्दर जाने पर कृष्णमुरारीलाल का बड़ा-सा मकान था। कृष्णमुरारीलाल कचहरी में रिकार्ड सेक्शन के बड़े बाबू थे। आमदनी अच्छी थी। आयु लगभग तीस-पैंतीस की थी। देखने-सुनने में सुन्दर थे। स्वभाव

भी अच्छा था। इनकी पत्नी भी सुन्दर-सी गोल-मटोल थीं। अभी कोई बच्चा नहीं हुआ था, इस कारण युवावस्था की मादकता का आभास मिल रहा था। इन दोनों प्राणियों के अतिरिक्त कृष्णमुरारीलाल की वृद्धा माँ और एक नौकर था। माँ, वर्ष में चार-छः महीने यहाँ तो चार-छः महीने लखनऊ रहा करती थीं। कृष्णमुरारीलाल के पिता किसी दफ्तर में बाबू थे। अब पेंशन पाते हैं। कृष्णमुरारीलाल के संग ही उमेश रहता है। वकील साहब की बूआ के लड़के हैं कृष्णमुरारीलाल।

जाड़े की शुरुआत थी। मौसम में अनोखापन था। प्रकृति अधिक लुभावनी हो उठी थी। कण-कण में नवीनता के साथ-साथ आकर्षण आ गया था। जड़-चेतन सभी प्रसन्नता का अनुभव करने लगे थे। परिवर्तन-मय सृष्टि में परिवर्तन के प्रति इस प्रकार अनुराग दिखलाना स्वाभाविक ही है। ऐसे वातावरण में एक दिन मैटनी शो सिनेमा देखकर उमेश जब घर आया तो किसी नये व्यक्ति को देखकर कुछ शर्मा-सा गया। आँखें उठतीं और तत्क्षण झुक जातीं। वह झेंप रहा था। अपनी झेंप छिपाने के अभिप्राय से बिना नीचे रुके शीघ्रता से सीढ़ियों पर खट-खट चढ़ता हुआ वह अपने ऊपर वाले कमरे में आ गया। कमरे में आते ही एक बारगी तमाम सवाल दिमाग में टकरा उठे—कौन है, कहाँ से आई है, किस लिए आई है, कब तक यहाँ रहेगी, क्या यह भी पढ़ने आई है, परन्तु नहीं, अब किसी कालेज में नाम नहीं लिख सकता। असम्भव है। और कहीं लिख गया तो···तब तो जीवन का रूप ही बदल जाएगा। कितनी सुन्दर है? साँवले रंग में भी ऐसा सौन्दर्य और आकर्षण··· ।

तब तक नीचे से आवाज़ आई, 'उमेश बाबू।'

उमेश की तन्मयता भंग हुई 'आया भाभी जी। कपड़े बदल रहा हूँ।' उसने कमरे से ही चिल्लाकर कहा। कृष्णमुरारीलाल की पत्नी को उमेश 'भाभी' कहकर सम्बोधित करता है।

उमेश ने झटपट कपड़े बदले और कुछ झिझकता हुआ नीचे आया। भाभीजी चौके में थीं, बोलीं, "आज इतनी देर कहाँ हो गई? क्या कोई पिक्चर चले गये थे?" वह उमेश के लिए प्याले में चाय डालती हुई मुस्कराने लगीं।

"हाँ। हरनाथ घसीट ले गये थे। आप जानती ही हैं। उनकी ज़िद के आगे किसी का वश तो चलता नहीं। बड़ा उजड्ड है। सन्तबक्स और आकाश भी थे।" उमेश की दृष्टि झुकी हुई थी। यद्यपि उसने दो-एक बार भाभी जी की ओर देखकर पास में दीवार के सहारे खड़ी उस बाला को यह जताने का प्रयत्न किया था कि वह लजाधुर युवकों में नहीं है।

"नौकर ने चाय की प्याली उसके हाथ में लाकर थमा दी।"

'अरे', भाभी जी ने जब सिर उठाया तो ध्यान आया, "इससे तो आपका परिचय कराया ही नहीं। यह मेरी छोटी बहन जया है। दोपहर में आई है। कल इसका भी फ़र्स्ट इयर में नाम लिखवाया जाएगा। चलिये, अब एक से दो हो गये।"

जया ने हाथ जोड़कर नमस्ते किया। प्रत्युत्तर में उमेश ने भी हाथ जोड़ते हुए उसे नज़र-भर देखने की कोशिश की, लेकिन ऐसा न हो सका। उसकी आँखें तत्काल भाभी जी की ओर मुड़ गईं। "किन्तु भाभी जी, इतना लेट एडमीशन सम्भव है ?"

"हो जाएगा। ऐसा भी कोई काम है जो आपके भाई साहब के द्वारा न हो सके ?" वह मुस्कराईं।

उमेश हँसने लगा, "हाँ, इससे तो मैं भी सहमत हूँ।" उमेश ने पुनः कनखियों से जया को देखा, परन्तु जया अपनी बहन की ओर देख रही थी।

"आपके सब्जेक्टस् क्या हैं ?" उमेश ने चाय की प्याली रखते हुए जया से प्रश्न किया।

"अभी कुछ निश्चित नहीं किया है। जीजाजी की जो राय होगी, वही ले लूँगी। वैसे अंग्रेज़ी, हिन्दी और इतिहास तो तय है।"

जया की आवाज़ में एक विशेष प्रकार का माधुर्य था जिससे उमेश का रोम-रोम झंकृत हो उठा। उसकी इच्छा होने लगी थी कि जया बोलती रहे और वह सुनता रहे। उसने आगे बात चलाई, "इतिहास से आपको विशेष रुचि है ?"

"हाँ! जल्दी याद हो जाता है। आपने कौन-कौन सा विषय ले रखा है ?"

"इतिहास तो मेरा भी एक विषय है, किन्तु विशेष रुचि संगीत में है

श्रौर उसी के पीछे···।"

"ये वड़े अच्छे गायक हैं जया," भाभी जी बीच में बोल पड़ीं, "व
दिन नागा न जाता होगा, जब इनका कहीं से निमन्त्रण न हो।"

"तब तो पढ़ाई का वड़ा नुकसान होता होगा।"

उमेश ने जया की श्रोर देखा। उसकी यह बात बुरी लगी। वह स
झता था जया उसकी प्रशंसा से प्रभावित होकर शब्दों से न सही, कि
नेत्रों से आश्चर्य प्रकट करके अपने आकर्षण का कुछ-न-कुछ आभास
देगी हीं, परन्तु ऐसा न हुआ। उमेश के मुँह से धीरे-से निकला, "नुकस
होता है, लेकिन क्या किया जाए?"

तब तक किसी के आने की आहट मिली। सामने कृष्णमुरारीलाल ः
'नमस्ते।' जया चौके से बाहर आई।

'नमस्ते।' और फिर जीजाजी ने धीरे-से साली के गाल पर थप
देते हुए कहा, "आपकी तशरीफ़ तो कल आ रही थी? रुक कहाँ गईं?'

"रास्ते में", जया ने मुँह बनाया, "आपको कोई आपत्ति?"

"आपत्ति अगर होगी, तब भी चुप रहना ही उचित समझूँगा, अन्य
जितना सुलभ है वह भी दुर्लभ हो जाएगा।"

सब हँस पड़े। जया, जीजाजी के संग कमरे में आकर बैठ गई। मज़
वाला प्रसंग पुनः आरम्भ हो गया। उमेश चुपचाप ऊपर अपने कमरे
आ गया। नीचे से जया के हँसने की आवाज़ उसकी कानों में पड़ती रहं

उमेश खाट पर लेटकर मधुर कल्पनाओं में खो गया। जया की बड़ी-ब
आँखें, पतले-पतले होंठ, चमकते हुए सफेद दाँत, मुखमण्डल का आकर्ष
लावण्य, नितम्बों तक लटकते हुए लम्बे-लम्बे बाल, अंगों की सुडौल
और उनका निखार सब एक-एक करके उसके विचारों में मंडराने लगे
उन्हें वह संवारने लगा, पाने की कल्पना करने लगा और उनकी प्रा
के उपरान्त जो आनन्द की पराकाष्ठा होती है, उसका अनुभव करने लग
यह उसके जीवन में प्रथम प्रेम का अंकुर था और इस प्रथम अंकुर की उत्प
में जो हृदय और मस्तिष्क की गति होती है वह बड़ी विचित्र और भा
कता से ओत-प्रोत होती है। एक नये प्रकार के संसार का निर्माण हे
लगता है।

२

जया का नाम महिला विद्यापीठ में लिख गया। वह कालेज आने-जाने लगी। सवेरे साढ़े नौ बजे चला जाना और पाँच वजे तक लौटना। चाय-नाश्ता करते-करते छः बज जाना, तदुपरान्त थोड़ी देर तक जीजाजी से हँसी-मज़ाक और फिर पढ़ाई में लग जाना। सुब्रह्-शाम चाय पीते समय अथवा भोजन के वक्त अगर उमेश मिल गया तो दो-चार बातें शिष्टाचार के नाते.हो गईं, अन्यथा कोई बात नहीं। वह अपनी पढ़ाई के प्रति अधिक चिन्तित और उत्सुक थी। यहाँ तक कि इतवार तथा अन्य छुट्टियों के दिन भी उसका कार्यक्रम ऐसा ही रहा करता था। दिन बीतने लगे।

महीना समाप्त होने को आया। उमेश ने जिन कल्पनाओं का सृजन किया था वे धूलधूसरित होते नज़र आने लगीं। उसका भावुक हृदय अन्दर-ही-अन्दर कचोटने लगा और यह कचोट ज्यों-ज्यों बढ़ती गई, त्यों-त्यों जया के प्रति आकर्षणों में वृद्धि होती जाती थी। वह जया से बातें करने के लिए बहाना निकाला करता, छुट्टी होते ही सीधे घर को भागता और भाभीजी के पास बैठकर घण्टों इधर-उधर की बातें करता रहता, परन्तु फिर भी इस वार्तालाप में जया भाग न लेती। वह अपने कमरे में बैठकर पुस्तकें उलटा-पुलटा करती या कृष्णमुरारीलाल के संग हँसी में तल्लीन रहती। उमेश कान में उँगली डाले, हताश प्रेमी की भाँति फिर भी किसी आशा के सहारे, उसे पाने के लिए उसकी ओर बढ़ता चला जा रहा था।

कभी-कभी रात में घण्टों किताब खोले उमेश सोचा करता। मन में तर्क-वितर्क करके अपने पक्ष के निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न करता, परन्तु इसमें उसे संफलता नहीं मिलती। उसने सुन रखा था कि स्त्रियों के अन्दर कोमलता और भावुकता पुरुषों से अधिक होती है। फिर जया में वह कोमलता और भावुकता क्यों नहीं है ? क्या वह नहीं समझती कि मैं उसका प्रेम पाने के लिए लालायित हूँ। क्या मेरी बातों से उसे आभास नहीं मिलता कि मैं उसके हेतु अपना सर्वस्व न्यौछावर कर सकता हूँ। अवश्य मिलता

होगा। इससे वह इन्कार नहीं कर सकती। तब मुझसे दूर-दूर रहने का कारण ?

एक दूसरा प्रश्न उठा—क्या मैं देखने-सुनने में अच्छा नहीं हूँ अथवा वह मुझे अपने योग्य समझती नहीं।

उत्तर मिला—ऐसी कोई बात नहीं है।

तीसरा प्रश्न उठा—तो क्या वह हृदय से शुष्क है ?

उत्तर मिला—बिल्कुल नहीं। उसके हाव-भाव तथा कृष्णमुरारीलाल के संग विनोद की तमाम बातें इसके खण्डन में उदाहरणस्वरूप रखी जा सकती हैं। वह अच्छी बातें करती है और अच्छी-अच्छी बातों के सुनने में रस भी लेती है। वह किसी भी रूप से न तो शुष्क है और न हृदयहीन। वह देखने से भी तो ऐसी नहीं प्रतीत होती।

तब ?

तब क्या ? उसे मेरे लिए लाइकिंग नहीं है। यह आवाज़ उमेश के हृदय के किसी कोने से निकलकर फैल गई। उमेश का मन रुआंसा हो आया। उसका सोचना बन्द हो गया।

उधर आठ-दस दिनों से उमेश में एक नया परिवर्तन आ गया था। वह न तो अब जया की ओर देखता है, और न उससे बातचीत करने का प्रयत्न ही करता है। और संयोगवश ऐसी स्थिति कोई आ भी जाती है तो बड़ी चतुरता से उसे बरकाता हुआ निकल जाता है। अब वह घर में भी बहुत कम रहने लगा था। सवेरे चाय पीकर निकल जाता और साढ़े नौ के बाद आता। जब जया स्कूल जा चुकी होती। जल्दी-जल्दी नहाता, खाना खाता और कालेज चला जाता। छुट्टी होने पर वह घर न आकर सन्तबक्स, हरनाथ या आकाश के यहाँ चला जाता और वहाँ से आठ बजने के बाद लौटता। भोजन करता और दो-चार बातें भाभीजी या कृष्णमुरारीलाल से करके अपने कमरे में चला जाता। देर में आने के कारण पूछने पर वह कम्बाइन्ड स्टडी बताकर कृष्णमुरारीलाल की शंका का निवारण कर देता। इतना ही नहीं, संगीत, जिसके लिए वह इलाहाबाद भेजा गया था, उसमें भी उसकी रुचि कम हो गई थी। अब वह प्रायः आयोजनों में इधर-उधर का बहाना बतलाकर जाने से इन्कार कर दिया करता था।

एक दिन रात में उमेश काफी देर से आया। लगभग रात के बारह बजे रहे होंगे। सब लोग सो चुके थे, परन्तु जया के कमरे की बत्ती अब भी जल रही थी। उमेश ने आवाज़ दी। जया ने कमरे से निकलकर नौकर को जगाया और किवाड़ खोलने को कहा। वह पुनः अपने कमरे में आकर बैठ गई। उमेश ने नौकर से ऊपर से केवल पानी लाने को कहा और धीरे-से सीढ़ियाँ चढ़ता हुआ ऊपर चला गया।

नौकर पानी देकर जब नीचे आया तो जया ने बुलाकर पूछा, "उमेश बाबू सो गये?"

"नहीं।"

"क्या कर रहे हैं?"

"बैठे हुए हैं।"

जया कमरे से बाहर निकली और कुछ सोचती हुई सीढ़ियों की ओर चल पड़ी।

उमेश कुर्सी पर बैठा आँखें बन्द किये कुछ सोच रहा था।

"आजकल पढ़ाई पर बड़ा ज़ोर दिया जा रहा है?"

उमेश चौंक पड़ा और खड़ा हो गया। जया होंठों में मुस्कराती हुई दरवाज़े पर खड़ी थी। उमेश तनिक रुकते हुए बोला, "आइये।"

जया दूसरी कुर्सी पर आकर बैठ गई, "अब तो आपने खाने-पीने की भी चिन्ता त्याग दी है। शायद अगले वर्ष टॉप करने का विचार है?"

"आज देर हो गई, वरना आठ बजे तक तो मैं रोज़ आ जाता हूँ।" जया को इतने समीप और ऐसे बेसमय पाकर सम्भवतः उमेश कुछ घबड़ा उठा था। क्या कहे, क्या न कहे, वह कुछ समझ नहीं पा रहा था।

"खैर, पढ़ाई में आठ और बारह की चिन्ता तो की नहीं जाती। मेरा कहने का अभिप्राय यह था कि बरखा न सही किन्तु बौछार की अधिकारिणी तो हो ही सकती हूँ। सवेरे आठ से रात के आठ तक की पढ़ाई क्या थोड़ी पढ़ाई है? आपके साथी भी खूब पढ़ने वाले मिले हैं। सही है—अच्छे को सदैव अच्छे व्यक्ति ही मिलते हैं।"

उमेश उत्तर क्या दे? वह तो हौल-दिल हो उठा था। उसे क्या अन्दाज़ कि जया के साथ अकेले बातें करने में उसकी ऐसी हालत हो जाएगी। उसके

मुँह से और कुछ न निकलकर यह निकल पड़ा, "आजकल आपकी पढ़ाई कैसी चल रही है ?"

"यों ही। कोई विशेष नहीं। अभी तो पिछड़ा हुआ कोर्स पूरा कर पाई हूँ।" वह तनिक गम्भीर हो गई। सम्भवतः उसे उमेश की मनःस्थिति का अनुमान हो गया था, "यह सब देर में नाम लिखाने का फल है। यदि इतनी मेहनत न करती तो मेरे लिए परीक्षा एक समस्या हो जाती।"

"बिल्कुल।" उमेश ने हामी भर दी।

जया ने पुनः प्रसंग बदला, "संगीत का अभ्यास क्या आपने अब पूर्णतः बन्द कर दिया है ? पहले तो इसी बहाने जब तक कुछ सुनने का भी अवसर मिल जाया करता था, परन्तु अब वह भी समाप्त हो गया। उचित भी है। जिसके पास गुण होता है उसके रोब तो होने ही चाहिए। बिना इसके लोग बार-बार कहने कैसे आएँगे ? मैं ग़लत नहीं कह रही हूँ ?" वह मुस्कराने लगी।

"आप तो मुझे बनाने लगीं, जयाजी। यदि मेरे गाने में इतना आकर्षण होता तो फिर क्या कहना था ? तब ऐसी स्थिति न होती।" उमेश बड़ी दूर पहुँच गया था। हृदय की व्यथा उसके मुँह से अनजाने में निकल पड़ी थी।

"हो सकता है आपकी बात सत्य हो, किन्तु मैं तो समझती हूँ कि अगर आपका अभ्यास चलता रहा तो भविष्य में आप संगीत के क्षेत्र में अद्वितीय स्थान बना सकेंगे। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।" जया ने बड़ी चतुराई से उमेश के गूढ़ाशय वाक्यों पर पर्दा डालकर उनके भावों को दबा दिया। वह गम्भीर और अनभिज्ञ बन गई थी। और साथ ही जो कहना चाहिए था, उसे भी कह दिया था।

उमेश ने जया को ध्यान से देखकर कुछ समझने की चेष्टा की और फिर गर्दन झुकाली। वह सम्भवतः कुछ कहने को सोच ही रहा था कि जया खड़ी हो गई, "आपका समय बड़ा बरबाद किया। धृष्टता के लिए क्षमा याचना करती हूँ। आशा है माफी मिल जाएगी। अच्छा नमस्ते।" वह हँसती हुई चली गई।

उसके जाने के बाद उमेश उछल पड़ा। अंग-अंग में एक विचित्र प्रकार

की आनन्ददायिनी सिहरन दौड़ उठी। हृदय की दशा भी अनोखी हो गई। पता नहीं उसमें किस प्रकार की गुदगुदी होने लगी थी। मन दूर पहुँचकर कल्पनाओं का सृजन करने लगा। वह बत्ती बुझाकर लेट गया और फिर उसका मस्तिष्क जया के एक-एक वाक्य को तौल-तौलकर उसका अर्थ लगाने में तल्लीन हो गया। बड़ी रात गये तक उसकी कल्पनाओं में जया अमृत का स्रोत वहाती रही और तब वह रजाई से मुँह ढककर सोने का उपक्रम करने लगा। परन्तु पढ़ाई के ऊपर व्यंग्य करके देर में आने का उलाहना तथा संगीत के प्रति इस प्रकार का आकर्षण व्यक्त करने की बातें उसे निद्रा देवी से मिलने दें तब न? उमेश के प्रति जया का यह प्रेम प्रदर्शन असाधारण चीज़ नहीं थी।

जिस मनोकामना की पूर्ति के हेतु उमेश ने घर का त्याग किया था वह पूरी हो गई। अब उसे सबेरे चाय पीकर बाहर जाने की क्या आवश्यकता थी? वह दूसरे दिन बाहर नहीं गया। चाय पी और पुनः कमरे में आकर पुस्तकें उलटने लगा, परन्तु पढ़ने में तबीयत कहाँ लगने को थी? जया से बातें करने की भूख जो बढ़ गई थी। वह एक पुस्तक के बहाने नीचे जया के कमरे में आया। जया पढ़ रही थी। उसने पुस्तक दे दी और पुनः पढ़ने में लग गई। उमेश पुस्तक लेकर चुपचाप ऊपर चला आया। उसे बड़ा बुरा लगा। उसे पूर्ण आशा थी कि जया उससे बैठने के लिए कहेगी और फिर बातों द्वारा वह अपने को व्यक्त करने का प्रयास करेगा, क्योंकि उसे बहुत कुछ कहना भी तो था। कल तो पता नहीं कि समय के कारण मुँह से शब्द ही नहीं निकल रहे थे। पर उसकी आशा पर तुषारपात हो गया। वह उदास मन पुनः कमरे में आकर पुस्तक के पन्नों को उलटने लगा।

"लरिकाई को प्रेम कहो अलि कैसे छूटे'—सचमुच सूरदासजी ने इस पंक्ति की रचना बड़े अनुभव के उपरान्त की होगी। युवावस्था के आगमन के समय जब प्रेम का अंकुर फूटता है तो न वह दबाये दवता है और न भुलाये भूलता है। बैठे बैठे उस समय पुस्तक के पन्नों को उलटने के उपरान्त उमेश पुनः नीचे आया और चौके में भाभीजी से इधर-उधर की बातें करने लगा। जया का कमरा चौके से लगा हुआ था। पौन घंटे तक बात-चीत करने के उपरान्त भी जब जया कमरे से बाहर न निकली तो पुनः

उमेश को हताश प्रेमी की भाँति बातों का क्रम समाप्त करके ऊपर चला आना पड़ा। मन की व्यग्रता बढ़ गई। उसे सोचने में तल्लीन हो जाना पड़ा। परन्तु 'आरत के चित रहें न चेतु और पुनि पुनि देखें आपनु हेतु' वाले कथन के असत्य तो सिद्ध किया नहीं जा सकता। उसने एक बार और प्रयत्न किया। वह तौलिया और पाजामा गले में लपेटता हुआ नीचे उतर आया और भाभीजी से बोला, "भाई साहब गये क्या ?"

"हाँ।" भाभीजी चौके से निकलकर बरामदे में कुर्सी पर बैठी नौकर से कुछ कह रही थीं।

"तो क्या साढ़े नौ बज गये ?"

"बज नहीं गया होगा तो बज रहा होगा। जया ! क्या टाइम है ?"

"नौ पैंतीस।" वह कमरे से बोली।

"आज जयाजी का कालेज बन्द है क्या ?"

"कोई छुट्टी है।"

"अच्छा !" उमेश पैर बढ़ाता हुआ जया के कमरे में चला गया। यही वह चाहता भी था, "आज आपके यहाँ कैसी छुट्टी है जयाजी ? मेरा कालेज तो बन्द नहीं है।"

"स्त्रियों का कोई त्यौहार है।"

"महिला विद्यापीठ में पढ़ाई लिखाई तो होती नहीं। जब देखिए तब छुट्टी।" उमेश जया को एकटक निहारता हुआ कुछ आँखों से व्यक्त करने का प्रयास करने लगा था।

जया ने गर्दन नीची करली, "चलिए, आपका कालेज तो और भी खराब है। वहाँ जितनी छुट्टियाँ होती हैं उतनी किसी भी कालेज में नहीं होतीं। उसने गर्दन उठाकर उमेश को देखा और पुनः झुका लिया। उसके देखने में एक विचित्र मादकता थी।

उमेश को रोमांच हो आया। प्रसन्नता फैल गई, वह बोला, "किन्तु इसका कारण भी तो है। जितने सांस्कृतिक और साहित्यिक आयोजन वहाँ होते हैं उतने और किसी कालेज में देखने को मिलते हैं ? ऐसा शानदार कालेज यू० पी० में क्या सारे हिन्दुस्तान में इक्के-दुक्के देखने को मिलेगा। बिल्डिंग तो देखिये। मालूम पड़ता है…।"

"अच्छा अब नहाने जाइये। पौने दस हो रहा है। शाम को समय अधिक रहेगा फिर जितना जी में आये अपने कालेज का बखान कर लीजिएगा।" वह हँसने लगी, "जाइए।"

उमेश मुस्कराता हुआ बाहर निकला।

३

उमेश की प्रसन्नता का आज क्या कहना? कालेज में वह उछला-उछला फिर रहा था। तबीयत एक जगह टिकती नहीं थी। किसी प्रकार जल्दी से घंटे समाप्त हों—यही प्रतीक्षा थी। वह तो पहले कालेज ही नहीं आना चाहता था, परन्तु यह सोचकर कि सम्भव है इससे किसी प्रकार का सन्देह उत्पन्न हो—वह चला आया था। परन्तु कालेज आना और न आना उसके लिए एक जैसा था। वह क्लास में बैठकर भी पढ़ने और समझने में असमर्थ रहा। बड़ी देर के बाद तो इन्टरवल हुआ। हरनाथ, सन्तबक्स और आकाश के साथ-साथ उमेश बाहर निकला। हरनाथ ने उमेश के कन्धे पर हाथ मारा, "आज सरऊ बड़े मूड में हो। बात क्या है?"

"बहुत बड़ी बात है, लेकिन अभी नहीं, महीने-दो-महीने बाद बतलाऊँगा।" उमेश मुस्कराता हुआ कुछ अकड़कर चलने लगा।"

हरनाथ ठट्ठा मारकर हँस पड़ा, "आकाश! जरा भाई से मिलो। शायद रोमांसिंग शुरू हो गई है।" उसने पुन: उमेश की ओर देखा, "अबे साले, घर वालों ने पढ़ने के लिए भेजा है, इश्क फरमाने के लिए नहीं। मेहनत से पढ़ो। इस चक्कर में पड़कर जीवन···।"

उमेश, सन्तबक्स और आकाश का हाथ पकड़कर खड़ा हो गया, "सरमन (उपदेश) सुनिये सरमन। ब्रह्मचारी जी कुछ कह रहे हैं।···इस चक्कर में पड़कर हम बरबाद हो जाएँगे—यही न?" वह हँसने लगा।

"बौड़मदास ! आप बड़े बुज़ुर्ग हैं जो नसीहत दे रहे हैं। लोमड़ी को अंगूर नहीं मिलते तो खट्टे होंगे ही। आज तक आपको किसी लड़की ने पसन्द किया है ?"

सन्तबक्स और आकाश हंसने लगे।

हरनाथ तनिक खिसिया गया, क्योंकि आकाश और सन्तबक्स भी इस समय उमेश की तरफ हो गए थे। हरनाथ को क्रोध जल्दी आता है, किन्तु उसका हृदय निर्मल और स्वार्थरहित है। वह गर्दन टेढ़ी करता हुआ बोला, "क्यों नहीं, तुम्हारी सूरत तो मुझसे अच्छी ही है ? मक्खियाँ भिनक रही हैं और उस पर यह रोब। अगर···।"

पुनः तीनों हंस पड़े और चिल्लाकर कहने लगे, "बिगड़ा है भाई बिगड़ा है। इससे अब कोई न बोले वरना मुगदर चलने लगेगा।"

हरनाथ को भी हँसी आ गई और फिर चारों मित्र बलखंडी की दूकान पर जाकर चाट खाने लगे।

कालेज में इन चारों का गुट मशहूर है। जहाँ कहीं भी रहेंगे साथ-साथ रहेंगे। हरनाथसिंह, इलाहाबाद के एक बड़े ताल्लुकेदार परिवार का लड़का है। देखने-सुनने में अधिक सुन्दर और हृष्ट-पुष्ट है। मुगदर भाँजना और कुश्ती लड़ना उसका खास शौक है। दुनिया के दूसरे पचड़ों से उसको बिल्कुल सरोकार नहीं। वह लड़कियों की ओर आँख उठाकर देखना भी पाप समझता था। और इस सिद्धान्त का पूरा-पूरा पालन भी करता था। वह बातचीत में अक्खड़ और क्रोधी स्वभाव का है। गर्दन टेढ़ी करके चलने और बात करने की उसकी अधिक आदत है। आकाश—काला परन्तु आकर्षक आकृति वाला युवक है। उसके पिता वहीं हाईकोर्ट में वकालत करते हैं। रहने वाला वह लखनऊ का है। इसलिए उसकी बातचीत में मिठास और एक विशेष प्रकार का अन्दाज़ है। वह हाज़िर जवाब और दूसरों को बुद्धू बनाने में बड़ा निपुण है। सन्तबक्स—इलाहाबाद के समीप एक छोटी-सी रियासत के स्वामी का लड़का है। रंगरूप में औसत दर्जे का और देखने में सीधा है। बातें कम करता है और सबको प्रसन्न रखने के विचार का अनुयायी है। मुट्ठीगंज में कोठी है। फिटन से आता और जाता है।

चार बजे कालेज समाप्त होने पर सब हरनाथ की मोटर में जा बैठे। सन्तबक्स की फिटन लौट गई। "सिविल लाइन्स चलें?" हरनाथ ने आकाश से पूछा।

"मैं नहीं जाऊँगा," उमेश बोल पड़ा, "मुझे आज घर जल्दी पहुँचना है। अगर मुझे कटरा छोड़ते हुए चले जाओ तब तो···।"

"सुन लो आकाश," हरनाथ ने बीच में टोक दिया, "अब विश्वास हुआ तुम्हें। ड्राइवर, सिविल लाइन्स चलो। आज बच्चू को रात तक अपने साथ रखेंगे।"

उमेश ने उतरने की चेष्टा की। हरनाथ ने पकड़कर दबा लिया। फिर तीनों एक तरफ होकर उमेश को बेवकूफ बनाने लगे। ड्राइवर ने सिविल लाइन्स को कार मोड़ दी।

उमेश को विवश हो जाना पड़ा। उसने तनिक गम्भीर होकर भरसक सबको समझाने का प्रयत्न किया, परन्तु हरनाथ का हठी स्वभाव कब मानने वाला था। उमेश को सिविल लाइन्स तक जाना पड़ा। वह चुप हो रहा। यही उचित था और सम्भवत: तभी जल्दी छुटकारा मिलने की आशा भी थी। सिविल लाइन्स में चाय पीते-पिलाते घंटा-डेढ़ घंटा लग गया। चाय के उपरान्त आकाश ने सबको लकी स्वीट मार्ट में रसगुल्ले खिलाए तदुपरान्त आगे का कार्यक्रम बनने लगा। उमेश मौन था। सन्तबक्स ने वार्तालाप के क्रम में बाधा डाली, "चलो पहले उमेश को कटरे छोड़ आएँ तब हम तीनों का कोई प्रोग्राम बनेगा।" उसका सम्बोधन हरनाथ को था।

"रहने दो सन्तबक्स ! आज तबियत भर हरनाथ हमें घिस लें। किसी दिन हमारे चक्कर में भी तो बच्चू फँसेंगे। तब मैं इन्हें बताऊँगा। मुझ घर पर काम है और इन्हें रोमान्स की सूझती है।" उमेश बनावटी गम्भीरता बनाये हुए था।

हरनाथ के संग-संग आकाश और सन्तबक्स हँस पड़े, "चलो यार", आकाश बोला, "इसे छोड़ आएँ। काफी घिस चुका है। सब कार में आकर बैठ गए।

बड़ी मुश्किलों के बाद छुट्टी मिली। उमेश मन-ही-मन हँस रहा था; यद्यपि उसकी तबियत खिन्न अवश्य हो गई थी।

सन्ध्या के छः बजे थे जब उमेश ने घर में पैर रखा था। परन्तु घर के भीतर किसीको न देखकर चक्कर में पड़ गया। "कहाँ गये हैं सब लोग?" उसने नौकर से पूछा।

"सिनेमा देखने।"

"फर्स्ट शो?"

"नहीं! तीन बजे वाले में। सक्सेना बाबू की बीबीजी लिवा गई हैं।"

"जया भी गई होंगी?"

"जी।"

हरनाथ की वजह से जो देर हुई थी और उस देर के फलस्वरूप मन में जो बेचैनी और खिन्नता फैली थी—सब समाप्त हो गई। मन को शान्ति मिली और प्रसन्नता की उत्पत्ति हुई। उसने कमरे में आकर कपड़े बदले और महीनों से बन्द पड़े तानपूरा को निकालकर तारों को मिलाया और कुछ गुनगुनाने लगा। वियोगी होगा पहला कवि अथवा संयोगी होगा पहला कवि। दोनों की पराकाष्ठा पर ही अन्तर के तारों में स्पंदन होता है और तब उस व्यक्ति विशेष की वाणी फूट पड़ती है। गीतों का, हृदय के भावों का साकार रूप उन्मुख हो उठता है। ठीक ऐसी ही दशा इस समय उमेश की थी। उसके मुँह से अनायास निकल पड़ा—

"अपनी दुनिया में बसा लो तो बहुत उत्तम है,
अन्यथा ज़िन्दगी का रूप बदल जायेगा।
मेरी आवाज़ में स्वर थाम लो तो उत्तम है,
अन्यथा राग का सरगम भी बदल जायेगा।।"

उमेश ने मेज़ से कागज़ पेंसिल खींचकर इन पंक्तियों को लिखा और फिर आगे सोचने लगा। भाव जब आते हैं तो आते ही चले जाते हैं। उसने आगे की पंक्ति बनाई—

"मुझको दुनिया में कोई तुम सा नहीं आया नज़र,
खूब पूछा और तलाशा मगर पाई न खबर,
थक गया, अब न नचाओ तो बहुत उत्तम है;
अन्यथा प्यार का अन्दाज़ बदल जायेगा।।"

उमेश ने बार-बार इन पंक्तियों को गाकर पुनः पूरे गीत को आदि से अन्त तक गाया और फिर तारों पर उँगलियाँ चलाता हुआ नई पंक्तियों को सोचने लगा। भावों ने सृजन किया—

"प्रेम करना औ निभाने का काम मुश्किल है,
जलने वाले को जिलाने का काम मुश्किल है,
प्रेरणा तुमने अगर दी तो बहुत उत्तम है;
अन्यथा बनता हुआ मार्ग बिगड़ जायेगा।।
अपनी दुनिया में बसा लो बहुत उत्तम है,
अन्यथा ज़िन्दगी का रूप बिगड़ जायेगा।"

उमेश अपनी इन पंक्तियों पर रीझ उठा। वह बड़ी तन्मयता के साथ, सुन्दर आलापों को चढ़ा उतारकर इन्हें बार-बार गाने लगा और जितनी बार गाता तन्मयता उतनी ही बढ़ती जाती। उसकी आँखें बन्द हो गईं और वह संसार को भूलकर अपने में भाव विभोर हो उठा। उमेश की यह भाव-विभोरता अभी कुछ समय तक और चलती, परन्तु किसी की खाँसने की आवाज़ ने उसकी आँखें खोल दीं। सामने देखा तो जया दरवाज़े से लगी उसे निहार रही थी। "बहुत सुन्दर, बहुत सुन्दर। अब तो आप कवि भी हो गये। ज़रा वह कागज़ तो उठाइए।" वह कमरे के अन्दर आ गई।

उमेश कुछ शर्मा-सा गया, "सुन्दर क्या है? अकेला था। तबियत लग नहीं रही थी। किसी-न-किसी प्रकार समय काटना ही था, लगा गीत बनाकर निराला जी की नकल करने।" वह मुस्कराता हुआ अपनी लज्जा को छिपाने का प्रयास करने लगा।

"अच्छा वह कागज़ तो उठाइए।"

उमेश को देना पड़ा।

जया ने उस गीत को कई बार मन-ही-मन पढ़ा और फिर कागज़ लौटाती हुई बोली, "निराला जी ने भी आरम्भ में इसी प्रकार लिखना स्टार्ट किया होगा। बहुत सुन्दर गीत लिखा है आपने।" जया के कथन में वास्तविकता थी।

"प्रशंसा आप न करेंगी तो और कौन करने वाला है? बैठिये, कौन सी पिक्चर देखी गई?"

"नीचे चलिये तो वतलाऊँ। दीदी चाय लिये बैठी होंगी। मैं आपको बुलाने आई थी।"

दोनों नीचे आ गये।

४

यह तो निश्चित है कि जया का आकर्षण उमेश के प्रति प्रारम्भ से ही था, परन्तु उसे कब और किस प्रकार व्यक्त करना उचित होगा—इसे वह अपने ढंग से सोचा करती थी। अकुलाहट उसके भीतर भी थी, यौवन की तरंगे वहाँ भी लहरा रहीं थीं तथा किसी के प्यार पाने की उत्कट अभिलाषा भी थी परन्तु यह उसके विवेक की बलिहारी थी कि उसमें उतावलापन नहीं आने पा रहा था। यद्यपि उसकी आयु के अनुसार उसकी बुद्धि भी छोटी होनी चाहिए थी, किन्तु ऐसा नहीं था। उसकी समझ की जितनी अधिक सराहना की जाए वह कम है। साथ ही उसके भोलेपन ने उसके व्यक्तित्व के आकर्षण को और भी बढ़ा दिया था। दूसरे को थोड़े समय में अपने वश में कर लेने का स्वाभाविक खिचाव आ गया था।

अब जया के झुकाव का उमेश को कुछ आभास मिलने लगा था, परन्तु अधिक अस्पष्ट होने के कारण उसे बिल्कुल खुलकर आगे आने की हिम्मत नहीं हो रही थी। सम्भव है उसका अनुमान ग़लत निकले तब तो वह कहीं का न हो पाएगा। भैया के सामने कानपुर वह किस मुँह से जाएगा। अतः सतर्कता वह भी बरतने की कोशिश करता, परन्तु उसकी सतर्कता में क्षण-भंगुरता की मात्रा अधिक थी। जया को सामने देखकर वह सब-कुछ भूल सकता था।

यद्यपि सवेरे और सन्ध्या समय किसी-न-किसी बहाने वार्तालाप का अवसर निकालने का जया की ओर से भी प्रयास होने लगा था, किन्तु इतने

में सन्तोष कहाँ था ? चाहत की ज्वाला अब भड़कने जो लगी थी। जया ने एक नई तरकीब निकाली।

एक दिन भाभीजी उमेश से बोलीं, "जया कह रही थी कि अगर आपके पास शाम का समय हो तो वह आपसे म्यूजिक सीख लिया करे। एक कला आ जाएगी। आवाज़ उसकी अच्छी है ही। वैसे शाम का समय सम्भवतः आपके...।"

"क्या बात करती हैं भाभीजी ? शाम को नित्य घूमना आवश्यक तो है नहीं। बेकार समय बरबाद होता है। अगर जयाजी की इच्छा है तो बतला दिया करूँगा। इसी बहाने मेरा भी अभ्यास हो जाएगा। घूमने-घामने के पीछे मेरा भी अभ्यास बन्द हो गया है। कुशालकरजी बड़े नाराज़ हैं।" उमेश की खुशी का पारावार न रहा। नाना प्रकार के विचार मस्तिष्क में दौड़ गये थे।

बात तय हो गई। दूसरे दिन कालेज से लौटने पर जया तनिक सकुचाती हुई उमेश के कमरे में आई। उमेश पहले से ही प्रतीक्षा में बैठा उसकी बाट जोह रहा था। "आइये। बड़ी देर से इन्तज़ार में बैठा हूँ। शायद आज आपको कॉलेज से आने में कुछ देर हो गई है ?"

"नहीं तो। समय वही है, लेकिन आप प्रतीक्षा कर रहे थे न इसलिए ऐसा लग रहा है।" जया अधरों के भीतर मुस्कराती फर्श पर बिछी दरी पर बैठ गई।

उमेश भी सामने हारमोनियम रखता हुआ बगल में बैठ गया। सारे शरीर में सनसनी दौड़ गई, "सम्भव है आपका कहना सही हो," उसने कनखियों से देखा, "कल से इन्तजार नहीं किया करूँगा। बड़ी व्यथा पहुँचती है।"

जया ने अपने नेत्रों को फैलाकर आश्चर्य व्यक्त किया, "आपके साथ उलटी बात है। मैंने तो सुना है कि प्रतीक्षा के क्षण अधिक सुखदायक होते हैं।"

"आपने सुना है न ? सुनने और स्वयं के अनुभव में बड़ा अन्तर होता है। कभी अवसर मिले तो आप भी इसका अनुभव करके देखिए। तब सम्भवतः आप...।"

"अच्छा अवसर आने दीजिये। इस समय तो संगीत का अनुभव करना है।" जया ने प्रसंग बदल दिया, "वैसे मुझे स्वरों का कुछ-कुछ ज्ञान तो है, किन्तु वह किस प्रकार का है, अभी आप देखिए तो मालूम होगा। मैं सरगम बजाऊँ?"

"बजाइये।" उमेश ने हारमोनियम उसकी ओर खिसका दी।

जया मुँह से उच्चारण करती हुई सरगम बजाने लगी। कंठ मीठा था। उसके बजाने से यह भी मालूम पड़ता था कि वह बिल्कुल अनाड़ी नहीं है। कुछ ज्ञान है। "आप जल्दी सीख लेंगी। स्वरों का अन्दाज़ आपको है। अधिकतर समय इसी के अभ्यास में लगता है।" उसने मेज़ से एक कापी और पेंसिल उठा कर जया को पकड़ायी, "आगे के सरगम लिख लीजिए फिर आपको अभ्यास कराता हूँ।" वह सरगम बोलने लगा।

जया लिखती-लिखती बीच में रुक गई, "आपको म्यूज़िक सीखते कितने वर्ष हो गए?" उसने पूछा।

"लगभग आठ-दस वर्ष। मेरे बाबूजी को संगीत से बड़ा प्रेम है। मुझे बचपन से सिखलाया है फिर इसी के पीछे मेरा यहाँ आना भी हो सका है, परन्तु अब ऐसा जान पड़ता है कि जिस विचार से मुझे यहाँ भेजा गया है वह पूरा न हो सकेगा।"

"क्यों?" जया ने आश्चर्य से गर्दन उठाकर उसकी ओर देखा।

"अब प्रतीक्षा जो करने लगा हूँ। इससे छुट्टी मिलेगी तभी तो दूसरा काम हो सकेगा।"

जया ने गर्दन झुका ली। उसका अन्तर गुदगुदा उठा। अब धीरे-धीरे दोनों खुलने का अधिक प्रयास करने लगे थे। जया ने भी उसी प्रकार का उत्तर दिया, "उचित है। काम कोई एक हो सकता है। या तो प्रतीक्षा में समय लगाया जाए या संगीत के अभ्यास में। परन्तु आपने अभी बतलाया था कि पहले वाला काम दुखदायी है। ऐसी दशा में इसी का त्यागना उत्तम होगा।"

"निष्कर्ष तो यही कह रहा है। कल से ऐसा ही करूँगा। देखिए सफलता मिल जाए तब है। सुना है, यह रोग जिसके लग जाता है फिर छुड़ाए छूटता नहीं।"

"सुना है, आपने ? स्वयं का अनुभव कहाँ है ? सुनने और स्वयं के अनुभव में बड़ा अन्तर होता है। समझे ?" वह होंठों में हँसी दबाती हुई हारमोनियम बजाने लगी।

उमेश अभ्यास करने लगा।

५

दूसरे दिन उमेश सिर में दर्द का बहाना बतलाकर जल्दी कालेज से भाग आया और फिर कमरे में पड़ा-पड़ा कौनसी बात किस ढंग से जया से कही जाएगी—सोचने लगा। किसी प्रकार चार के बाद पाँच बजे। वह कमरे से निकलकर छत पर टहलने लगा। किन्तु उसकी दृष्टि गली की ओर ही थी। कुछ क्षणों में जया आती हुई दिखलाई पड़ी। अनायास जया की दृष्टि ऊपर को उठ गई। दोनों के नेत्र मिल गए। जया ने मुस्कराकर गर्दन झुका ली। उमेश कमरे में आकर दरी बिछाने लगा।

कुछ समय उपरान्त जब जया ऊपर आई तो उमेश उसे एकटक देखता रह गया। जया दरी पर बैठ गई। उसके रोम-रोम अकुला उठे थे। उमेश अब भी मौन था। जया को बात आरम्भ करनी पड़ी, "आज बोलने की क़सम खा रखी है क्या ?"

"हाँ, एक नया प्रयोग कर रहा हूँ।"

"केवल देखते रहने का ?" जया ने पूछा।

"फिलहाल यही समझ लीजिये। वैसे विचार है कि आँखों-आँखों में सारी बातें हो जाया करें, जिससे मुँह से बोलने की आवश्यकता न पड़े। मुँह चलने से झगड़ा होने का भय रहता है।"

जया को हँसी आ गई, "सुन्दर प्रयोग है। भगवान आपको सफलता दे। चलिए, सिखलाना शुरू कीजिए। बातें गढ़ने में तो आप उस्ताद हैं।"

उसने अपनी ओर हारमोनियम खींच लिया।

उमेश हँसता हुआ सरगम बतलाने लगा, परन्तु वहाँ सिखलाने में किस की तबियत लगती थी? वह रुक गया, "आपको एक बात तो बताना भूल ही गया।" वह बोला, "कल आपने अनुभव करने को कहा था। आज मैंने कुछ समय तक उसका अभ्यास किया था। पहले तो पुस्तकें पढ़ना आरम्भ किया, लेकिन दो-चार पन्ने पढ़ने के बाद यह ध्यान में आया कि पढ़ना न पढ़ना एक जैसा है इसलिए मैंने कम्बल ओढ़कर सो रहना चाहा। आपने निष्कर्ष निकालकर समझाया था इसलिए मुझे इस रोग से पीछा छुड़ाने की पूरी-पूरी कोशिश करनी थी। मैं आँखें बन्द किये न सोचने का एक भारी प्रतिज्ञारूपी पत्थर रखे हुए निद्रा देवी को बुलाने लगा, पर क्या बताएँ जयाजी, मुझे इसमें भी सफलता न मिल सकी। कान सीढ़ियों पर लगे हुए आहट पाने में तल्लीन थे। विवश होकर मुझे उठना पड़ा और छत पर टहलने लगा। और क्या करता?"

जया को उमेश की बातें बड़ी प्रिय लग रही थीं, परन्तु अपनी वास्तविकता छिपाने के अभिप्राय: से वह गंभीर स्वर में बोली, "अभी इसके लिए एक और उपाय है।"

"बहुत उत्तम, बताइए। उसे भी आज़मा कर देखूँगा। क्या करना होगा?"

"सिखलाते समय वार्तालाप पूर्णतः बन्द। देखिए कल से छुटकारा मिलता है या नहीं।"

"वाह! यह तरकीब आपने खूब बताई। इससे तो एक पंथ दो काज वाली कहावत भी चरितार्थ हो जाएगी। साथ ही मेरे नये वाले प्रयोग को भी काफी सहायता मिलेगी।" उमेश हँस पड़ा।

जया ने भावपूर्ण नेत्रों से देखकर गर्दन झुका ली। "आप बातों में बड़े चतुर हैं।"

उमेश की इच्छाओं ने आगे बढ़ने का संकेत किया। उसका हाथ उठा परन्तु किसी अज्ञात भय ने तत्काल रोक दिया। जल्दबाज़ी ठीक नहीं। कहीं जया बुरा मान गई तो? भली-भाँति समझ लेना बुद्धिमानी होती है; वह जया को अभ्यास कराने लगा।

नीचे कृष्णमुरारीलाल आ गये थे। जब उनको चाय दी गई तो दो कप चाय ऊपर भी नौकर लेकर आया। साथ में लोकनाथ की बर्फियाँ भी थीं। सम्भवतः कृष्णमुरारीलाल के किसी मुवक्कल ने लाकर दी थीं। नौकर रखकर चला गया। दोनों चाय और बर्फियों का स्वाद लेने लगे।

"लोकनाथ की बर्फियाँ बहुत मशहूर होती हैं?" जया ने मौनता भंग की।

"बहुत। दूर-दूर तक जाती हैं।" उमेश ने एक बर्फी उठाकर मुँह में रख ली।

जया ने तिरछी निगाहों से उमेश को देखा, "ज़रूर जाती होंगी। मिठाई जो ठहरी। मिठाइयों में तो आपके जैसे प्राण बसते हों।" उसने तश्तरी आगे को बढ़ाई, "लीजिये एक बर्फी और उठाइये।"

"बस। मैंने बहुत खा लिया है। यह आपके हिस्से की है।"

"लीजिए, लीजिए। यह तकल्लुफ कहीं और दिखलाइएगा जो आपको जानता न हो। उठाइये न। फॉरमेल्टी में घाटा हो जाएगा।"

उमेश ने आधी बर्फी तोड़कर मुँह में रख ली। शेष आधी जया का भाग था। जया तनिक लजाती हुई बर्फी को उठाकर खा गई। उमेश यही चाहता था। उसका अन्तर आनन्द से भर उठा।

"अब बन्द किया जाए?" जया ने पूछा।

"क्यों?"

"क्यों क्या? क्या रात भर संगीत सीखती रहूँगी? साढ़े सात बज रहे हैं।" उसने मेज़ पर रखी हुई घड़ी की ओर संकेत किया और हार-मोनियम की धौंकनी बन्द करने लगी।

अनायास उमेश की हथेली जया के हाथ पर जा टिकी, "आप तो सचमुच बन्द करने लगीं।" कोमल हथेली के स्पर्श से सारे शरीर में एक बिजली-सी दौड़ गई। 'दुनिया की रीति विचित्र है। मास्टर साहब पढ़ाना चाहते हैं और विद्यार्थी पढ़ना ही नहीं चाहता। बड़ी मुश्किल है। संसार का क्या होगा भगवान।'

जया हारमोनियम बजाने लगी।"

"नहीं, हारमोनियम मैं बजाऊँगा। आप यों ही स्वर मिलाने का प्रयत्न कीजिये।"

"क्यों?"

"बीच-बीच में इस प्रकार से भी अभ्यास होता रहना चाहिए। इससे स्वयं को स्वरों का ज्ञान होता चलता है।"

जया ने हारमोनियम खिसका दी।

लगभग पाँच मिनट तक सीखने और सिखलाने का काम चलता रहा। उमेश अब कलाई पकड़कर हाथ पकड़ने के लिए उत्सुक हो उठा था। उसने बजाते-बजाते हारमोनियम बन्द कर दी।

"क्यों?" जया ने गर्दन ऊपर को उठाई।

"आपका स्वर नहीं मिल रहा है।"

"नहीं तो।"

"मैं जो कह रहा हूँ। स्वर नहीं मिल रहा है।"

"अच्छा बजाइये। मैं फिर से बोलती हूँ।"

उमेश हारमोनियम बजाने लगा। जया ने सरगम बोले।

"हाँ। इस बार आपने शुद्ध कहा है।" उमेश तनिक गम्भीर बन गया था। "बात असल यह है कि शिक्षक और शिष्य के लिए आवश्यक होता है कि वे एक-दूसरे को सदैव देखते रहें। चूंकि इस बार आप मेरी ओर देखती हुई गा रही थीं इसलिए शुद्ध आया अन्यथा पहले की भाँति यह भी बेसुरा रहता। चलिए फिर से कहिए।"

जया समझकर भी अनजान जैसी सरगम गाने लगी पर उसने गर्दन झुका ली थी।

"देखिए फिर आप सुर से बेसुर हो रही हैं।"

जया ने सुनी अनसुनी कर दी। वह उसी प्रकार गाती रही।

"जयाजी।"

उसने गर्दन हिला दी और उसी प्रकार गाती रही। वह अन्दर-ही-अन्दर प्रसन्न थी।

उमेश के लिए इतना प्रोत्साहन पर्याप्त था। उसने हारमोनियम बन्द

कर दिया और धीरे से जया की ठोढ़ी पकड़कर उठाता हुआ बोला, "मेरी दुनिया इन्हीं आँखों में बस गई है जयाजी। वंचित न कीजिए वरना कहीं का न रह रहूँगा।"

बिना बोले जया झटके से खड़ी हो गई और तेज़ी से कमरे के बाहर निकल गई।

उमेश हक्का-बक्का देखता रह गया। वह कुछ समझ न सका। समझ भी कैसे पाता? छोटी उम्र, छोटा दिल और छोटे-से दिल में बड़ी-बड़ी कल्पनाएँ—एक नवयौवना के प्रेम को पाने की नई-नई कल्पनाएँ। वह घबड़ा गया। आशंका से मन विह्वल हो उठा। नाना प्रकार के असंगत विचार मस्तिष्क में चक्कर लगाने लगे।

स्त्रियों की इसी पहेली को आज दिन भी पुरुष सुलझाने में असमर्थ हैं।

६

उमेश बैठा था अपने कमरे में किन्तु उसके कान नीचे लगे हुए थे। कहीं जया ने अपने जीजाजी या दीदी से कह तो नहीं दिया। उसने बड़ी गलती की। अभी इतनी शीघ्रता नहीं करनी चाहिए थी। अगर उसने कह दिया तो···। बड़ी आफत आ जाएगी। भैया को कौन-सा मुँह दिखलाएगा। परन्तु जया कहेगी क्यों? क्या वह मुझसे प्रेम नहीं करती है? बिल्कुल करती है। उसके प्रत्येक भाव से इसका संकेत मिलता है। मेरे इतने आगे बढ़ने की सारी ज़िम्मेदारी उसी की है। यदि उसने बढ़ावा न दिया होता तो मैं कदापि इस प्रकार का साहस नहीं कर पाता। यह सब कुछ उसीके कारण हुआ है। परन्तु जब वह शिकायत कर देगी तो मेरी बातों पर कौन ध्यान देगा? सब मुझे ही दोषी ठहराएँगे। मेरी बड़ी बदनामी होगी। मैं···। उमेश का मन काँप रहा था। नाना प्रकार के ऊटपटाँग प्रश्नों से दिमाग

चक्कर खा रहा था। वह चाह कर भी नीचे जाने की हिम्मत नहीं कर पा रहा था।

लगभग नौ बजे नौकर ने आकर खाने के लिए कहा। वह भयभीत-सा नीचे उतरा; वातावरण अनुकूल दिखलाई पड़ा। कृष्णमुरारीलाल अपने कमरे में बैठे सम्भवतः अपने दफ्तर का काम कर रहे थे। भाभीजी चौके में थीं। वह अपने मन के चोर को तनिक छिपाने के लिए मुस्कराता हुआ चौके में आकर बैठ गया और भाभीजी से इधर-उधर की बातें आरम्भ कर दीं। भाभीजी की बातों और भावों में किसी प्रकार का अन्तर नहीं था। उमेश को ढाढ़स मिला। जया ने किसीसे कुछ कहा नहीं है। उमेश ने खूब भाभीजी की हाँ में हाँ मिलाई और अपने अच्छे मज़ाकों से उन्हें खुश करता रहा।

भोजनोपरान्त उसने जया के दरवाज़े पर खड़े होकर कहा, "मुझे अन्दर आने की अनुमति है?"

"आइए।"

"क्या पढ़ रही हैं?" वह जया की मेज़ के पास खड़ा हो गया।

"हिन्दी।" उसकी गर्दन ज्यों-की-त्यों झुकी रही। उसने उमेश की ओर देखा तक नहीं।

उमेश जिस उत्साह से अन्दर आया था सब जाता रहा। वह क्षण-भर तक जया की शक्ल को देखता रहा। जया नाराज़ है, ऐसा उसे प्रतीत हुआ। "अब आप पढ़िए" उसकी आवाज़ भर्रा आई थी, "मैं अपनी अशिष्टता के लिए माफी चाहूँगा।" यह वाक्य उसने धीरे से कहा था और तत्काल मुड़कर कमरे से बाहर हो गया।

रात भर उमेश को नींद नहीं आई। हृदय ऐंठता रहा। सुबह जल्दी-जल्दी भोजन करके कालेज चला गया। कालेज में भी जब मन न लगा तो इस भय से कि कहीं उसकी उदासी का आभास उसके मित्रों को न मिल जाए—वह पेट में दर्द का बहाना बताकर कम्पनी बाग आ गया और एकान्त एक कोने की झाड़ी में पैर फैलाकर पड़ा रहा। नाना प्रकार के विचार मस्तिष्क में उठने-गिरने लगे।

दिन समाप्त हुआ और सूरज डूबने को आया। अँधेरा फैलने लगा।

उमेश अब भी उसी प्रकार लेटा हुआ चिन्ताओं में पड़ा था। सूरज डूब गया। विवश होकर अब उसे उठना पड़ा और कटरे की ओर बढ़ने से इन्कार करने वाले अपने पैरों को खींच-खींचकर आगे चलने के लिए शक्ति का प्रयोग करने लगा। वह धीरे-धीरे कम्पनी बाग से निकला।

घर पहुँचकर वह चुपचाप ऊपर चला गया, परन्तु दरवाज़े के सामने आकर उसे ठिठक जाना पड़ा। फर्श पर हारमोनियम के सामने जया बैठी कोई पुस्तक पढ़ रही थी। वह देखता रह गया।

आहट पाकर जया ने सिर उठाया और तनिक मुस्कराकर पुनः सिर झुकाकर पन्ने उलटने लगी। उमेश ने अन्दर आकर फाइल मेज पर रखी और जूता उतारता हुआ दूरी पर बैठ गया, "लाइये, क्या सीखना है?" वह बोला।

जया ने पुस्तक बन्द की, "आज बड़ी देर हो गई आपको। कोई पिक्चर चले गये थे?"

"नहीं! सन्तबक्स के घर चला गया था।" उमेश का सिर नवा हुआ था।

"क्या शाम को उनके यहाँ नाश्ता नहीं होता?"

"क्यों? नाश्ता करके आ रहा हूँ।"

जया हँसने लगी, "यह तो सूरत बतला रही है।" वह खड़ी हो गई, "अभी दो मिनट में आती हूँ।"

जया की दीदी सब्ज़ी काट रही थी, इसलिए स्वयं उसने चाय बनाई और एक तश्तरी में मिठाई लेकर ऊपर पहुँची। वह सामने रखती हुई बैठ गई।

उमेश के अन्तर की एक-एक कली खिल उठी। कल और आज की जया में कितना अन्तर था, इसे वह सोचकर भी सोचने में असमर्थ था। परन्तु अब उसकी बारी आ गई थी। उसे मनावना कराना था। उसने सिर हिलाकर कहा, "आपने बेकार कष्ट किया। मैं चाय पीकर चला आ रहा हूँ। पी नहीं सकता।"

"जी हाँ, यह तो मुझे दिखलाई पड़ रहा है, लेकिन जब आ गई है तो इसे भी पी लीजिये। नुकसान नहीं करेगी और मिठाइयों के लिए तो कहने

की आवश्यकता है नहीं।" वह मन्द-मन्द हँस रही थी।

"चलिये, बजाइये। समय खराब करने से क्या फायदा। तबीयत नहीं है।"

"तबीयत नहीं है तो मेरी ख़ातिर सही, वरना चाय बनाने की मेहनत बेकार जाएगी न। उठाइये, पीजिये।"

उमेश ने इतनी देर बाद सिर उठाकर जया को देखा। जया ने धीरे से कह दिया, "इतनी छोटी त्रुटि पर ऐसा क्रोध? तब तो आगे का जीवन पार लगना बड़ा कठिन है।" वह हँस पड़ी।

उमेश कुछ बोला नहीं। प्याला उठाकर चाय पीने लगा। बहुत मना करने पर भी उसे मिठाइयाँ भी सब खानी पड़ीं, तदुपरान्त घण्टे भर तक अभ्यास चलता रहा। बातचीत बिल्कुल नहीं हुई।

हारमोनियम बन्द करती हुई जया धीरे से बोली, "आज आप मुझसे नाराज़ हैं न?"

"नहीं।"

"मेरी तरफ देखिये।"

उमेश के नेत्र जया के नेत्रों से मिल गये। जया के नेत्र कुछ कह रहे थे। क्षण-भर बाद उसने सिर नवा लिया। उमेश ने हाथ बढ़ाकर जया की कोमल हथेली को अपनी हथेलियों में दबा लिया। जया अपने में सिमटकर गठरी बन गई। हथेली ज्यों-की-त्यों दबी रही। दोनों चुप थे—कुछ कहने में असमर्थ थे। सीढ़ियों पर किसी की आहट सुनकर, "कोई आरहा है," जया ने धीरे से कहकर हाथ खींच लिया।

नौकर प्याला और तश्तरी लेने आया था।

× × ×

प्रेम का अंकुर विकसित होने लगा, संसार सँवरने लगा, कल्पनाएँ पलने लगीं, खुशी बिखर उठी—कण-कण में व्याप हो गई। सारी प्रकृति में वसन्त आ गया। चाहत बढ़ गई, अलगाव अखरने लगा, बहाना ढूँढा जाने लगा—कभी सिर के दर्द और कभी पेट के दर्द का। दोनों अधिक समीप आने की चेष्टा करने लगे, परन्तु रुकावटें भी तो अधिक थीं। उनसे अपने को बचाकर ही तो आगे बढ़ना था, पर बढ़ना अवश्य था। बिना बढ़े

कल कहाँ था ? वे बढ़ रहे थे, फिर भी समीप आने में बीच की चौड़ी खाई लाँघनी थी।

एक दिन रात को सीखने के उपरान्त जया जब नीचे जाने लगी तो उमेश ने उसे खींचकर बाहुपाशों में आबद्ध कर लिया। जया छटपटा उठी और तत्काल अपने को छुड़ाती हुई नीचे भाग आई। दूसरे दिन वह दिन-भर उदास बनी रही और सन्ध्या को भी जब उमेश के कमरे में संगीत सीखने आई तो उसका चेहरा उतरा हुआ था। वह बिना कुछ बोले तानपूरा के तारों को मिलाकर कल वाले राग का आरोह-अवरोह अलापने लगी।

उमेश ने पाँच-सात मिनट तक प्रतीक्षा की, फिर भी जया के मुँह से जब कोई शब्द नहीं निकला तो तानपूरा के तारों पर हाथ रखता हुआ उमेश बोल उठा, "आज क्या मौनव्रत धारण कर रखा है ?"

जया चुप रही।

उमेश ने ठोढ़ी पकड़कर ऊपर को उठाया। जया के नेत्रकोर सजल थे। "क्या बात है ?" उमेश को दुःख हुआ और उसने हाथ हटा लिया।

कमरे में निस्तब्धता फैल गई। दोनों चुप थे। उमेश को अपने कल के आचरण पर पश्चात्ताप हो रहा था। वह समझ रहा था कि जया इसे उचित नहीं समझती। उसने क्षमा याचना की, "कल का आचरण मेरा अनुचित था जया। भविष्य में…।" वह कहता-कहता रुक गया। कोई आ रहा था।

नौकर ने आकर बताया, "हरनाथ बाबू बुला रहे हैं।"

"चलो, आ रहा हूँ।"

वह चला गया।

"अभी मैं आ रहा हूँ, जाना नहीं।" उमेश ने कहा।

इविन क्रिश्चियन कालेज में कोई सांस्कृतिक आयोजन था। उसमें चलने के लिए हरनाथ उसे लेने आया था, परन्तु उमेश ने बहाना बताकर जाने में असमर्थता प्रकट की। हरनाथ को बात सही प्रतीत हो गई। वह बिना गाली-गलौज किए लौट गया।

उमेश को अपनी त्रुटि स्वीकार कर लेना ही जया के लिए पर्याप्त था। उसकी खिन्नता बहुत-कुछ जाती रही थी। साथ ही उसके हृदय में उमेश

के लिए श्रद्धा का भाव बढ़ आया। वह उसकी दृष्टि में एक सच्चे और आदर्श प्रेमी के रूप में चमकने लगा। उमेश के लौटने पर वह प्रसन्न मुद्रा में बोली, "कहाँ ले जा रहे थे?"

"इविन क्रिश्चियन कालेज। वहाँ कोई फंकशन है।"

"तो चले गये होते। इतनी दूर से लेने आये और...।"

"चले गये होते तो यह हँसता हुआ गुलाब-सा चेहरा कहाँ देखने को मिलता। रात की नींद खराब होती सो अलग।"

"हटिये।" उसने आँखें झुका लीं।

उमेश ने एक लम्बी साँस खींची, "बड़ी कठिनाई है भगवान। गुदगुदाएँगे भी और हंसने भी न देंगे।"

"हँसने तो दें, लेकिन ऐसी हँसी भी किस काम की जिसके हँसने से दूसरों को कष्ट पहुँचे।" जया ने कनखियों से देखा।

"यह तो गुदगुदाने वाले के स्वार्थ की बात हुई। यदि हँसने वाले को इसी प्रकार हँसी में आनन्द आता हो तो उसे उसके सुख से क्यों वंचित किया जाए? क्या यह अनुचित लाभ उठाना नहीं हुआ? गुदगुदाने वाला स्वयं गुदगुदाना क्यों नहीं बन्द कर देता?"

जया मुस्कराई, "वह क्यों बन्द करे? अनुचित लाभ उठाने में तो सभी लगे हुए हैं। चूकता कौन है? किन्तु जो भाग्य का धनी है उसे ही तो सफलता मिलती है।"

"सही है। ज़माना ऐसा ही है। कमजोरों का कोई मददग़ार नहीं। परन्तु विनती की जाए, तब तो उस पर विचार करने की कृपा की जाएगी?"

"यह बात दूसरी है। इस पर विचार किया जा सकता है। समय की प्रतीक्षा कीजिए।" प्रेम की दुनिया में इसी प्रकार की बातें हुआ करती हैं।

उमेश ने जया का हाथ पकड़कर अपनी ओर खींच लिया। समय की प्रतीक्षा करने वाला जीवन भर प्रतीक्षा ही करता रह जाएगा?" उसके होंठ जया के होंठों से सट गये।

"दीदी आ गई तो? कुछ समय का भी तो ध्यान रखा कीजिए।" वह अलग हो गई।

पुनः संगीत का कार्यक्रम आरम्भ हुआ और लगभग पौन घण्टे तक

चलते रहने के उपरान्त समाप्त हुआ। तानपूरा एक ओर हटाती हुई जया बोली, "मैं कल से सीखने नहीं आऊँगी।"

"कोई बात नहीं। मैं नीचे आ जाया करूँगा।"

"जी नहीं। मुझे अब सीखना ही नहीं है।"

"उमेश हँस पड़ा, "समझा। तबीयत भर गई।"

"जी हाँ! भर गई।"

"किन्तु अपनी दीदी से संगीत न सीखने का कारण क्या बतलाएँगी?" तबीयत का हाल तो उनसे कह न पाएँगी?"

"उनसे आपकी तबीयत का हाल कह दूँगी।"

"हाँ। यह सम्भव है। फिर बोरिया-बिस्तर बाँध लूँ?"

"इसे आप समझें। मैं क्या बताऊँ? जब जाना निश्चित है तो बाँधना ही पड़ेगा।" जया उठने को हुई।

उमेश ने हाथ पकड़ लिया।

"छोड़िए।"

"क्यों छोड़ूँ? जब आप अपने तबीयत की कर सकती हैं तो मैं अपनी तबीयत का नहीं कर सकता? जब आपकी दीदी को मालूम होना ही है तो फिर पूर्ण रूप से क्यों न मालूम हो?" उमेश ने भुजाओं में आबद्ध कर लेना चाहा।

"नहीं, उमेश बाबू," जया के शब्दों में गम्भीरता आई, "सीमा होनी चाहिए।"

उमेश उसके मुँह की ओर देखता हुआ रुक गया। उसे हाथ छोड़ देना पड़ा। उसे कुछ क्रोध आ गया, "सीमा का ध्यान मुझे भी रहता है।" वह उठकर कुर्सी पर बैठ गया।

"रहता है, किन्तु आपकी भावुकता उसे स्थिर जो नहीं रहने देती।" जया समझ गई कि उमेश ने बुरा मान लिया है। यद्यपि उसने बात सही कही थी।

"हो सकता है।" उमेश बाहर की ओर देखने लगा। प्रेमियों की भावनाएँ बड़ी विचित्र होती हैं। क्षण में रुष्ट और क्षण में तुष्ट—यही चलता रहता है।

जया उठकर नीचे चली आई।

७

यह कहानी मैं उस समय की कह रहा हूँ जब देश को स्वतन्त्रता नहीं मिली थी। अंग्रेज़ों के कठोर शासन से भारत का कण-कण कराह उठा था और बापू के नेतृत्व में इससे छुटकारा पाने के लिए जी-जान की बाज़ी लगा देने के लिए तत्पर हो उठा था। सन् '४२ की चिंगारी सुलगने लगी थी और कब भड़ककर लौ का रूप धारण कर लेगी इसी की प्रतीक्षा थी। देश के बच्चे, बूढ़े और जवान सब ने कमर कस ली थी। स्त्रियों का सहयोग भी सराहनीय था। वे भी हर तरह से हाथ बटा कर अपनी खोई हुई आज़ादी को प्राप्त करने के हेतु तन, मन से जुट पड़ी थीं। उन्होंने प्राचीन भारत के आदर्श को गौरवान्वित करने में कोई कसर नहीं उठा रखी थी। देश के कोने-कोने से 'इन्कलाब, ज़िन्दाबाद' का नारा उठकर वायुमंडल को कम्पायमान करता हुआ दूर लंदन में बैठे साम्राज्यवादियों के नेताओं को चुनौती देने लगा था। जनता की शक्तियों का परिचय कराने लगा था। लंदन में कँपकँपी फैलने लगी थी, परन्तु उनकी मशीनगनें, बड़ी-बड़ी तोपें और पलक गिरते हज़ारों की संख्या में मनुष्यों का संहार करने वाले भयंकर बमों ने उन्हें ढाढ़स देकर उनकी बुद्धि पर पर्दा डाल दिया था। वे मदान्ध हो रहे थे।

इलाहाबाद के कार्यकर्ता जो कुछ कर रहे थे सो तो कर ही रहे थे, परन्तु विद्यार्थियों का उत्साह और उनकी सक्रियता भी प्रशंसनीय थी। इलाहाबाद में भी विद्यार्थी कांग्रेस (स्टूडेन्ट कांग्रेस) का बड़ा बोलबाला था और उसके नेतृत्व में सम्पूर्ण विद्यार्थी समुदाय कट मरने के लिए उद्यत हो उठा था। नित्य नये जुलूस निकलते और सभाएँ होतीं, जिसका एकमात्र उद्देश्य

था अंग्रेज़ों को अपनी शक्ति से अवगत कराना। यद्यपि कभी-कभी इन जुलूसों और सभाओं के अन्त में आपसी मारपीट भी हो जाया करती थी, पर इस प्रकार के झगड़ों का आपसी प्रश्न हुआ करता था। बाहर सब एक थे। बात असल यह थी कि विद्यार्थी कांग्रेस में दो गुट थे—पूर्वी और पश्चिमी। प्रारम्भ में पश्चिमी गुट अधिक प्रभावशाली होने के कारण पूर्वी गुट को हेय की दृष्टि से देखता था और प्रत्येक पूर्वी को 'टिक' अर्थात् 'बलियाटिक' से सम्बोधित करता था। बिचारे सीधे-सादे पूर्वीया—संख्या में कम होने के कारण सब बर्दाश्त किया करते थे। धीरे-धीरे इनकी भी संख्या बढ़ने लगी। एकता इनमें अधिक होती ही है। फिर क्या था, इन लोगों ने एन-केन-प्रकारेण सिद्धान्त को अपनाया और अपनी शक्ति का परिचय देने लगे। शरीर से बलिष्ठ होने के कारण इन्हें मारपीट करने में भी देर नहीं लगती थी। परिणाम यह निकला कि पूर्वीयों के आगे पश्चिमी गुट को झुकना पड़ा और उनकी हाँ-में-हाँ मिलाने के लिए विवश हो जाना पड़ा। विद्यार्थी कांग्रेस में पूर्वीयों का बहुमत हो गया और इनके नेता पंजानन मिश्रा बने।

जहाँ उमेश के विषय में इतनी बातों की जानकारी हो चुकी है वहाँ एक बात यह भी जान लेने की है कि उस युवक के भीतर आकांक्षाएँ बहुत थीं और सम्भवतः जन्मजात थीं। जब भी किसी नेता या अन्य बड़े व्यक्ति को देखता जिसे सुनने और देखने के लिए हज़ारों की संख्या एकत्र होती तब उसके मन के किसी कोने से अनायास आवाज़ आने लगती—क्या ऐसा वह नहीं बन सकता? क्या उसके अन्दर ऐसी प्रतिभा नहीं आ सकती कि उसे भी सुनने के लिए हज़ारों स्त्री-पुरुष इकट्ठा हो सकें? और यह विचार उसके मस्तिष्क में बड़ी देर तक चक्कर काटता हुआ नाना प्रकार की सुन्दर कल्पनाओं में जन्म देकर उसे कहाँ से कहाँ पहुँचा देता। उसकी अन्तरात्मा से आवाज़ आने लगती—यह भी बड़ा व्यक्ति बन सकता है। उसे प्रयत्न करते रहना चाहिए। सभी इसी प्रकार बने हैं। जन्म से कोई बड़ा बनकर नहीं आता है।

परिवर्तनमय जगत में परिवर्तन होते रहना प्राकृतिक है। परन्तु यह परिवर्तन कब और किस प्रकार से होता रहता है—इसका अनुमान अभी

तक नहीं लगाया जा सका है। यद्यपि इसके लिए चिरंतन से प्रयास चला आ रहा है। आज जिसका जो रूप है, कल वैसा ही रह सकेगा—कहना कठिन है। वनते बिगड़ते में पलक गिरते की देर है। सभी सम्भव है और सभी असम्भव।

यद्यपि पंचानन मिश्रा का कायस्थ पाठशाला में आना-जाना लगा ही रहता था, परन्तु इधर विद्यार्थी कांग्रेस के आगामी चुनाव के कारण उसके आने-जाने में वृद्धि हो गई थी। पश्चिमी दल वाले इस बार अधिक सक्रिय बनकर सम्भवतः पूर्वी दल को मात देना चाहते थे। कालेज में गाने के कारण उमेश मशहूर तो था ही साथ ही अपने चौगड्डे के कारण और भी मशहूर हो गया था। पचानन को उमेश और उसके गुट के विषय में बहुत पहले से जानकारी थी। अतः एक दिन उसने उमेश और उसके साथियों से बातचीत की और काफी समय तक की। पंचानन को उमेश ने बड़ा प्रभावित किया। उसने अनुभव किया कि यदि यह लड़का उसके गुट में आ जाए तो कायस्थ पाठशाला के विद्यार्थियों की एक बड़ी संख्या का समर्थन तो प्राप्त होगा ही साथ ही उमेश की निर्भीकता और अक्खड़पन से वह अपने दल के लिए अधिक लाभ उठा सकेगा। फलतः वह दूसरे दिन आने को कहकर चला गया। दूसरे दिन पंचानन ने उमेश से अकेले में बातचीत की। काफी समय तक वह अपने गूढ़ अध्ययन के द्वारा अपने व्यक्तित्व का आतंक उमेश पर डालता रहा। उमेश बड़ा प्रभावित हुआ। साथ ही देश के प्रति अटूट प्रेम तथा सर्वस्व न्यौछावर करने की भावना ने उसके हृदय में पंचानन के लिए श्रद्धा का स्थान बना लिया। उमेश ने उसकी प्रत्येक बात का समर्थन किया। उसके भी मन में आज़ादी की एक नई लहर दौड़ गई। और उसने पंचानन के साथ काम करने का वायदा कर लिया। अन्त में उठते समय जब पंचानन को यह विदित हुआ कि उमेश भी पूरब का रहने वाला है तो मारे प्रसन्नता के उसने उमेश को गले लगा लिया और अगले इतवार को दो बजे दिन में अपने यहाँ निश्चित रूप से आने को कहकर चला गया।

पंचानन अलोपी बाग़ में रहा करता था और विश्वविद्यालय का छात्र था।

उमेश का पंचानन से रब्त-ज़ब्त बढ़ने लगा। चुनाव की भी धीरे-धीरे सरगर्मी बढ़ी। अतः उमेश में भी सक्रियता आना स्वाभाविक थी। वह बहुधा कालेज से गोल होने लगा और दिन-दिन भर पंचानन के संग दौड़ कर अपनी सच्चाई का परिचय देने लगा।

चुनाव हुआ। पंचानन का दल पुनः विजयी हुआ। पश्चिमी गुट पराजित हुआ। जब पदों का बटवारा हुआ तो एक पद उमेश को भी दिया गया। पंचानन उसे और सक्रिय बनाना चाहता था। दो-तीन दिनों तक विश्वविद्यालय में पूर्वीया गुट सीना ताने अपने विरोधी विद्यार्थियों को जेर करता रहा तदुपरान्त फिर सब एक होकर देश की आज़ादी के मसले पर सोचने-विचारने लगे, जुलूस उठने लगे, सभाएँ होने लगीं।

उमेश की रुचि बढ़ गई। प्रत्येक सभा-जुलूस में उसका आना-जाना अनिवार्य हो गया। निर्भीक और स्पष्टवादी होने के कारण न जानने वाले भी उसे जानने लगे। उसके मिलने-जुलने वालों का क्षेत्र बढ़ा। और जब परिचितों की संख्या बढ़ती है तो व्यस्तता का बढ़ना स्वाभाविक हो जाता है। पढ़ाई की चिन्ता कम हो गई। भारत माता की ज़ंजीरों को तोड़ने तथा उसके लिए कुछ कर मिटने की उमंगें अन्तर में लहराने लगीं। उत्साह में वृद्धि हुई। स्वतन्त्रता को प्राप्त करने का कर्तव्य प्रथम हुआ। जोश बढ़ता गया। उमेश का प्रभाव उसके मित्रों पर भी पड़ा। हरनाथ और सन्तबक्स पर विशेष रूप से जबकि दोनों का परिवार अंग्रेज़ों के घोर पिट्ठुओं में था। हरनाथ और सन्तबक्स भी सभाओं और जुलूसों में 'इन्क़लाब ज़िन्दावाद' के नारे लगाते हुए घूमने लगे। विवश होकर आकाश भी साथ-साथ चलने लगा। यद्यपि उसे इन कामों के प्रति रुचि नहीं के समान ही थी। आकाश ज़िन्दगी को मौज से काटने का पक्षपाती था।

८

जया के कथन में जो वास्तविकता थी उससे उमेश सहमत नहीं था। परन्तु यह सोचकर कि रूठने से आकर्षण बढ़ता है—उसने रूठने का ढोंग रचाया। वह दूसरे शाम को न आकर रात को आठ बजे आया और खाना खाकर पढ़ने बैठ गया। जया से कोई बातचीत नहीं हुई। तीसरे और चौथे दिन भी उमेश ने ऐसा ही किया और इस प्रकार एक-एक करके एक सप्ताह समाप्त हो गया। इतना ही नहीं उसने बातचीत करना भी बन्द कर दिया था। इसका आभास दूसरों को न मिल सके, इस विचार से सवेरे चाय पीते या खाना खाते समय, आमना-सामना होने पर वह इधर-उधर की दो-चार बातें अवश्य कर लेता था, परन्तु वास्तविकता क्या है उसे जया भली-भाँति समझ रही थी।

ऐंठी रस्सी में गाँठ पड़ गई। अकारण उमेश के इस व्यवहार से जया को चोट पहुँची थी फिर भी उसने कई दिनों तक अभ्यास के बहाने संध्या को उसके कमरे में बैठकर उसकी प्रतीक्षा की थी, किन्तु जब किसी प्रकार का परिवर्तन होता हुआ न दिखलाई पड़ा तो उसने भी मान कर लिया। करना स्वाभाविक था। उसे भी तो अपने ऊपर नाज़ था। उसने अभ्यास करना बन्द कर दिया और बातचीत भी। अब दोनों एक-दूसरे से तने हुए अपनी-अपनी ऐंठ को जीत में स्वीकार करने की प्रतीक्षा करने लगे। जब कि दोनों को अलगाव अत्यधिक अखर रहा था। वे चाहते थे कि संधि हो जाए परन्तु प्रथम प्रस्ताव कौन रखे यही टेढ़ी समस्या थी। तनाव बढ़ता गया। फिर भी किसी-न-किसी बहाने वे एक-दूसरे को देख अवश्य लेते थे।

इसी बीच उमेश की भेंट पंचानन से हो गई थी और उसके प्रभाव से अन्तर में देश-प्रेम की ज्वाला भड़क उठी थी। अब वह अधिक बाहर रहने लगा था। उसने सोचा था कि जया को पराजित करने के लिए उसका पूर्णरूप से त्याग का आडम्बर ही उपयुक्त है। उसको एक तीर से दो शिकार मिल रहे थे—बड़े बनने की महत्वाकांक्षा की पूर्ति तथा जया की प्राप्ति। उसने अपनी व्यस्तता अधिक बढ़ा दी। सवेरे घर से निकला तो

रात के नौ-दस से पहले नहीं आता। जया के लिए अब उसके दर्शन भी दुर्लभ हो गये, फलस्वरूप उसके मन में अन्तर्द्वंद्व चलने लगा। टीस उभरने लगी। उसने अनुभव किया कि उमेश के जीवन में आवारागर्दी लाने की ज़िम्मेदारी उसी की है। उसी के कारण वह पढ़ने-लिखने से विरक्त होकर न जाने सवेरे से रात तक कहाँ भटका करता है। उसे अपने ऊपर क्रोध आया और वह अपने को धिक्कारने लगी।

जया ने प्रत्येक रूप से अपने को दोषी ठहराकर निर्णय किया कि वह स्वयं का मान त्यागकर उमेश से क्षमा याचना करेगी। उसने एक रात उमेश की प्रतीक्षा की। उमेश लगभग दस बजे आया। जया अपने कमरे से निकलकर बाहर आई, परन्तु बहुत प्रयत्न करने पर भी उसके पैर आगे बढ़ने से इन्कार करने लगे। लज्जा मिश्रित भय और मन के किसी कोने में दुबकी हुई मान की भावनारूपी बेड़ी ने पैरों को जकड़ लिया। वह आगे न बढ़ सकी। उसे अपने कमरे में लौटना पड़ा, परन्तु इस हार को हार न स्वीकार करने के अभिप्राय से उसने पुनः सवेरे मिलने का दृढ़ संकल्प किया और अपने को भला-बुरा कहती हुई सोने का प्रयास करने लगी।

जया को सवेरे भी सफलता न मिल सकी और उसके सामने ही उमेश चला गया। वह मन मसोसकर रह गई। खिन्न चित्त कालेज गई, परन्तु कालेज से लौटती समय उसके मुखमंडल पर प्रसन्नता का आभास मिल रहा था। सम्भवतः उसने अपने ऊपर विजय पाने के लिए कोई दूसरा मार्ग ढूँढ़ निकाला था। उसने कमरे में जाकर पुस्तकें रखीं और झटपट मुँह-हाथ धोकर चौके में आ बैठी। बहन ने प्याले में चाय उँड़ेली और गर्म-गर्म पकौड़ियों की तश्तरी उसकी ओर खिसका दी। "और तुम दीदी?"

"पकौड़ी खाने की तबीयत नहीं है। केवल चाय पीऊँगी।"

दो-एक घूँट चाय पीने के उपरान्त जया बोली, "आजकल उमेशबाबू सवेरे से शाम तक कहाँ रहते हैं दीदी? क्या परीक्षा देने का विचार नहीं है? आपको उनसे पूछना चाहिए न वरना उनके घर वाले आप लोगों के ही मत्थे दोष मढ़ देंगे।"

"तुम्हारे जीजाजी ने एक दिन उनसे कहा था, परन्तु आज़ादी का भूत उनकी बुद्धि में कुछ घुसने दे तब न? वह आजकल नेता हो रहे हैं। तुम्हारे

जीजाजी को उनकी सारी दिनचर्या मालूम होती रहती है।"

जया ने आश्चर्य प्रगट किया, "तो क्या अब पढ़ना-लिखना समाप्त करके देश सेवा करेंगे ?" वह उमेश के विषय में अपने जीजाजी से अधिक जानती थी।

"क्या बताया जाए ? वैसे कल-परसों में मैंने भी चेतावनी के रूप में कुछ कहने का विचार किया है। यदि रास्ते पर आगए तो उत्तम है नहीं तो तुम्हारे जीजाजी से उनके भाईसाहव के पास पत्र लिखवा दूँगी।"

जया जो कहना चाहती थी उसे स्वयं उसकी दीदी ने कह दिया। उसे प्रसन्नता हुई, परन्तु इस प्रकार के कहने से उसका मतलव तो हल नहीं होता था। अतः उसने वड़ी चतुराई से अपनी दीदी को समझाया, "नहीं। तुम्हारा इस ढंग से कुछ कहना ठीक न होगा। वह तुम्हारी वड़ी इज़्ज़त करते हैं। अकारण तुम अपनी प्रतिष्ठा क्यों गँवाओगी। अपनी बुराई सबको बुरी लगती है।"

"तो रहने दो। नहीं कहूँगी।"

"नहीं कहो लेकिन मेरी तरफ से, कहना भी हो जाएगा और सम्भव है मेरा संगीत वाला कार्यक्रम भी आरम्भ हो जाए। अब तक तो बहुत सीख लिया होता।" उसने तनिक मुँह लटका लिया, "किन्तु भाग्य में जितना वदा है उससे अधिक कहाँ मिलने को ? कल सवेरे चाहो तो उनसे कहो। सम्भव है रास्ते पर आ जाएँ।"

जया की दीदी ने सिर हिला दिया। जया का काम बन गया।

दूसरे दिन तड़के ही नौकर ने उमेश को सूचना दी कि उसे मालकिन से मिलकर तो कहीं जाना है। दैनिक क्रियाओं से निवृत्त होने के उपरान्त कपड़े बदलकर उमेश नीचे भाभीजी के पास आया। बरामदे में भाभीजी और जया बैठी चाय पी रही थीं। कृष्णमुरारीलाल चाय पीकर सब्जी लेने चले गए थे। उमेश भाभीजी की बगल वाली कुर्सी पर आकर बैठ गया, "आपने याद किया है न ?" वह हँसी के स्वर में बोला।

"क्या करते ? अब आपने तो याद करना बन्द ही कर दिया है। पता नहीं आजकल किसकी दुनिया बस रही है ? पुरुषों का कोई भरोसा नहीं।"

वह उमेश की ओर देखकर हँसने लगीं, "लीजिए।" उन्होंने चाय की प्याली बढ़ा दी।

उमेश चाय पीने लगा। अभी तक उसने जया को कनखियों से भी नहीं देखा था। वह अकड़ा हुआ था।

भाभीजी ने पुनः बात चलाई, "जया ने कितनी बार आपसे कहने के लिए कहा, लेकिन आपको किसीसे मिलने की फुर्सत ही कहाँ है? बड़े सौभाग्य से आप मिले थे। यदि जया को संगीत आ जाता तो उसके ब्याह-शादी···।"

"क्या बताएँ भाभीजी, इधर कुछ," वह बीच में बोल उठा, "ऐसे चक्करों में फँस ही गया वरना अब तक तो जयाजी ने काफी सीख लिया होता। मुझे स्वयं बडा दुःख है।" उसने बात बनाई।

"खैर, अब तो चक्करों से छुटकारा लीजिए। जीवन भर नाम स्मरण करती रहेगी। विद्यादान महादान समझा गया है। इसका बदला चुकाये नहीं चुकता। साथ ही आपकी भी पढ़ाई सुचारु रूप से चलने लगेगी। इधर आपका समय बहुत बरबाद हुआ है।"

"इसमें क्या सन्देह? उस दिन भाई साहब भी यही समझा रहे थे।" उसका मतलब कृष्णमुरारीलाल से था।

"तो मेरी बातों पर ध्यान दिया जाएगा न?"

"आपकी बातों पर ध्यान नहीं उसे शिरोधार्य किया जाएगा पर आज की छूट मिल जाती तो मैं भाभीजी का बड़ा आभारी होता।"

भाभीजी के साथ जया भी हँस पड़ी, "अच्छी बात है, आज की छूट दी गई, लेकिन कल के बाद बड़ी सख्ती बरती जाएगी। इसे भली-भाँति समझ लें।" भाभीजी मुस्करा रही थीं।

"बेहतर है। अब जाऊँ?" इतनी देर बाद उसने जया को देखा था। वह उसीको देख रही थी। वह चला गया।

१

बड़ी कठिनाइयों के उपरान्त दिन के बाद रात कटी। दूसरा दिन आया। जया कालेज गई, परन्तु वहाँ एक क्षण को भी मन न लगा। क्लास में प्रोफेसर पढ़ाते रहे और वह पुस्तक खोले किन्हीं सुखद कल्पनाओं में विचरती रही। उसकी सहेली मधु ने छेड़ा भी, गुदगुदाकर आज की अन्य-मनस्कता का रहस्य भी जानना चाहा, परन्तु उसने हँसकर टाल दिया। छुट्टी हुई और वह गाड़ी पर आकर बैठ गई। बैलों पर जुती गाड़ी रेंगती हुई बढ़ चली। बैल नित्य की भाँति अपनी मन्थर गति से चल रहे थे, परन्तु जया को आज उनकी चाल पर क्रोध आ रहा था। वह अन्दर-ही-अन्दर झुँझला रही थी। लेकिन उसकी इस झुँझलाहट को बैल बेचारे क्या समझें? वे तो अपनी गति से चले जा रहे थे। जाड़ा, गर्मी और बरसात, बारहों मास उन्हें इसी प्रकार जीवनपर्यन्त जुतकर इतने भारी बोझ को कन्धों पर सुबह-शाम ढोना था। समझने पर तो उनकी मौत थी। इलाहाबाद में अधिकतर लड़कियों के कालेजों में बैलगाड़ियाँ ही लड़कियों के ले आने और ले जाने के काम में आती हैं।

किसी प्रकार कटरा का चौराहा आया। गाड़ी रुकने के पहले ही जया कूद पड़ी। उसे बड़ी शीघ्रता थी। सम्भव है उमेश उसकी प्रतीक्षा कर रहा हो। वह घर पहुँची। आँगन में नौकर मिल गया, "उमेशबाबू आए हैं ?" उसने पूछा।

"नहीं।"

जया ने किताबें रखीं। मुँह-हाथ धोये और झटपट नाश्ता करके ऊपर जा पहुँची। कमरे में दरी बिछाकर तानपूरा निकाला और उसे पोंछती हुई तारों को मिलाने लगी, परन्तु उसका ध्यान सीढ़ियों की तरफ ही था। आशा से अधिक समय बीत गया। उमेश नहीं आया। उसे निराशा होने लगी। कुछ क्रोध और कुछ व्यथा दोनों मन में ऐंठन उत्पन्न करने लगे। उसने दस-पन्द्रह मिनट और प्रतीक्षा करके नीचे चलने का निश्चय किया।

पाँच-सात मिनट बीते। सीढ़ी पर किसी के आने की आहट मिली।

सारे शरीर में प्रसन्नता दौड़ गई। रोमांच हो आया। धोती के पल्ले को सँभालती हुई ठीक से बैठ गई, किन्तु आगन्तुक जब ऊपर आया तो वह उमेश नहीं, उसका नौकर था जो शाल देने आ रहा था। नौकर शाल देकर चला गया। जया पर मानो वज्रपात हो गया। उसे विश्वास हो गया कि अब उमेश नहीं आएगा। फिर भी उसने पाँच-सात मिनट तक प्रतीक्षा की। उमेश नहीं आया। वह उठी। तानपूरे को खोल में रखकर खूँटी से लटकाया और दुःखी मन कमरे से बाहर निकली कि सामने उमेश खड़ा था। उसने सिर झुका लिया। प्रसन्नता और व्यथा के संयोग से जो भाव उठे उसने और कुछ तो नहीं, किन्तु नेत्रों में आँसुओं का संचार अवश्य कर दिया। उसकी आँखें डबडबा आईं।

"मुझे खेद है कि आपको मेरे पीछे इतनी देर तक बैठना पड़ा। भविष्य में पुनः ऐसा अवसर नहीं दूँगा। आइये।" उसने खूँटी से तानपूरा उतारा और जूते निकालकर दरी पर बैठ गया।

जया ने तनिक खाँसकर थूकने का बहाना किया और ओट में होते ही झटपट आँखें पोंछकर चुपचाप आकर बैठ गई।

उमेश ने उसे तानपूरा थमाया, "लीजिए मिलाइये।"

जया तारों को मिलाने लगी, परन्तु काफी वक्त लग जाने पर भी तार स्वर में न मिल सके। मिलते कैसे ? ध्यान तो कहीं और था।

"लाइये, मैं मिला दूँ।" उमेश तानपूरा लेकर मिलाने लगा।

इतनी देर बाद जया धीरे-से बोली, "आप मुझसे नाराज़ हैं न ?"

"मैं। मैं क्यों नाराज़ होने लगा। हाँ, आप ज़रूर नाराज़ हैं।" उमेश के कहने में रूखापन था। सम्भवतः यही अवसर था अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करके जया को पूर्णरूप से अपने अधिकार में कर लेने का। "लीजिए, बजाइए।" उसने उसके हाथों में तानपूरा दे दिया।

जया ने स्वर भरा, किन्तु गला रुँधा हुआ था। आवाज़ साफ नहीं निकल रही थी। स्वर कहीं और जा रहा था और तार कुछ और कह रहे थे। फिर भी वह रुकी नहीं—आलाप लेती रही। परन्तु उमड़ते हुए हृदय को इस प्रकार कब तक रोका जा सकता था। बाँध टूट गया और नेत्रों से आँसू बह चले। उमेश के रूखे शब्दों ने उसके मर्म पर चोट किया था।

उमेश की श्रेष्ठता वाली भावना समाप्त हो गई। उसने अपने को धिक्कारा। वह जया के हाथ से तानपूरा लेता हुआ कुछ कहने ही वाला था कि जया आँचल से मुँह ढँककर फफक उठी। उमेश ने तानपूरा एक तरफ रखा और धीरे से जया को अपनी गोद में खींचकर उसकी आँखों को आँचल से पोंछने लगा। उसकी भी आँखें डबडबा आई थीं। "मुझे माफ कर दो जया! मेरी गलती है। मुझे पता नहीं किस भावावेश में आकर यह सब कर डाला है। मैंने स्वयं इतने दिन जिस प्रकार व्यतीत किए हैं, उसे मैं ही जानता हूँ। ईश्वर साक्षी है कि कितनी रातें केवल करवटें बदल-बदलकर समाप्त की हैं।"

जया खोई-सी बेसुध उसकी भुजाओं में पड़ी रही।

क्षण भर मौन रहने के उपरान्त उमेश पुनः बोला, "मैं संसार को छोड़ सकता हूँ जया, लेकिन तुम्हें नहीं छोड़ सकता। तुम्हारे बिना मेरा जीवन नहीं के बराबर हो जाएगा। तुम्हारा प्रेम मेरे जीवन की निधि है। इस पर मेरा सर्वस्व न्यौछावर हो जाए तो कोई चिन्ता नहीं।" उमेश उस समय सभी कुछ कह डालना चाहता था। न हृदय मान रहा था, न जबान थम रही थी। प्रेम के सागर में प्रथम पैर रखने वालों की ऐसी ही दशा होती है।

जया ने अपने को अलग किया और तानपूरा सम्भालती हुई तारों पर अँगुलियाँ चलाने लगी। वह चुप थी, परन्तु आँधी निकल जाने के बाद वाली स्थिति आ गई थी। उसने धीरे से पूछा, "कौन-सा राग आरम्भ करूँ?"

"बिलावल। अभी वह पूरा नहीं हो पाया है।"

जया ने आरोह-अवरोह लिया। यद्यपि उसके कंठ से ध्वनि साफ नहीं निकल रही थी, पर दीदी और जीजाजी को किसी प्रकार का सन्देह न हो यह भी तो ध्यान में रखना आवश्यक था और शायद इसी विचार से वह गा भी रही थी अन्यथा कमरे का वातावरण तो मीठी-मीठी बातों के सुनने और सुनाने का इच्छुक था।

लगभग आध घंटे बाद उमेश ने ऊब कर जया की उँगुलियों पर अपनी हथेली रख दी, "बस कीजिए। अब कल सीखिएगा।"

जया ने बन्द कर दिया।

"कल मैं प्रतीक्षा करूँगा या आप ?" उमेश मुस्काराया।

"जिसको अधिक ग़रज़ होगी वह।" वह खड़ी हो गई।

"अरे ! तो खड़ी क्यों हो गईं ?"

"बहुत देर हो गई है। घड़ी देखिए।"

उमेश ने उधर गर्दन घुमाई और जया कमरे के बाहर हो गई, "नमस्ते।"

उमेश ने गर्दन मोड़ी, "एक आवश्यक बात है।" उसने चकमा देना चाहा।

"अब कल।" वह चली गई।

उमेश हँसने लगा।

१०

अभी तक तो प्राथमिकता दी जाती थी 'विद्यार्थी कांग्रेस' के कार्यों को, क्योंकि नये जोश के साथ-साथ जया से कुट्टी भी थी। समय से घर आने में कोई लाभ न था परन्तु अब तो यारी हो गई थी। अब पहले जया थी, उसके बाद विद्यार्थी कांग्रेस या देश-भक्ति का काम। वह दूसरे दिन कालेज की छुट्टी होने पर अपने मित्रों की आँखों में धूल झोंकता हुआ चुपके से घर को भाग चला। घर में घुसते ही सामने भाभीजी मिल गईं। हँसकर बोलीं, "ज़बान के आप पक्के निकले। जो कहते हैं उसे कर दिखाते हैं।"

"देखते जाइए। अब तो आपने कहना शुरू किया है। इसी की तो आस लगाए बैठा था।" वह हँसने लगा।

"जाइए कपड़े बदलिए।" भाभीजी मुस्कराती हुई पुनः काम में लग गईं।

उमेश ने कपड़े बदले। दरी बिछाई। तानपूरा उतार कर रखा और

पुनः नीचे आकर मुँह-हाथ धोये। नौकर चाय ले आया। वह चुस्की लेता हुआ ऊपर आ गया। आज मन बड़ा प्रसन्न था। वह दरी पर बैठकर धीरे-धीरे चाय पीता हुआ सामने आकाश में चक्कर काटते हुए चील्हों के समूह को देखने लगा। कल्पनाएँ जागीं। स्वप्नों का सृजन होने लगा और अनायास गुनगुनाहट के शब्दों की लड़ियाँ बनकर हृदय के भावों को पंक्तियों में पिरोने लगीं। उसकी पहिली पंक्ति थी—

तुम मेरे प्रेम को उपहार समझकर लेना,

और तत्काल उसके आगे दूसरी पंक्ति जुड़ गई—

यह है थाती मेरे जीवन के सुखद स्वप्नों की।

उमेश को ये पंक्तियाँ प्रिय लगीं। वह कई बार इन्हें चढ़ाव-उतार के साथ गाता रहा तदुपरान्त वह आगे की पंक्तियों को सोचने लगा। कविता, अन्तःकरण की प्रेरणाओं का पद्य रूप में अभिव्यंजना है जो संगीत से ओत-प्रोत है। संगीत आनन्द की पराकाष्ठा है। आनन्द में सम्पूर्ण प्रकृति उल्लासमय हो उठती है और उल्लास में व्यक्ति अपनी प्रकृति अनुसार हँसने, कूदने, नाचने, गाने के अतिरिक्त और कर ही क्या सकता है? उमेश भी वही कर रहा था। उसने मेज़ से पेंसिल-कागज़ उठाकर प्रथम दोनों पंक्तियों को लिखा और पुनः आगे की पंक्तियों को सोचने लगा। उसने आगे बनाया।

मुझको हारा हुआ पथ पर गिरा पथिक समझो,
साथ चलने की शपथ है मेरे अरमानों की॥

और इस प्रकार एक के बाद एक पंक्ति बनती चली गई। अभी कविता समाप्त नहीं हो पाई थी कि कानों में शब्द पड़े, "बहुत सुन्दर, बहुत सुन्दर।" जया दरवाज़े के सामने आ गई, "चलिए संगीतज्ञ से नेता बने और नेता से अब कवि। कविता सुन्दर है।"

"यह सब आप ही की देन है। चाहे जो बना दीजिए। अपने को तो अब केवल बनना रह गया है।" वह जया को एकटक निहार रहा था, "अन्दर आइए।"

जया आकर बैठ गई। उमेश अब भी उसे निहार रहा था। जया ने

आँखें नचाई, "मुझे इस तरह क्या घूर रहे हैं ?" आज कोई नई बात हो गई है ?"

"हो गई है तभी तो प्यास नहीं बुझ रही है।"

"तो प्यास बुझाने की लालसा है, मुझे सिखलाने की नहीं ?" वह बगल में रखे तानपूरा को खोल से निकालने लगी। उसने बड़ी दूर की बात कह दी थी।

उमेश बगलें झाँकने लगा। उसे अपने ऊपर क्रोध आया। ऐसी बात उसके मुँह से क्यों निकल गई। यद्यपि जया ने प्यास शब्द का अर्थ गलत लगा लिया था, परन्तु ऐसे अवसरों पर प्रत्यक्ष का ही मूल्यांकन होता है, परोक्ष का नहीं। परोक्ष वाली स्थिति बहुत बाद में आती है—अधिक घनिष्ठता बढ़ जाने पर। उमेश ने अपने को बचाने का प्रयत्न न करके सीधी बात कह दी, "यह तो ईश्वर ही जानता है कि प्यास बुझाने की लालसा है या सिखलाने की। पर इससे इन्कार नहीं कर सकता कि प्यास बुझाने की लालसा मेरी अस्वाभाविक लालसा नहीं है।"

"अस्वाभाविक नहीं है, किन्तु अनुचित तो है।"

"अनुचित इसलिए है कि हमारा समाज इसे बुरा···।"

"जी नहीं ! अनुचित इसलिए है कि यह भीतर की सुन्दर भावनाओं पर आतंक जमाकर असुन्दर की ओर मोड़ने लगता है। ऐसी कहानियाँ आपको आए दिन सुनने को मिलती रहती होंगी।"

उमेश निरुत्तर हो गया। उसे चुप हो जाना पड़ा।

"लीजिए इसे आप मिलाइए।" जया समझ गई थी कि उमेश के पास कोई उत्तर नहीं है।

उमेश तानपूरा मिलाने लगा और जया उसके मुखमंडल पर बिखरे भावों को समझने का प्रयास करने लगी। तार मिल जाने पर जया ने विशेषभाव सहित आग्रह किया, "पहले कविता सुनाइए तब मैं सीखना शुरू करूँगी।"

"लीजिए बजाइए। फिर कभी सुनाऊँगा।"

जया ने गर्दन हिलाई, "ना, अभी सुनूँगी।"

"लेकिन अभी वह पूरी कहाँ है ? पूरी तो हो जाने दीजिए।" उमेश

ने टालना चाहा। उसका मूड बदल गया था।

"जितनी है उतनी ही सही," जया सब समझ रही थी, "मैं बिना सुने सीखना आरम्भ नहीं करूँगी।"

विवश होकर उमेश को सुनाना पड़ा। जया बड़ी तन्मयता से सुनती रही। कविता समाप्त होते ही उसने दूसरी बात छेड़ दी, "एक बात बताइए। मेरी कौनसी गलती थी, जिसके कारण आपने बात-चीत करना बन्द कर दिया था?"

"कोई-न-कोई गलती होगी ही।"

"जैसे?"

"जैसे क्या? मुझे याद नहीं है।"

जया हँसने लगी, "बड़े भावुक हैं आप। मूड खराब होते देर नहीं लगती। सही बातों में भी नाराज़ हो जाते हैं।" उसने उसके हाथ से तानपूरा ले लिया, "बोलिए क्या गाऊँ?"

"वसन्त।"

जया गाने लगी। लगभग एक घंटे तक सीखने वाला कार्यक्रम चलता रहा। तदुपरान्त समाप्त हुआ। जया ने तानपूरा उठाकर रखा और फिर मुस्कराकर हाथ जोड़ते हुए धीरे से कहा, "नाराज़ होना आसान है, परन्तु इससे दूसरे को कितनी व्यथा पहुँचती है इसका भी तो ध्यान रखना चाहिए! नमस्ते।"

"नमस्ते।"

वह चली गई।

उमेश हँसता हुआ दरी पर लेट गया और बड़ी देर तक हँसता रहा।

११

लखनऊ से सूचना आई थी कि विद्यार्थियों के जुलूस पर पुलिस ने लाठीचार्ज किया है, जिसमें दो-तीन विद्यार्थियों को अधिक चोटें आई हैं और उनकी दशा भी शोचनीय है। तत्काल इस अत्याचार के विरोध में इलाहाबाद के 'विद्यार्थी कांग्रेस' ने एक दिन की हड़ताल घोषित की और समस्त कालेज के छात्र-छात्राओं से अपील की गई कि वे अपने कालेजों से जुलूस बनाकर सारे नगर में घूमते हुए पुरुषोत्तमदास टंडन पार्क में एकत्रित हों। विद्यार्थी नेताओं में काम बँट गए और वे हड़ताल को अधिक सफल बनाने के प्रयास में जुट पड़े। दौड़-धूप होने लगी। उधर कलक्टर महोदय ने भी प्रत्येक कालेज और स्कूल के प्रधानाचार्य को कड़ी चेतावनी देते हुए आदेश दिया कि वह अपने विद्यार्थियों को जिस रूप से भी हो हड़ताल में भाग लेने से रोकें।

उमेश के ज़िम्मे कायस्थ पाठशाला थी। पहले उसने हरनाथ, सन्त-बक्स और आकाश से एकान्त में बैठकर हड़ताल को सफल बनाने के उपायों पर विचार-विमर्श किया। हरनाथ ने कहा, "हड़ताल तो होगी ही और जहाँ तक उसे सफल बनाने का प्रश्न है, तुम्हारे साथ भरसक प्रयत्न करूँगा, लेकिन मैं इस बार जुलूस के साथ नहीं चल सकता और मैं समझता हूँ, सन्तबक्स भी नहीं जा सकेगा। आकाश के बारे में कह नहीं सकता। क्यों सन्तबक्स ? तुम जाओगे ?"

"नहीं।"

उमेश ने आकाश की ओर देखा, "और तुम ?"

"मैं बिल्कुल चलूँगा। मुझे किस बात का भय है ?" तुम समझते नहीं उमेश। हरनाथ भी ताल्लुकेदार है और सन्तबक्स भी। क्या इन दोनों के फादर जहाँ अंग्रेज़ों के विरुद्ध कोई काम हो रहा हो, उसमें शामिल होने की इजाज़त दे सकेंगे ?"

"नहीं दे सकेंगे। यह मैं समझता हूँ, लेकिन देश के प्रति हम लोगों के जो कर्तव्य हैं, उसकी भी पूर्ति होनी चाहिए। पढ़ने से लाभ क्या, जब सच

को सच कहने में हम इसलिए घबड़ाते हैं कि इससे हमारे परिवार को थोड़ी हानि पहुँचने की सम्भावना है ? क्या इस मनोवृत्ति को तुम अच्छा कहोगे ? क्या इस प्रकार··· ।"

हरनाथ बीच में बोल पड़ा, "तुम वास्तविकता भी तो समझो। कल फादर के पास डी० एम० का पर्सनल लेटर आया था, जिसमें लिखा था कि हम लोगों को कालेज अवश्य भेजा जाए।"

"तो ? उसका जो काम है उसे वह करेगा ही, और हमारा जो काम है, हम उसे करेंगे ही।"

"ऊँहूँ ! इस बार मैं जुलूस में नहीं जा सकता। फादर ने पहले से मना कर रखा है।"

"हरनाथ का भी कहना सही है उमेश," आकाश ने उठते हुए अनावश्यक बहस को समाप्त किया, "उसके फादर का नेचर तुम जानते ही हो। तुम्हारे लिए पहले हड़ताल जरूरी है न ? हड़ताल हो जाने पर तो तमाम लड़के जुलूस के साथ चल निकलेंगे। हरनाथ को छोड़ो।"

"अच्छी बात है। खैर तुम दोनों," उमेश का सम्बोधन हरनाथ और सन्तबक्स को था, "उस दिन सवेरे जल्दी तो आ सकते हो ?"

"हाँ, यह हो सकता है।" दोनों ने स्वीकृति दी।

उमेश खड़ा हो गया, "अब और लड़कों से बातें कर लूँ ?"

"तो हम लोग जाएँ या तुम्हारा इन्तजार करें ?" आकाश ने पूछा।

"तुम लोग सिविल लाइन्स चल रहे हो ?"

"हाँ।"

"तो चलो। घंटे भर में मैं भी आजाऊँगा।"

हरनाथ ने व्यंग्य किया, "क्या फिर खटपट हो गई है ? आज घर जल्दी नहीं जाना है ?" उमेश अपने प्रेम की कहानी को तीनों मित्रों से बता चुका है।

"तुम ठहरे ब्रह्मचारी आदमी। ज्यादा इस तरह की बातों में न पड़ा करो वरना बिगड़ जाओगे। क्या समझे ? आज उनसे छुट्टी ले रखी है भाईजान !" उमेश हँसता हुआ चला गया।

× × ×

कायस्थ पाठशाला में हड़ताल हुई और बड़ी शानदार हड़ताल हुई। प्रिंसिपल साहब और प्रोफेसरों ने भरसक प्रयत्न किया, परन्तु विद्यार्थियों ने एक न सुनी। दस-बीस लड़के ही लुक-छिपकर घुस सके थे। गद्दार तो हर जगह हुआ करते हैं। उमेश बड़ा प्रसन्न था। उसने तत्काल चार-चार लड़कों की पंक्ति बनाकर जुलूस तैयार किया और फिर कालेज के फाटक पर बनी पुलिया पर खड़े होकर ऊँचे स्वर में बोला, "पहले एक बार हम लोग नारे लगा लें तब आगे बढ़ेंगे, इन्क़लाब !" वह चिल्लाया।

समस्त विद्यार्थियों ने कहा, "ज़िन्दाबाद।"

"इन्क़लाब।"

"ज़िन्दाबाद।"

"बरछे गोली की सरकार।"

"नहीं रहेगी, नहीं रहेगी।"

"तानाशाहों की सरकार।"

"नहीं रहेगी, नहीं रहेगी।"

"देश की जनता जागी है।"

"ब्रिटिश हुकूमत भागी है।"

"अत्याचारी अंग्रेज़ो।"

"भाग जाओ, भाग जाओ।"

"अत्याचारी अंग्रेज़ो।"

"भाग जाओ, भाग जाओ।"

उमेश पुलिया से कूद कर आगे बढ़ गया। जुलूस गगनभेदी हुँकार करता हुआ कैनिंग रोड से मुड़कर शहर की ओर चल पड़ा। नगर की मुख्य-मुख्य सड़कों से होता हुआ जुलूस सिविल लाइन्स पहुँचा। सिविल लाइन्स का चक्कर लगाकर जुलूस महिला विद्यापीठ वाली सड़क पर आया। महिला विद्यापीठ समीप आने पर उमेश ने ज़ोर से नारे लगवाने आरम्भ कर दिये और उसकी आँखें कालेज के गेट पर खड़ी सैकड़ों लड़कियों के भीतर किसी को ढूँढने लगीं। अकस्मात् जया से नेत्र मिल गये। वह झूम उठा। वह अधिक गर्व के साथ नारे लगाने लगा और आगे कमला नेहरू रोड से मुड़ता हुआ पुरुषोत्तम पार्क को चल पड़ा।

लड़कियों में भी जोश आया। कुछ अधिक निर्भीक स्वभाव की लड़कियों ने नेतृत्व किया। हुल्लड़ बढ़ा। महादेवी वर्मा प्रिन्सिपल थीं। उन्होंने चपरासियों से फाटक बन्द करने को कहा। परन्तु लड़कियों ने चपरासियों को धक्का देकर अलग किया और जुलूस बनाकर, "इन्क़लाब ज़िन्दाबाद," कहती हुई टंडन पार्क को चल पड़ीं। लड़कियों में एक लड़की जया भी थी।

महिला विद्यापीठ से पुरुषोत्तमदास टंडन पार्क लगा हुआ है।

पार्क में भीड़ बढ़ती गई और थोड़े ही समय में विद्यार्थियों और नागरिकों से पार्क भर गया। ऐसी बड़ी हड़ताल अभी तक कम देखने को मिली थी। लगभग साढ़े चार बजे मीटिंग की कारवाई कविता पाठ द्वारा आरम्भ हुई।

मंच पर आकाश भी उमेश के साथ बैठा हुआ था। उसने धीरे से उमेश से कहा, "तुम अपनी उस दिन वाली कविता सुनाओ न ?"

"नहीं ! वह ठीक नहीं है।"

"पागल हो, सुनाओ। मैं जो कहता हूँ। तुम्हारा नक्शा जम कर रह जाएगा। आज के लिए वह कविता बड़ी मौजूँ है।"

"लेकिन…"

"लेकिन-वेकिन कुछ नहीं। आकाश ने उठकर उमेश का नाम लिखवा दिया।

दो-तीन कविताओं के उपरान्त पंचानन ने कुछ भूमिका के साथ लाउड-स्पीकर पर उमेश का नाम घोषित किया। उमेश उठा और सहमता हुआ माइक के सामने आकर खड़ा हो गया। उसने सरसरी दृष्टि से चारों ओर देखा और जब उसकी नज़र सामने बैठी लड़कियों पर आई तो वहाँ जया को देखकर वह अचम्भे में पड़ गया। उसकी प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। वह बोला, "सुनिये—

जवानो आज तुम लेकर चलो टोली।
जवानो आज तुम लेकर चलो टोली॥
सूर्य की किरणों ने तपना ही सीखा है,
प्रभंजन ने सदा बहना ही सीखा है।

घटाएँ भी सदा बढ़कर के कहती हैं;
गरजना और बढ़ना हमने सीखा है;
तुम्हारा ध्येय है बढ़ते चलो आगे,
पहाड़ों से सदा लड़ते चलो आगे,
दुःखों को झेलते हँसते चलो आगे,
जलाओ आज भारत में नई होली।
जवानो आज तुम लेकर चलो टोली॥

तुम्हारे चलने से भूचाल आ जाये,
चन्द्र की रश्मियों में ताप आ जाये,
गिरें फिर टूटकर तारे क्षितिज से,
महासागर में भी उफ्फान आ जाये;
समय है लाज रख लो आज भारत की,
तड़पते भूख से मरते अनाथों की,
ग़रीबों की, किसानों की सभी के लाल-लालों की,
निकालो आज भारत में नई टोली।
जवानो आज तुम लेकर चलो टोली॥

ज़ोर से तालियाँ बजीं और सारे वातावरण में 'वाह-वाह' की ध्वनि गूँज उठी। उमेश ने आगे पढ़ा—

किसानों की तड़पती आह रहती है,
ठिठुरती काँपती आवाज़ कहती है,
अरे! टुकड़ों पै क्या हमको ही जीना है?
निकलती बैठती हर साँस कहती है;
न तन पै वस्त्र है खाने को खाना,
न जाना पेट भर कैसा है खाना,
जवानी में बुढ़ापे का बहाना,
नये भारत में अब निकले नई टोली।
जवानो आज तुम लेकर चलो टोली॥

खड़ाखड़ खड्ग भी चलते जहाँ हों,
तड़ातड़ विजलियाँ गिरती जहाँ हों,

वहाँ उत्साह हो दूना तुम्हारा,
यदि हाथों में चाहे शस्त्र न हों,
मिटाना आज गोरों को हमें है,
जलाकर भस्म कर देना हमें है,
समय पर प्राण भी देना हमें है,
बनाएगी ज़माने को नई टोली।
जवानो आज तुम लेकर चलो टोली॥

पुनः तालियाँ बजीं और लोग उछल-उछल पड़े। उमेश ने अन्तिम सुनाया—

तुम्हारा पथ-प्रदर्शक देव गांधी है,
अहिंसा को लिये वह देव आँधी है,
बढ़ा हथियार से नेहरू सुसज्जित,
कहा नर-नारियों ने वीर त्यागी हैं,
न जाये वार खाली चाहे सिर जाये,
लहू से भीगता सीना उभर आये,
क्षितिज के पार यह हुंकार भर जाये,
विजय भारत, चला लेकर नई टोली।
जवानो आज तुम लेकर चलो टोली॥

उमेश आकर बैठ गया। फिर बड़ी देर तक तालियों की पड़पड़ाहट वायुमण्डल में उसकी प्रशंसा की घोषणा करती रही। सभी के मुँह कह रहे थे—कविता में बुज़दिल को शेरदिल बना देने की शक्ति है। बहुत सुन्दर है। आकाश ने उमेश की पीठ ठोंकी, "देखा बच्चू, कैसा रोब जमा ?" और फिर धीरे से उसके कान में मुँह सटाकर बोला, "अगर इस समय वह होती तो…।"

"आई हैं।"

"क्या…?"

"मज़ाक नहीं। सामने ही बैठी हैं। मीटिंग के बाद तुम से परिचय कराऊँगा।"

"नीचे चलो।" आकाश ने क्षण भर सोचने के उपरान्त कहा और

उसका हाथ पकड़कर खींचता हुआ पीछे एकान्त में आकर कहने लगा, "कहो तो कोई प्रोग्राम बनाऊँ।"

"कैसा ?"

"कॉफी-हाउस में ले चलूँ ! अच्छी ख़ातिरदारी भी हो जाएगी और तुम्हारा अधिक रंग भी जम जाएगा।"

"कर लो।"

"ठीक। तुम चलकर बैठो। मैं हरनाथ को देखता हूँ। अगर मिल गया तो उसकी गाड़ी से चलेंगे।" वह चला गया।

उमेश आकर बैठ गया।

उधर जया के बगल में बैठी उसकी सहेली मधु बार-बार उसे खोद-खोदकर उसके प्रेमी की प्रशंसा में कुछ धीरे से कह दिया करती थी। कालेज में जया और मधु की बहुत पटती है। जया ने अपने रोमांस का ज़िक्र मधु से कर रखा है। परन्तु ऐसा अवसर कोई न मिलने के कारण वह उमेश से उसका परिचय न करा सकी थी। आज उमेश ने मधु को देख लिया।

मीटिंग समाप्त हुई। भीड़ छँट जाने पर उमेश मंच से उतर कर नीचे जया के पास आया। "बधाई है," जया बोली, "ऐसी कविताएँ अगर रोज़ सुनने को मिलें तो शायद अंग्रेज़ों का टिकना मुश्किल हो जाए। बड़ी अच्छी लिखी है। मुझे आपने कभी नहीं सुनाई थी ?"

"अगर सुना दी होती तो आज यह प्रशंसा सुनने को कहाँ मिलती ?"

"बातों में आप से पार पाना कठिन है।" फिर उसने परिचय कराया, "यह मेरी सहेली मधु हैं। आप से मिलने के लिए बड़ी उत्सुक थीं।"

मधु ने हाथ जोड़े और धीरे से बोली, "यह कविता लिखने को मिल सकेगी ?"

"बिलकुल। मैं कल जयाजी को लिखकर दे दूँगा।"

तब तक आकाश आ गया, "यह मेरे," उमेश ने परिचय दिया, "मित्र आकाशचन्द्र हैं और आप जयाजी और मधुजी।"

आकाश ने हाथ जोड़े। प्रत्युत्तर में युवतियों ने भी हाथ जोड़े "आप तो", आकाश का सम्बोधन जया को था, "उमेश के साथ जाएँगी न ?"

"नहीं। हम और मधु चले जाएँगे। आप लोग···।"

"जी नहीं। मेरा मतलब कुछ और था। कॉफी-हाउस नज़दीक है। सोचा था एक-एक कप आप लोगों को कॉफी पिलवा देता। ऐसे मौक़े बार-बार तो आते नहीं।" उसने मधु की ओर देखा, "आप कहाँ...।"

"टैगोर टाउन।"

"फिर आइए। जितना समय आपको रिक्शे से पहुँचने में लगेगा उससे पहले मैं आपको कॉफी पिलाकर आपके घर छोड़ दूँगा। आइए जयाजी। आज आप मेरा भी करिशमा देखिए।"

उमेश ने आकाश का समर्थन किया। दोनों युवतियाँ एक दूसरे को देखती हुई चल पड़ीं।

हरनाथ की गाड़ी बाहर खड़ी थी। जया और मधु पीछे बैठ गईं और आकाश, उमेश आगे। "कॉफी-हाउस ड्राइवर।" आकाश ने आदेश दिया।

आकाश ने खातिरदारी में कोई कसर न उठा रखी। साथ ही अपनी लच्छेदार बातों से जया और मधु को हँसाता भी रहा। और यह आवश्यक भी था। उसे मधु पर अपने व्यक्तित्व का प्रभाव डालना अनिवार्य हो गया था। अनायास मधु की भेंट और वह भी जया की सहेली के रूप में। वहाँ वहुत कुछ आशा की गुँजाइश थी। इतनी ही देर में उसने क्या-क्या सोच लिया था—कहना कठिन है।

विद्यार्थी जीवन में कालेज की लड़कियों अथवा अपनी प्रेमिकाओं के साथ सिनेमा देखने तथा किसी रेस्ट्राँ और होटल में चाय पीने में जो आनन्द है सम्भवतः मेरे अनुमान से वह आनन्द स्वर्ग की प्राप्ति में भी सम्भव नहीं है। बड़े गर्व के साथ ऐंठते हुए उमेश और आकाश दोनों युवतियों को साथ ले कॉफी-हाउस से बाहर निकले। ड्राइवर मोटर सामने लाया। चारों जने बैठ गए। "टैगोर टाउन चलो।"

बताये हुए बँगले के सामने कार आकर रुकी। मधु ने नीचे उतरकर नमस्ते किया। फिर वह जया से 'टाटा' करती हुई फाटक की ओर मुड़ गई। कार चली गई।

कटरे में गली के सामने ड्राइवर ने मोटर रोकी। जया उतर पड़ी। "मैं अभी," उमेश बोला, "थोड़ी देर में आता हूँ। सिविललाइन्स में हरनाथ और सन्तबक्स प्रतीक्षा कर रहे होंगे। जाऊँ?"

"जाइए। अब तो आप नेता हो गए हैं। आपका क्या कहना ?" वह आकाश को नमस्ते करती हुई गली में मुड़ गई।

दोनों दोस्त हँसते हुए पीछे की गद्दी पर आकर बैठ गए। ड्राइवर ने गाड़ी बढ़ा दी। "हरनाथ कहाँ रह गया ?" उमेश ने पूछा।

"लकी स्वीट मार्ट में बैठा होगा। मैंने उसे साथ लाने की बड़ी कोशिश की थी, लेकिन जया के सामने शायद ब्रह्मचारी का ब्रह्मचर्य खंडित होने का भय था। उनको तो लड़कियों से नफरत है। लड़कियों के साथ मोटर में कैसे बैठ सकते थे ? ड्राइवर को सब कुछ समझाकर गर्दन टेढ़ी करते हुए चले गए थे। साथ में सन्तबक्स को भी घसीटते ले गये वरना उसकी तबीयत आने को थी।"

उमेश हँसने लगा।

१२

उमेश की कविता की बड़ी चर्चा रही। न जानने वाले भी उसे जान गए। सड़क पर आते-जाते चार-छः व्यक्ति ऐसे अवश्य दिखलाई पड़ जाते थे, जो उसकी ओर उँगलियों से संकेत करते हुए निकल जाते थे। कालेज में उसकी अलग धूम थी। परिचित-अपरिचित सभी बधाई दे रहे थे। उसकी प्रतिष्ठा बढ़ गई थी। मन में जिस ख्याति की लालसा थी—उसकी नींव पड़ने लगी थी। वह प्रसन्न था। उमंगें बढ़ गई थीं। आज़ादी के लिए कुछ कर गुज़रने का मन्सूबा बढ़ उठा था। पढ़ाई गौण हो गई थी।

विचारों के परिवर्तन ने और ज़ोर मारा। देशी-विदेशी की बात उठी। उसने विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार करने का निश्चय किया और अचानक एक सन्ध्या को कालेज से लौटते समय जब वह खद्दर के कपड़ों का बंडल लिए घर आया तो जया को आश्चर्य के साथ कुछ गर्व का भी अनुभव हुआ।

परन्तु ऊपर से उसने हँसी के स्वर में कहा, "अब तो आप पूर्ण रूप से नेता होने जा रहे हैं। क्या वस्त्रों के साथ-साथ विदेशी पहिनावा का भी त्याग कर दिया जाएगा?" जया बंडल खोलकर धोती, कुरते और सदरी के कपड़ों को देखने लगी थी।

"पूर्ण रूप से। अब तो कोट-पैन्ट उस दिन पहिनूँगा, जिस दिन देश स्वतन्त्र हो जाएगा। जब छोड़ना है, तो पूरी तरह क्यों न छोड़ा जाए?"

"कहना आपका अनुचित नहीं, पर किसी पहिनावे से कैसी नफ़रत? कपड़े के बहिष्कार में तो कुछ तुक भी है।"

"तुक इससे भी है। यह पहिनावा हमारे अन्दर सुपीरियारीटी काम्पलेक्स (बड़े समझने की भावना) पैदा करता है। हम रिक्शे वाले को 'भाई' नहीं 'रे' और 'वे' कहकर सम्बोधित करते हैं। उनके साथ बैठकर बातें करने में हमें घिन लगता है। सर्वसाधारण के बीच हम घुल-मिल नहीं सकते। फिर आप ही सोचें। क्या इसी मनोवृत्ति से स्वतन्त्रता प्राप्त की जा सकती है? वह तनिक रुका और उसके मुँह के पास अपना मुँह सटाता हुआ बोला, "क्या मैं धोती-कुरता में अच्छा नहीं लगूँगा?"

"जाइए।" जया ने उसे देखकर सिर झुका लिया। वह क्षणभर मौन रही, "तानपूरा उतारिये। बातों में बड़ा समय बर्बाद होता है।"

"सो तो है। लेकिन कुछ-कुछ आबाद भी तो होता है।"

"ज़रूर होता होगा। तानपूरा उतारिए।"

उमेश हँसने लगा। उसने तानपूरा उतारकर मिलाया और जया को दे दिया।

जया गाने लगी। एक राग समाप्त करने के उपरान्त जया ने कहा, "मेरे कालेज में आपकी बड़ी चर्चा है, और जब से लड़कियों को यह मालूम हो गया है कि आप मेरे ही घर पर रहते हैं तब से और आफत है। कोई कविता लिखवा आने को कहती है तो कोई आपसे गाना सुनने को कहती है। कुछ आपसे मिलना भी चाहती हैं और कुछ ऐसी भी नटखट हैं जो न जाने कैसी-कैसी बातें कहने लगती हैं। मैं···।"

"और कुछ ऐसी भी नटखट होंगी जो हमारे-आपके सम्बन्ध के विषय में भी पूछती होंगी?" उमेश बीच में बोल पड़ा था।

जया ने गर्दन टेढ़ी की, "क्यों ? मेरे आपके सम्बन्ध के विषय में क्या पूछेंगी ?"

"मेरा कहने का मतलब यह था कि किसी ने ऐसा प्रश्न तो नहीं पूछ डाला कि जब हम-आप अकेले में मिलते हैं तो दिल धक-धक करने लगता है या नहीं ?"

जया हँसने लगी। उसने आँखें नीची कर ली थीं, "आप बड़े वैसे हैं। जो मुँह में आता है बक देते हैं। कुछ ज़बान पर काबू रखा कीजिए। किसी लड़की को क्या अनुमान ?"

"क्यों नहीं। मधु को बिल्कुल है।"

"कैसे ? आप क्या ज्योतिषी हैं ?"

"ऐसा ही समझ लीजिए।"

"ओहो ! खूब मिले ज्योतिषी जी। बिना सिर-पर की बातों का भी अनुमान लगा लेते हैं। ऐसे ज्योतिषियों से भगवान बचाए।"

"मैं लिफाफा देखकर खत का मज़मून जान लेता हूँ सरकार ! मधु को सब-कुछ मालूम है।"

"बिल्कुल नहीं मालूम है। आपको क्या ? कोई भी बात हो उसे किसी-न-किसी प्रकार खींचकर वहीं ले आएँगे।"

"वहीं, कहाँ जयाजी ?" वह हँस पड़ा।

जया मुँह बनाती हुई उँगलियों को तारों पर चलाने लगी। प्रेमियों में ऐसी ही बातें होती हैं और उसी में आनन्द है।

फिर कोई बातचीत नहीं हुई। हाँ, जाते समय जया ने बतलाया था कि परसों मधु ने उसे निमन्त्रित कर रखा है, इसलिए वह कहीं और का प्रोग्राम न बनाकर कालेज से सीधे यहीं आ जाय। शाम को छः बजे तक चलना है।

दूसरे दिन कालेज में अपनी मित्रमंडली को उमेश ने महिला विद्यापीठ में होने वाली प्रशंसा को सविस्तार से बताया और साथ में यह भी बताया कि मधु ने कल उसे निमन्त्रण दे रखा है। उसे गर्व का अनुभव हो रहा था।

"तो इसमें इस प्रकार फूलकर कुप्पा होने की कौन-सी बात है", हरनाथ ने मुँह बनाया, "लड़कियों में कोई सुरखाब के पर लगे हैं जिनकी

बड़ाई से इस समय आपके पैर ज़मीन पर नहीं पड़ रहे हैं ? चोंचड़ बसन्त। दूसरे व्यक्तियों ने जो प्रशंसा की उसका कोई ज़िक्र नहीं, मगर लड़कियों ने कह दिया तो उसका ढोल पीट रहे हैं। सरऊ, बरबाद हो जाओगे बरबाद ! ज़रा, इन चक्करों से वचो।"

उमेश हँसने लगा। साथ-साथ आकाश और सन्तबक्स भी हँसने लगे, "चलो," उमेश बोला, "एक बात की खुशी हुई कि मेरे किसी काम ने तुम्हें प्रभावित तो किया। क्या मालूम भविष्य में यह प्रेरणा कौन-सा रंग खिला दे ?"

"रंग खिलाये या न खिलाये लेकिन तुम अपनी हरकतें रोको। अभी-तक जया की ज़िन्दगी चौपट कर रहे थे, अब मधु पर डोरे डालने लगे। ससुरी लौंडियाँ भी कहाँ आकर मरती हैं।"

फिर सब हँस पड़े, "क्यों हरनाथ ! किसी से प्रेम करने का मतलब होता है उसकी ज़िन्दगी चौपट करना ?" उमेश ने गम्भीर होकर पूछा।

"और क्या होता है ? एक कालेज का लड़का एक कालेज की लड़की से प्रेम नहीं करता वरन् वह अपनी वासना की तृप्ति चाहता है और इस तृप्ति की पूर्ति होते ही वह उसे ठोकर मारकर आगे बढ़ जाता है। आज-कल यह रोज़ सुनने में आ रहा है।"

"और ऐसी ही आशा तुम मुझसे भी करते हो ?"

हरनाथ तनिक रुका, किन्तु तुरन्त बोला, "तुमसे करता नहीं हूँ, लेकिन तुम भी कर सकते हो।"

"मगर क्या ऐसे चान्सेज़ नहीं हैं कि ऐसी हरकत करने के बाद मैं उससे विवाह कर लूँ ?"

"हैं, लेकिन कम।"

"क्यों ?"

"ऐसी हमारी-तुम्हारी उम्र नहीं है। इतना साहस करना कठिन है और अगर साहस किया भी तो उसका भरण-पोषण कैसे कर पाओगे ? फिर जीवन नरक तुल्य हो जाएगा या नहीं ?"

"उमेश," आकाश ने बीच में हस्तक्षेप किया, "किस औंधी खोपड़ी से बातें कर रहे हो। भाई का सिद्धान्त दुनिया से अलग है। जवानी, जो

इन्सान की ज़िन्दगी का बेस्ट पीरियड है, उसीमें सबको ब्रह्मचारी बना देना चाहते हैं। पच्चीस वर्ष तक पढ़ाई करो। उसके बाद तीन-चार साल नौकरी ढूँढने में लगाओ या किसी कारोबार को जमाओ, और तब प्रेम करो या शादी करके ज़िन्दगी का मज़ा लूटो। लेकिन कोई इन बौड़मदास से पूछे कि आज जैसी उमंगे और कामनाएँ तब रह सकेंगी ? क्या ऐसी आज़ादी उम ज़िन्दगी में नसीब हो सकेगी ? ख़ुदा ने सूरत शक्ल इतनी अच्छी दी है कि जिधर से निकल जाता है लड़कियाँ फ्लैट हो जाती हैं मगर ख़ब्तियों का क्या इलाज ? आप ब्रह्मचारी बने कमरे के कोने में मुगदर हिलाया करते हैं।"

पुनः सब हँसने लगे। हरनाथ भी अपनी हँसी को न रोक सका। आकाश ने उमेश का हाथ पकड़ा, "उठो चलें। इससे बहस करके अपना दिमाग़ ख़राब न करो।"

हरनाथ ने आकाश की गर्दन दबाई, "बैठो। मैं सब समझता हूँ। कल के लिए कोई योजना बनानी होगी क्यों ?"

आकाश ने हाथ जोड़े, "मेरी गर्दन पर तो रहम कीजिये। मैं कहीं नहीं जाऊँगा। लीजिये बैठ गया।"

हरनाथ ने गर्दन छोड़ दी और सन्तबक्स से कहा, "कल उमेश को कालेज से घर नहीं जाने देना है। देखते हैं मधु के यहाँ कैसे पार्टी उड़ती है ?"

उमेश ने सिर पर हाथ मारा, "हरनाथ, कुछ समझने की तो कोशिश कीजिए। मधु में मेरी दिलचस्पी नहीं, आकाशसाहब की है। जब से उससे आँखें मिली हैं, खाना, सोना हराम हो गया है और मेरी जान को आफत है सो अलग। रोज़ मुलाकात करवाने को कहते हैं और आज जब यह सुन लिया कि कल मेरी दावत है तो लसने की सोच रहे होंगे। इसीलिए तो मुझे अलग लिये जा रहे थे।"

"समझा। तो यह मामला है। चींटियों के भी पर निकलने लगे ? जवानी का भूत इन पर सवार है। देखता हूँ, कल सरऊ तुम्हारे साथ कैसे जाते हैं ?"

टन-टन-टन करके घण्टा बोला। सब दर्जे में आने के लिए खड़े हो गए। उमेश ने पूछा, "अब तो मधु के यहाँ जाने में मेरे लिए कोई आपत्ति नहीं ?"

"नहीं। तुम जा सकते हो।"

आकाश ने हरनाथ को बेवकूफ बनाया, "तुम भी बिल्कुल भोले व्यापारी हो, हरनाथ। उमेश ने अपनी बात मेरे मत्थे मढ़कर तुम्हें बुद्धू बना दिया न? तुम समझते नहीं, मेरे जाने से इस पर काफी रोक-थाम रहेगी, लेकिन तुम कहते हो मैं नहीं जाऊँगा। एक लड़की के पीछे दोस्ती तो ख़राब करनी नहीं है।"

"तुम्हें बहका रहा है हरनाथ," उमेश चिल्लाया, "इसकी बातों में न आना। अभी तुमसे अकेले में भी इधर-उधर की बातें कहेगा। लेकिन कल मेरे पीछे यह न लगने पाये—इसमें तुम्हें पूरी सतर्कता बरतनी है।"

"तुम निश्चिन्त रहो। कल सरऊ मेरे चंगुल से निकल नहीं सकते।"

सब हँसते हुए क्लास में घुस गए। चचा (प्रो० गणेशप्रसाद पूरे कालेज में चचा के नाम से सम्बोधित होते थे और उनके साथ लड़कों को हर तरह की मज़ाक करने की छूट थी। उनकी आयु लगभग साठ के थी। वह हिसाब पढ़ाया करते थे।) अभी दर्जे में नहीं आए थे। दर्जे में बड़ी शान्ति फैली हुई थी। हरनाथ ने पूछा, "आज मामला क्या है भाई!" केशव आगे वाली बेंच से उठकर आया और कुछ बताकर पुनः अपनी जगह पर जा बैठा। थोड़ी देर में हाफ-पैन्ट पर कोट-टाई बाँधे तथा सिर पर गोल टोपी लगाए चचा आते हुए दिखलाई पड़े। पीछे के दर्जों में शोर हो रहा था, "चचा! ओ चचा!" तब तक किसी दूसरे लड़के ने कहा, "चचा! चिलम चोर हैं।"

चचा दाँत पीस-पीसकर किटकिटाते हुए आ रहे थे।

चचा ने दर्जे में पदार्पण किया। लड़के खड़े हो गए और उनके बैठने के बाद शान्तिपूर्वक बैठ गए। चचा ने तनिक आश्चर्य से पूरे क्लास को देखा। यह अनोखा परिवर्तन! वह कुछ कहने ही वाले थे कि पीछे वाली बेंच से एक लड़का बोला, "चचा, आज दिनेश चाची के विषय में न मालूम क्या-क्या कहता रहा। यह बड़ी बुरी…।"

चचा ने दाँत पीसे, "अरे सारे रधिकवा, तेरे बाप मूँगफली बेचते हैं न? तू भी सारे मूँगफली बेचेगा! चुप।"

लड़के हँसने लगे और चचा का पक्ष लेकर कुछ लड़कों ने राधिका को

डाँटा भी। चचा ने टोपी उतार कर डेस्क पर रखी और जेब से डस्टर निकालकर उमेश की ओर संकेत किया, "आफिस से दौड़कर चॉक तो ले आओ।"

केशव बोल पड़ा, "डेक्स में रखा है, मास्टरसाहब!" वह गम्भीर था।

चचा ने डेस्क उठाई थी कि मेंढ़क के छोटे-छोटे सारे बच्चे उनके मुँह पर उछल पड़े। चचा कुर्सी से गिरते-गिरते बचे। लड़के हँसते-हँसते लोट-पोट हो गये।

१३

यद्यपि चारों मित्र आयु में एक जैसे थे, परन्तु नसीहत में हरनाथ बुजुर्गों जैसा था और जो कुछ कहता था, निष्कपट भाव से कहता था और अपना समझकर कहता था। सच्ची मित्रता की जो परिभाषा होनी चाहिए थी उसी का वह अनुकरण तन, मन, धन से करता तथा प्रयत्न करता कि उसके अन्य तीनों मित्र भी इसी मार्ग को अपनाकर एक आदर्श स्थापित कर सकें। और यही कारण था कि आज से दो मास पूर्व एक सन्ध्या को उसने अपने कमरे में सबको एकत्र करके यह प्रस्ताव रखा कि प्रत्येक अपने खून से एक कागज़ पर लिखकर प्रतिज्ञा करे कि वह एक-दूसरे के लिए आवश्यकता पड़ने पर जान की बाज़ी भी लगाने को तत्पर रहेगा। सभी ने अँगूठे को काटकर खून निकाला था और हस्ताक्षर किए थे। उनकी मित्रता की नींव दृढ़ हो गई थी।

निस्सन्देह, हरनाथ चरित्र के मामले में बड़े कड़े नियमों का पालन करने वाला था। परन्तु उसके मित्र भी उसी का अनुकरण करें, ऐसा उसने कभी नहीं चाहा था। वह समझता था कि यह हरेक के वश की चीज़ नहीं

है। मगर रोक-थाम का वह ज़रूर क़ायल था। और इसी विचार से वह उमेश और आकाश को समयानुसार डाँट वताया करता था, क्योंकि इन दोनों के सम्पर्क में लड़कियाँ अधिकतर आया करती थीं। सन्तबक्स इन बातों से अछूता था। कारण, उसके पास लड़कियों से बातचीत करने की हिम्मत ही नहीं थी। किसी लड़की के सामने आते ही उसकी घिग्घी बँध जाती थी। कभी-कभी इस प्रसंग को लेकर उमेश और आकाश उसे चिढ़ाया भी करते थे और तब हरनाथ सन्तबक्स का पक्ष लेकर अपने बल का प्रयोग करने लगता था।

इस प्रकार इन चारों मित्रों में ऐसा स्नेह बढ़ गया था कि इनकी मित्रता केवल कालेज में ही नहीं वरन् शहर में भी जहाँ-तहाँ चर्चा का विषय बन गई थी। इतना ही नहीं, अगर किसी समय सिविल लाइन्स या अन्य किसी स्थान पर चार के तीन टहलते हुए दिखलाई पड़ जाते थे तो यह सुनने में देर नहीं लगती थी, "क्यों भई, चौथा कहाँ छूट गया?" मित्रता की गूढ़ता बढ़ती गई।

यद्यपि आकाश को मधु की ओर से कोई निमन्त्रण नहीं था, किन्तु उमेश समझता था कि आकाश के जाने से मधु को प्रसन्नता ही होगी, अप्रसन्नता नहीं। और इधर आकाश को भी समझने-बूझने का अवसर मिल जाएगा। मधु के पीछे आकाश की नींद हराम हो गई थी। सुबह-शाम आहें भरने लगा था। उमेश ने आकाश को भी ले चलने का निश्चय किया। दूसरे दिन कालेज के मैदान के एक कोने में जब चौगड्डा बैठा तो पहला प्रश्न आकाश वाला था। मधु के घर उसे जाने दिया जाए अथवा नहीं—इस पर घण्टों बहस होती रही। अन्त में आकाश की उत्सुकता और विह्वलता देखकर हरनाथ ने उसे जाने की अनुमति दे दी। फिर किन कपड़ों में और किस प्रकार वह उमेश के साथ चले—इसकी योजना बनने लगी।

सन्ध्या को साढ़े पाँच बजे आकाश ने उमेश के घर पर आवाज़ दी। उमेश ने अन्दर बुला लिया। भाभीजी और जया को नमस्ते करते हुए उमेश की ओर देखा, "तुम कहीं जा रहे हो क्या?"

"हाँ! मधु ने आज चाय पर बुलाया है।"

"तो जाओ। मैं हरनाथ के यहाँ जा रहा हूँ।" दोनों रँगे सियार

की भाँति बड़े गम्भीर बनकर बातें करने लगे।

"तुम भी चलो न ?"

"वाह! मैं कैसे चलूँ? मान न मान, मैं तेरा मेहमान। मधुजी भी क्या सोचेंगी ?"

"नहीं।" जया बोली, "सोचेंगी क्या ? आप भी चलिए। उमेश बाबू आपसे···।"

"चलो, आकाश! मधुजी के यहाँ ऐसा कोई तकल्लुफ नहीं है। उनकी जयाजी की वैसी ही दोस्ती है, जैसी हमारी-तुम्हारी।"

भाभीजी ने निर्णय दिया, "जाइए, जाइए। इतने संकोच बरतने वाली उम्र अभी आप लोगों की नहीं है।"

"मन-मन भावे, मूड़ हिलावे"—वाली मसल थी। चलने के लिए तो वह आया ही था। उमेश और जया तैयार थे ही, तीनों घर से बाहर निकले।

मधु अपने चार-छः सहेलियों के संग बैठी बातचीत कर रही थी। समय हो चला था। उसकी दृष्टि दीवार पर टँगी घड़ी की ओर गई, "जया अब आती ही होगी।" उसने कहा।

तब तक कान में आवाज़ पड़ी, "मधु।"

"लो, आ गई।" वह तेज़ी से कमरे के बाहर आई, "तुम्हारी बड़ी उम्र है। अभी-अभी मैंने नाम ही लिया था। उमेश बाबू ?"

"बाहर खड़े हैं। साथ में उनके दोस्त आकाश भी हैं।"

"तो उन लोगों को वहाँ क्यों छोड़ दिया ?" कहती हुई वह बाहर आई, "नमस्ते!", उसने हाथ जोड़े। वह शीघ्रता से आकाश की ओर देखकर उमेश की ओर देखने लगी, "आइए न। जया तो मूर्ख है। आप लोगों को यहाँ खड़ा कर खुद अन्दर चली गई।"

दोनों मधु के पीछे-पीछे एक सुसज्जित कमरे में आये जहाँ उसकी अन्य सहेलियाँ भी बैठी हुई थीं। मधु ने सबका परिचय कराया, तदुपरान्त नौकर को आवाज़ देते हुए चाय लाने के लिए कहा, "आज आपको", वह उमेश से बोली, "कष्ट देने का एक विशेष प्रयोजन था। ये लोग आपकी कविता सुनने की बड़ी इच्छुक हैं। बहुत दिनों से कह रही थीं। मैंने भी

सोचा इन्हीं के बहाने मुझे भी सुनने को मिल जाएगी। वैसे जया तो बुलाकर सुनवाने से रही।" वह आकाश को जल्दी से देखकर अपनी सहेलियों को देखने लगी।

आकाश के रोम-रोम में झनझनाहट फैल गई।

जया ने चुटकी काटी, "बड़ी झूठी है। मैं कितनी बार तुम्हें बुला चुकी हूँ। कभी आती भी है। झट से मेरे दोष मढ़ दिया।"

"रहने दो। सफाई देने से कोई लाभ नहीं। प्रत्यक्ष को प्रमाण कैसा?" उसने भी उसके चुटकी काट ली।

"उई।" जया उछलकर सामने वाले सोफा पर जा बैठी, "शैतान।"

नौकर चाय ले आया। तदुपरान्त सैन्डविचेज़, पेस्ट्रीज़, नमकीन और मिठाइयाँ आई। नाश्ता का दौर चलने लगा। बीच-बीच में आकाश आँखें बचाकर मधु को देख लिया करता था। कभी-कभी आँखें मिल भी जाती थीं और कभी नहीं भी मिलती थीं, परन्तु जब मिलतीं तो आकाश को मालूम पड़ता था कि मधु की आँखों में भी उसकी तलाश है। उसका हृदय गद्गद् हो उठता था। वह बातचीत कम कर रहा था। अधिक वार्ता उमेश, मधु और जया के बीच चल रही थी। मधु की सहेलियाँ भी कम बोल रही थीं। स्वाभाविक भी है। प्रथम परिचय में केवल संकोच खुलता है।

चाय समाप्त हुई। मधु अपनी माताजी को लिवा लाई। परिचय कराया। वह बैठ गईं। उमेश से आग्रह के स्वर में कहा गया। उसने कविता पाठ आरम्भ किया। एक के बाद एक करके उसने चार कविताएँ सुनाईं। बड़ी प्रशंसा हुई। जोशीली कविताएँ होने के कारण मधु की माताजी ने भी पसन्द किया। उमेश ने इतिश्री की, किन्तु मधु की माँ ने एक और सुनाने की इच्छा प्रकट की। उसने सुना दी। कविता समाप्त होते ही वह उठकर चली गई। सम्भवतः कोई आ गया था, उनके जाते ही मधु के नेत्र आकाश से जा मिले। उमेश सब ताड़ रहा था और मन-ही-मन प्रसन्न हो रहा था।

आकाश ने उमेश का हाथ दबाकर अभी कुछ देर और रुकने का संकेत किया। उमेश समझ गया। उसने मधु से कहा, "अब एक मेरा भी आग्रह है। कहिये तो कहूँ?"

"किसी और दिन के लिए रहने दीजिये।" मधु समझ गई, "फिर कभी सुना दूंगी।"

"यह तो अन्याय है।" उमेश ने मधु की सहेलियों की ओर देखा, अब आप लोग मेरी तरफ से तो कहिये। मैंने मधुजी के वायलिन की बड़ी प्रशंसा सुन रखी है।"

सबने मधु को विवश किया। उसे नौकर से वायलिन और तबला मँगवाना पड़ा। उमेश ने तबला मिलाया और मधु वायलिन पर किसी सिनेमा के गीत की धुन बजाने लगी। आँखें आकाश से मिलती रहीं। चाह बढ़ती रही।

मधु ने कई धुनें बजाई और तब कार्यक्रम समाप्त हुआ। प्रशंसा सबने की, परन्तु आकाश ने विशेष रूप से की और आँखें मिला-मिला कर की। इस बहाने वह मधु की ओर अधिक देर तक देख सकता था। मधु की सहेलियाँ चली गईं। उसने नौकर को आवाज़ देकर ताँगा लाने के लिए कहा। ताँगा आ गया। वह फाटक तक छोड़ने आई। आकाश ने पूछा, "दुबारा वायलिन सुनने का सौभाग्य कब प्राप्त होगा?"

"आप तो मुझे बनाने लगे। ऐसी वायलिन बजाने वाली मैं नहीं हूँ।"

"बजाने वाले से सुनने वाले का अन्दाज़ ज्यादा वक़त रखता है, मधुजी। तो क्या निकट भविष्य में उम्मीद करूँ?"

उमेश ने आकाश का समर्थन किया, "परसों छुट्टी है। दिन में आइये न। क्यों जयाजी?"

"मैं तो कहने से रही। बहुत बार कह चुकी हूँ। तबीयत हो आये, तबीयत हो न आये।" जया गभीर हो गई।

मधु उसके गले से लिपट गई, "तुम तो सचमुच नाराज़ हो उठी। परसों दो बजे तक आऊँगी। बस, अब तो खुश हो?" वह अलग हो गई।

जया ताँगे पर आकर बैठ गई। उमेश और आकाश भी बैठ गये। नमस्ते के लिए सबके हाथ जुड गये। ताँगा चल पड़ा।

आकाश आगे की सीट पर बैठा सामने देखता हुआ मौन था। पीछे उमेश ने जया के संग चुहलबाजी आरम्भ कर दी थी और वह आँखों से डाँटती हुई चुपचाप भले आदमियों की भाँति बैठे रहने का दिखावा कर

रही थी।

कटरा आ गया। गली के सामने ताँगा रुका। जया उतरकर चली गई। उमेश ने ताँगे वाले को पैसे देकर विदा किया। आकाश उमेश की कमर में हाथ डालता हुआ उछल पड़ा, "क्यों बाबू, पड़ाव मार लिया न ?"

"लेकिन किसकी मेहरबानी से ? एहसान तो मानो। तुम्हारी हरकत मैं सब ताड़ रहा था।"

"और उसकी ?"

"उसकी भी।"

"अब तुम्हारा क्या अनुमान है ?"

"सफलता मिल जाएगी।"

"एक बात मेरे दिमाग में और आई है।"

"क्या ?"

"मैटनी शो का प्रोग्राम क्यों न बना लिया जाए ? सब काम फिट हो जाएगा।"

उमेश क्षण-भर सोचता रहा, "मुश्किल है। शायद जया की दीदी राज़ी न हों।"

"तुम कोशिश तो करो। न होंगी तो फिर कुछ और सोचा जाएगा।"

"ठीक ! परसों तुम एक-डेढ़ तक आ जाना।"

"आजाऊँगा ! अब ?"

"अब कुछ नहीं। आप घर जाइए।"

१४

उमेश को सिनेमा वाला प्रोग्राम पसन्द आया था। वह स्वयं जया के संग पिक्चर देखने के लिए बड़ा उत्सुक था। यह अवसर उपयुक्त था।

इसलिए उसने दूसरे दिन सन्ध्या को इसकी चर्चा जया से की। पहले तो जया इन्कार करती रही, परन्तु बार-बार उमेश के कहने पर तैयार हुई। पर मधु भी तैयार हो सकेगी—इसमें उसे सन्देह था।

"वह तैयार हो जाएगी। इसे आप पक्का समझिए।" उमेश ने कहा।

"आप तो इस तरह कह रहे हैं, जैसे आपकी उससे बात तय हो गई हो।"

"खैर, मुझसे नहीं तो आकाश से तय हो गई है।"

"क्या ? सपना तो नहीं देख रहे हैं ?"

"जी नहीं। वास्तविकता बता रहा हूँ। उस दिन आपने सम्भवतः ध्यान नहीं दिया था। अगर सिनेमा का प्रोग्राम बनाया गया तो वह इन्कार नहीं करेगी।"

"आप लोगों में बस यही तो कमज़ोरी है। किसी लड़की ने दो-चार बार देखा नहीं कि झट से उसका मतलब कुछ और लगाने लगे। अभी··· ।"

"खैर, इस पर बहस तो मैं करना नहीं चाहता। कल प्रस्ताव रखकर देख लीजिएगा। अगर तैयार हो गई तो मेरी बात की पुष्टि भी हो जाएगी और आपके संग पिक्चर भी देख लूँगा और नहीं तो नहीं है ही।"

"दीदी के लिए क्या होगा ?"

"मधु के कहने पर आपकी दीदी भी अनुमति दे देंगी।"

वह क्षण तक सोचती रही, "देखिए! वह क्या कहती हैं। मगर आपके आकाश साहब भी बड़े घुटे निकले ?"

"और आपकी मधु ?" वह हँसने लगा।

जया मुँह बनाकर तानपूरा खोलने लगी।

× × ×

दो बजे के लगभग सजी-सजाई मधु जया के घर आई। आकाश पहले से आ चुका था। वह मधु को देखता रह गया। बड़ी सुन्दर लग रही थी। जैसा नाम था वैसी ही वह थी। थोड़ी देर तक सब बैठे इधर-उधर की बातें करते रहे, तदुपरान्त जया ने सिनेमा का प्रस्ताव रखा। मधु ने इन्कार

उमेश के पास आ गया। दोनों एक-दूसरे को देखकर मुस्कराए। आकाश ने चायवाले को बुलाकर चाय और पेस्ट्रीज़ के लिए कहा और पिक्चर की बात छेड़ दी। इसके अतिरिक्त और कोई बात तो हो भी नहीं सकती थी।

बेयरा चाय लेकर आया। आकाश ने अपने हाथ से प्याला लेकर मधु को दिया। उसने प्याला पकड़ लिया, परन्तु उसकी ओर देखा नहीं। जया से ही बातें करती रही। विज्ञापन दिखाए जाने लगे। आकाश अपनी प्याली और दो पेस्ट्रीज़ लेकर कुर्सी पर आ बैठा। "लीजिए" उसने मधु से कहा, "यह आपका शेयर है।" उसने पेस्ट्री उसके हाथ में थमायी।

"थैंकयू! मैं नहीं खाऊँगी। तबीयत नहीं हो रही है।"

"फिर मैं भी न खाऊँ?"

"क्यों? आप खाइए न!" उसने गर्दन मोड़कर देखा और तत्क्षण सामने देखने लगी।

आकाश ने उसके हाथ में पेस्ट्री ज़बर्दस्ती रख दी, "खाइए।"

मधु चुप रही। तस्वीर शुरू हो गई। आकाश ने पुनः मधु का हाथ अपने हाथों में कर लिया। सिनेमा चलता रहा।

खेल समाप्त होने पर नीचे आकर ताँगा किया गया। तीनों बैठ गए। आकाश रुक गया। "आप आकाश बाबू···।" जया ने पूछा।

"लौटकर फिर यहीं आना होगा। चर्च के आगे," उसने उँगली से संकेत किया, "मेरा बँगला है। हाँ, अगर उमेश लौटकर आने को कहें तो···।"

"जी नहीं। अब मैं लौटकर नहीं आने का। आप तशरीफ का टोकरा ले जाएँ। चलो ताँगे वाले।"

"अच्छा," उसने जया को हाथ जोड़े और फिर मधु को।

मधु ने भी हाथ जोड़े। दोनों के नेत्र मिले और उस क्षणिक मिलन में मधु की आँखों ने आकाश से और आकाश की आँखों ने मधु से कुछ कह दिया।

आकाश मुड़ गया, परन्तु दस कदम चलकर उसने पुनः मुड़कर देखा। जाते हुए ताँगे में मधु उसे देख रही थी। ऐसा उसे प्रतीत हुआ। उसके अंग-अंग में प्रसन्नता की लहर दौड़ गई। प्रसन्नता की क्या सीमा

सकती है, आज प्रथम बार उसे उसका आभास मिल सका था। वह सड़क के किनारे-किनारे कल्पनाओं में खोता हुआ घर की ओर बढ़ चला।

१५

रात में भोजन के उपरान्त जब मधु अपने कमरे में किताब खोलकर पढ़ने बैठी तो अचानक उसकी एक हथेली अपनी दूसरी हथेली और उँगुलियों को दबा कर किसी आनन्द का अनुभव करने लगी। पुस्तक सामने खुली की खुली रह गई। कल्पनाओं का सृजन होने लगा। आकाश संवरने लगा। उसकी सम्पूर्ण विशेषताओं पर विचार होने लगा और जितना अधिक विचार होता गया, प्रेम के संसार का रूप उतना ही विस्तृत होता गया। वह अपने को भूल गई। कल्पनाओं से उत्पन्न मादकता में अपनी सुध-बुध खो बैठी और घंटों खोई रही। क्यों न खोती? कल्पना में वास्तविकता से अधिक टीस और गुदगुदाकर सुख देने की शक्ति है न, और फिर यौवन के प्रथम प्रेम की कल्पना में। बड़ा नशा है। असुन्दर तो वहाँ कुछ दिखता ही नहीं।

दूसरे दिन कालेज में जया ने छेड़ा, "रात में नीद नहीं आई शायद?"

मधु अनजान-सी बोली, "आजकल तुम्हें नहीं आ रही है न इसीलिए सबकी आँखों से वैसा आभास मिल रहा है। मुझे क्यों न आती? मैं इन चक्करों में नहीं पड़ती।"

"सही है। तभी तो बगल में बैठकर फुसफुसाहट होती रही और एक दूसरे के हाथ को दबाये···।"

"हट।" वह जया के गाल पर हलकी चपत लगाकर भागी।

जया ने उसकी चोटी पकड़ ली, "मैं नस-नस पहिचानती हूँ। मुझसे

छिपाने की क्या आवश्यकता है ? और क्या-क्या हुआ कल ?" वह हँसने लगी।

"तुम्हारा सिर, और क्या होता ?"

जया पुनः हँसने लगी और उसका हाथ पकड़कर पीछे एक खाली दर्जे में जा बैठी। फिर बड़ी देर तक दोनों सहेलियों में हँस-हँसकर बातें होती रहीं। मधु ने सब कुछ विस्तारसहित बताया, "अब आज भेंट कैसे होगी ?" जया ने पूछा।

"मैं क्या जानूं ? यह कोई मेरे सोचने की चीज़ है ?"

"तुम नहीं सोचोगी तो क्या आकाश के सोचने से हल निकलेगा ?"

"और तुम्हारे सोचने से ?" मधु ने ठीक कहा था।

जया मुस्कराई, "समझी। पहेली क्यों बूझनी हो ? साफ-साफ कहने में शर्म लगती है ?" उसने उसके गाल को नोच लिया, "बड़ी उस्ताद है।"

"शिक्षा तुम्हारी है। क्या सोचा है तुमने ?"

"बताएँगे। अभी जल्दी नहीं। चलो घंटा बोलने वाला है।" वह खड़ी होगई। शाम को उमेशसाहब कुछ-न-कुछ चर्चा करेंगे ही।

× × ×

ठीक इसी प्रकार की वार्ता कायस्थ पाठशाला में चारों मित्रों के बीच चल रही थी। आकाश सिनेमा वाली अपनी सारी हरकतें एक-एक करके बतला रहा था। सम्पूर्ण वृत्तान्त समाप्त होने पर प्रश्न उठा आगे के कदम पर। क्या होना चाहिए और किस प्रकार होना चाहिए, आकाश ने उमेश से राय माँगी।

"अब मुझसे कोई मतलब नहीं। आप जानिये और आपका काम जाने। जितना करना चाहिए था उतना कर दिया। ठीक है ? हरनाथ !" उमेश बोला।

हरनाथ के कुछ कहने के पूर्व ही आकाश बोल उठा, "मुझ पर रोब तो डालिए नहीं। अब मैं आपकी आरज़ू मिन्नतें नहीं करने का। मेरा डौल फिट है। मधु से मिलने की बात पक्की हो गई है।"

"ऐसी तो आपकी सूरत है ही। बहुत ऐंठिये नहीं वरना पत्ता कटवाते मुझे बहुत देर नहीं लगेगी।" उमेश ने धमकी दी।

"तो मैं भी तुम्हारा पत्ता कटवा सकता हूँ। जया को भड़काने में बहुत समय नहीं लगने का। फिर बेवकूफों की भाँति टोपी लगाये सड़क पर ख़ाक छानते ही नज़र आओगे। देखते नहीं, जया कितनी मुहब्बत भरी नज़र से हमें देखती है?"

सब हँस पड़े और पुनः सोचने लगे कि किस प्रकार मधु और आकाश की एकान्त में भेंट सम्भव हो सकेगी।

तीन-चार दिनों बाद एक छुट्टी पड़ी। जया ने मधु को दोपहर में बुलवा भेजा। उधर उमेश ने आकाश से कह रखा था। मधु आई और उसके आध घंटे बाद आकाश भी आ गया। इधर-उधर की बातें होने लगीं। मधु इस समय आकाश की ओर देखने में कुछ झेंप-सी रही थी। अनमनी-सी मधु जया से बोली, "मुझे बुलवाया क्यों था?"

"अपना गाना सुनाने के लिए। मेरा अभ्यास कितना बढ़ गया है तुम्हें मालूम है?"

"तो फिर सुनाओ। देर किस बात की। तुम्हारे बाद उमेशबाबू सुनायेंगे। निकालो तानपूरा।"

"निकालती हूँ। पहले चाय का तो प्रबन्ध कर लूँ।"

"चाय बाद में। अभी तबीयत नहीं हो रही है।"

"हो जायेगी। पहले चाय तो सामने आये।" वह उठकर चली गई।

"तो फिर आप उमेशबाबू। तानपूरा उठाऊँ?"

"मैं उठाये लेता हूँ।" उसने तानपूरा उतार कर सामने रखा ही था कि नौकर ने आकर कहा कि बीबी जी (जया) बुला रही हैं।

"अभी आया।" उमेश ने मधु से कह कर नीचे आ गया।

कमरे में कुछ क्षणों तक निस्तब्धता बनी रही। मधु सिर झुकाये बैठी थी और आकाश उसे देख रहा था। वार्ता किस प्रकार आरम्भ की जाय, यही वह सोच रहा था। बहुत कुछ सोचने के उपरान्त उसके मुँह से निकला "उस दिन की पिक्चर पसन्द आई?"

"हाँ, अच्छी बनी है।" मधु ने गर्दन उठाई। क्षणभर के लिए नेत्र मिल गये। "और आपको?" पुनः उसकी दृष्टि नीची हो गई।

"क्या बताऊँ? मन से चाह रहा था कि कभी समाप्त ही न हो, लेकिन

चाहत पूरी कहाँ होती है। अपनी तक़दीर तो……।"

"तो क्या आप दिन-दो दिन देखते रह जाते ?"

"दिन-दो दिन क्या, अगर आपके साथ बैठकर देखने का मौका मिले तो ज़िन्दगी भर देखता रह सकता हूँ।"

मधु मन ही मन खिल उठी परन्तु ऊपरी भावों में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं आने दिया "अच्छा हुआ जो आपने सचेत कर दिया। अब दूर ही दूर रहूँगी अन्यथा अधिक सम्पर्क बढ़ने पर बहुत सम्भव है आप वाली आदत मेरे गले न पड़ जाय ?"

"लेकिन अब तो शायद पड़ कर ही रहेगी।"

"क्यों ?"

"इसमें यही तो खराबी है। आप जितनी कोशिश बचने की करेंगी यह उतनी ही चिकपती चली जाएगी।"

मधु ने अनूठे ढंग से आकाश से आँखे मिलाईं, "ऐसा ?"

"जी हाँ। ऐसा ही है। यह मैं निजका अनुभव कह रहा हूँ।"

"तो फिर उससे बचने की कोशिश न की जाए ?"

"मेरा ख्याल ऐसा ही है। आपको तो मेरे रास्ते को अपनाते हुए बचने का प्रयत्न करना चाहिए। आप बेदाग़ निकल भी सकती हैं।"

"किन्तु आप तो निकल नहीं पाये ?" मकड़ी के जाले की भाँति दोनों प्यार के जाल को फैलाकर स्वयं उसमें फँस जाना चाहते थे।

"मैं कैसे निकलता ? मेरी चाहत और आपकी चाहत में अन्तर है। मैं सम्पर्क के संग-संग जीवन पर्यन्त की आकांक्षा रखता हूँ और आप केवल सम्पर्क रखना चाहती हैं। आप सम्पर्क बनाए रखिये। किसी प्रकार की उलझन नहीं होगी।"

मधु मुसकराने लगी "वास्तव में आपका प्रस्ताव मानने योग्य है।" वह खड़ी हो गई।

"अररररर…बैठिये तो सही। खड़ी क्यों हो गई ?"

"देखूँ जया क्या कर रही है ? गई तो फिर लौटने का नाम ही नहीं लिया। अभी आती हूँ।" उसने पैर उठाए।

"आती होगी। आप बैठिए तो।"

"देख लूँ। बहुत देर नहीं लगेगी।" वह चलने को हुई।

आकाश झट से उठकर दरवाज़े के सामने आ गया। "अब आप कैसे जा सकेंगी? वैसे नहीं तो ऐसे सही।"

मधु और आकाश के नेत्र क्षणभर के लिए एक दूसरे में समा गए। पुरुष की कामना बढ़ी। उसने आगे बढ़कर अपनी भुजाओं में आबद्ध कर लेना चाहा। मधु गर्दन हिलाती हुई पीछे हट गई, "नहीं।" वह बगल से होकर बाहर निकल गई।

१६

दूसरे दिन कालेज में मधु ने जया से सब कुछ बतलाया और उधर आकाश ने अपने मित्रों से। हरनाथ खुश हुआ "लड़की कायदे की है। अच्छी डाँट बताई। तुम्हें तो चिल्लू भर पानी में डूब मरना चाहिए।"

"बिल्कुल डूब मरना चाहिए। लड़की की ऐसी हिम्मत?" उमेश ने हरनाथ को पुट पर रखा।

"तुम चुप रहो।" हरनाथ ने डाँटा "तुम तो साले बिल्कुल पतित हो। और तुम्हारी वह जया भी। मधु को देखो। आकाश को डाँट भी बतलाई और कमरे से बाहर भी चली गई।"

"अबे बौड़म", आकाश हँस रहा था "इसमें डाँट की कौनसी बात है? कभी प्रेम किया हो तो तुझे अन्दाज़ हो। ये नखरे हैं नखरे। मुहब्बत की दुनिया में इन्हीं चीज़ों का मज़ा है। तुझे यह सब नसीब नहीं होने का।"

"यह बेटा दूसरों को पतित ही कहते रह जाएँगे और ज़िन्दगी भी खत्म हो जाएगी", इस बार उमेश ने आकाश का पक्ष लिया "भाग्य में इनके यही बदा है तो हम लोग क्या करें? इनके लिए प्रयत्न करना भी बेकार है।"

सन्तबक्स ने हरनाथ के पुच्चक रखा, "तुम इनके पचड़े में पड़कर

अपनी भावनाओं को क्यों दूषित करते हो हरनाथ। ब्रह्मचारी के लिए ऐसी बातें वर्जित हैं। उठो चलें। इनके पास और कोई टॉपिक तो है नहीं। जब देखो तब वही बात। और यह उमेश? खद्दर पहिनकर खद्दर को अपवित्र करता है।"

उमेश और आकाश हँस पड़े। परन्तु हरनाथ जान बूझकर गंभीर बन गया, "इसमें हँसने की क्या बात है? ठीक तो कह रहा है। हद हो गई बेहयाई की! चलो चलें सन्तबक्स। इन सालों के पास बैठना भी पाप है।"

"जल्दी जाओ तो हमारी और उमेश की कुछ बातचीत भी हो। बेकार में दिमाग पच्चकर कर रखा है।'

"सुन लो हरनाथ", सन्तबक्स पुनः बोला "उलटा चोर कोतवाल को डाँटे। आओ चलें।"

हरनाथ उठकर चल दिया।

आकाश चिल्लाया "जेर है। जेर है।"

सन्तबक्स और हरनाथ सिर नवाकर हँसते हुए आगे बढ़ गए।

आकाश और उमेश के बीच पुनः मधुवाली चर्चा आरम्भ हुई "अब क्या होगा उमेश?"

"क्या बतावें? उस दिन तुम चूक गये। पुनः मिलने वाली बात तो तय कर लेनी ही थी। अब कौन-सा रास्ता निकाला जाए यही मैं सोच रहा हूँ।"

"कल-परसों में उसे अपने यहाँ फिर क्यों नहीं बुलाते? उसके आने में किसी प्रकार का सन्देह तो है नहीं?"

"सन्देह तो नहीं है, लेकिन वह ठीक न होगा।" वह कुछ सोचने लगा। दो-चार मिनट बाद वह बोला, "तुम कल स्वयं उससे क्यों न मिलो?"

"कहाँ?"

"रास्ते में। देखो कैसा रिसपान्स मिलता है। वह अकेले रिक्शे से जाती भी है।"

आकाश ने सिर हिलाया, "यह भी हो सकता है। हालाँकि कुछ रिस्की है। मुमकिन है वह बुरा मान जाए।"

"ऊँहू, तुम कल मिलकर तो देखो।" फिर कब, किस समय, किस

स्थान पर और किस प्रकार वह मिले, इस पर विस्तार पूर्वक बड़ी देर तक वार्ता होती रही।

दूसरे दिन आकाश गवर्नमेण्ट हाउस के पास साईकिल लिये खड़ा था। थोड़ी देर में मधु रिक्शे पर आती हुई दिखाई पड़ी। वह साईकिल पर चढ़-कर धीरे-धीरे चलने लगा। मधु का रिक्शा बँगले में आया। दोनों ने एक दूसरे को देखा। आकाश नमस्ते करना चाहता था परन्तु रुक गया। मधु ने तत्काल गर्दन झुका ली थी। आकाश फिर भी रिक्शे के बगल में चलता रहा। वह बार-बार अपने कोट की जेब में हाथ डालता और निकाल लेता। सम्भवतः हिम्मत नहीं पड़ रही थी, किन्तु अन्त में उसके निर्णय ने उसकी हिम्मत पर विजय पाई। उसने इधर-उधर देखा और झट से कोट की जेब से चिट्ठी निकालकर रिक्शे में डाल दी। रिक्शा आगे बढ़ गया। वह रुक गया। उसे दूर से अनुमान लगा कि मधु चिट्ठी उठाकर पढ़ रही है। उसे संतोष के साथ-साथ प्रसन्नता अधिक थी।

पत्र में लिखा था—

"...आज शाम को ७ बजे आपके बँगले के पास मैं आपकी प्रतीक्षा करूँगा। दो मिनट मिलने का कष्ट करें।"

....

मधु ने पत्र पढ़ा और फाड़कर फेंक दिया।

संध्या को आकाश, मधु के बँगले के समीप अँधेरे में प्रतीक्षा करने लगा। सात से साढ़े सात बजे और फिर आठ बज गया। मधु नहीं आई। हृदय ऐंठने लगा, फिर भी आशा की किरण शेष थी। शायद किसी कारणवश अवसर न लग पाया हो। अभी आ सकती है। आठ से साढ़े आठ बजे। भोजनोपरान्त मुहल्ले के बुजुर्ग टहलने निकल पड़े थे। आशा जाती रही। वह दुखी मन मुड़-मुड़कर देखता हुआ लौट पड़ा। रास्ते भर पक्ष-विपक्ष के तर्क मस्तिष्क को मथते रहे।

रात में सोते समय आकाश के दिमाग में एक बात और आई। वह उठकर बैठ गया। टेबिल लैम्प जलाकर उसने मधु को दूसरा पत्र लिखा—

मधुजी,

मैंने कल नौ बजे रात तक आपकी प्रतीक्षा की, परन्तु दुर्भाग्यवश

आपके दर्शन न हो सके। किसी को बनाकर बिगाड़ना अच्छा नहीं होता। आज पुन: मैं प्रतीक्षा करूँगा। केवल दो मिनट का समय चाहता हूँ—अधिक नहीं।

आकाश

दूसरे दिन फिर आकाश साईकिल लिये गवर्नमेंट हाउस के सामने खड़ा था। मधु का रिक्शा आया। दोनों ने एक-दूसरे को देखा। मधु के चेहरे से आकाश को इस प्रकार का कोई भी संकेत न मिल सका, जिससे उसके असंतुष्ट होने का भाव विदित होता हो, उसे संतोष हुआ और तत्काल मन ने दलील रखी, किसी कारणवश ही कल उसका आना न होसका होगा। उसने साईकिल बगल में लगाकर चिट्ठी डाल दी और बाँई ओर सड़क से कायस्थ पाठशाला को मुड़ गया।

बड़ी प्रतीक्षा के उपरान्त संध्या आई। आकाश सात वजते-बजते कल वाले स्थान पर आकर खड़ा हो गया। प्रतीक्षा होने लगी। एक-एक मिनट एक-एक वर्ष के समान बीतने लगे। साड़े सात बज गये। मधु नहीं आई। आठ बज गये। मधु नहीं आई। कल वाला समय भी आ गया। मधु नहीं आई। उसे लौटने के लिए विवश हो जाना पड़ा। मीलों पैदल यात्रा करने के उपरान्त जो पैरों की दशा होती है, वही दशा इस समय आकाश के पैरों की थी। वह रुक-रुक उठने लगे।

घर आकर उसने खाना नहीं खाया और कुछ ढीली तबीयत बताकर पड़ रहा। रात भर नींद नहीं आई।

आज सबसे पीछे आकाश कालेज पहुँचा था—एक घंटे बाद। कालेज में तीनों उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उमेश को जया से सारी बातें मालूम हो चुकी थीं। और उसने कालेज में आते ही हरनाथ और सन्तबक्स को बता दिया था। आकाश को घिसने के लिए आज हरनाथ के पास काफी मसाला था।

आकाश को देखते ही हरनाथ ने ठिठोली की, "अब तो रात के नौ-नौ बजे तक लोग-बाग सड़कों के चक्कर लगाया करते हैं और अन्त में बेवकूफों की तरह लौट आते हैं। मुहब्बत की दुनिया में ऐसे ही नखरे होते हैं। क्यों बाबू? ज़रा आपकी सूरत देखिए। मधु इन पर मरती है। उमेश तुमने

भी इसे खूब बुद्धू बनाया। बड़े इश्कबाज़ बनते थे। जीवन-भर बच्चू याद रखगें।" वह ठहाका मारकर हँस पड़ा।

उमेश बोला, "इसकी भी तो ग़लती है हरनाथ! इसे चिट्ठी लिखने के लिए किसने कहा था। और मज़ा यह कि मुझसे ज़िक्र तक नहीं किया।"

"खैर, गलती-सही से तो मुझे कुछ मतलब नहीं, लेकिन इतना मैं अवश्य कह सकता हूं कि, 'एक ढूंढ़ों हज़ार मिलते हैं' वाली संख्या अब बढ़कर एक हज़ार एक होगई है।"

आकाश चुपचाप सुनता रहा। वह बोलना नहीं चाहता था। उसका जी दुखी था।

अब सन्तबक्स का नम्बर आया, "आज तो रहम खाओ हरनाथ। देखते नहीं बेचारे की कैसी दशा हो रही है। जैसे सैकड़ों पड़ गए हों।"

हरनाथ पुनः हँसने लगा। तब तक टन-टन-टन करके घंटा बोला। सब क्लासों में चल दिए।

बीच में कोई घंटा खाली नहीं था। पढ़ाई होती रही। छुट्टी होते ही पुनः आकाश घिसा जाने लगा। आकाश चुपचाप सुनता रहा। वह आज बोलने की स्थिति में नहीं था।

काफी देर बाद उमेश ने हरनाथ को चुप होजाने का संकेत किया और आकाश से बोला, "आओ, हम लोग कम्पनी बाग चलें।" उसने सन्तबक्स और हरनाथ से कहा, "आप लोग जा सकते हैं।"

"ठीक है। सम्भवतः वहाँ की शीतल वायु मस्तिष्क को ठंडक दे सके। जाइए।" हरनाथ, सन्तबक्स को लेकर मुड़ पड़ा, परन्तु दो कदम चलकर फिर रुक गया। "लेकिन आकाश, अब दुबारा उमेशवा के चक्कर में न आना। सारी बदमाशी इसी की है। समझ गए न?" वह हँसता हुआ मोटर में सन्तबक्स के संग जा बैठा।

आकाश और उमेश कम्पनी बाग को चल पड़े।

कम्पनी बाग के मध्य में छोटे-छोटे लाल पत्थर के खम्भों के सहारे मोटे-मोटे लोहे के छड़ों से घेरकर एक गोलाकार स्थान बना है। वहाँ चारों ओर लोहे की लम्बी-लम्बी बेंचें रखी हैं और किनारे-किनारे पर विभिन्न प्रकार के फूलों की क्यारियाँ हैं। इस गोलाकार स्थान से कुछ फासले पर

एक किनारे जार्ज पंचम की विशालकाय श्वेत संगमरमर की मूर्ति है। आकर्षणवृद्धि के अभिप्राय से चारों ओर काफी बड़े क्षेत्रफल में लताओं और कुंजों का प्राकृतिक ढंग से निर्माण किया गया है। वियोगी और संयोगी दोनों के लिए यह स्थान सुख और शान्ति देने वाला है। यहीं एक कुंज में उमेश आकाश के साथ आकर बैठ गया।

"यहाँ आने का मतलब ?" इतनी देर बाद आकाश बोला था।

"थोड़ी देर सब्र करो। सब मालूम हुआ जाता है। इस रोनी सूरत पर प्रसन्नता लाने के लिए कुछ-न-कुछ प्रवन्ध तो करना ही होगा।"

आकाश चुप हो गया।

अभी मिनट-दो मिनट ही बीते होंगे कि मधुर खिलखिलाहट की ध्वनि कानों में पड़ी, "लो आगई," उमेश मुस्कराया, "अब आज न चूकना। मैं जया को लेकर दूसरी ओर चला जा रहा हूँ," दोनों खड़े हो गए।

जया और मधु आईं। जया ने मुस्कराते हुए आकाश की नमस्ते का उत्तर दिया और फिर वह उमेश से बोली, "आप उस दिन किसी पौधे के विषय में कुछ कह रहे थे न ?"

"उधर है। आइए दिखाऊँ।" वह भट से मुड़ गया। जया भी पीछे-पीछे चली गई।

आकाश गर्दन भुकाए खड़ा था। मधु ने मौनता भंग की, "आप तो मुझसे बड़े नाखुश होंगे !"

"नहीं। नाखुश क्यों होंगे ? मेरी नाखुशी से किसी का बनना-बिगड़ना होता तो यह भी कर लेता। खैर ! आप अच्छी तरह हैं ?"

"मेरी तरफ देखिए।"

"क्यों ?"

"देखिए न।"

आकाश ने गर्दन उठाई।

"क्रोध आने से सुन्दरता बढ़ जाती है," वह होठों में मुस्कराई, "मेरा वहाँ आपसे मिलना उचित नहीं था। इस कारण मैं नहीं आई और कल इसलिए नहीं आना हो सका कि आज यहाँ आने का निश्चय कर लिया गया था। जया की ऐसी ही राय थी।"

आकाश की सारी नाराज़गी खत्म हो गई, "आइये उधर बैठें," उसने प्रस्ताव रखा।

"नहीं। देर हो जाएगी। रिक्शेवाला सड़क पर खड़ा है। और किसी दिन...।"

"कब ?"

"किसी दिन भी।"

"कालेज से दोपहर में निकल सकती हैं ?"

मधु ने गर्दन हिलाई।

"तो कल दोपहर में बारह बजे आप यहाँ आएँगी ?"

"कल नहीं, परसों। अब तो आप खुश हो जाइए।"

"अभी नहीं। परसों के बाद। वह मधु को निहारने लगा।

"उमेश बाबू को पुकारिए न।" उसने आँखें नीची कर लीं।

आकाश का हृदय झूम उठा। उसने आवाज़ दी, "उमेश।"

१७

मधु ने सिर में दर्द का बहाना बनाकर कालेज से छुट्टी ली और बाहर निकली। सड़क पार किया और कम्पनी बाग में घुस गई। सड़क पार महिला विद्यापीठ है और उस पार कम्पनी बाग की हद। कम्पनी बाग बड़े लम्बे-चौड़े क्षेत्र में बना हुआ है। मधु लम्बे-लम्बे पैर रखती हुई चली जारही थी। बारह से अधिक का समय हो गया था। गोल घेरे से वह उधर को मुड़ी ही थी कि सामने मूर्ति के पास आकाश बैठा हुआ दिखलाई पड़ा। आकाश ने मधु को देखा और खड़ा हो गया। मधु तनिक सकुचाती हुई समीप आई। उसका हृदय धक-धक कर रहा था।

"इधर आइये।" आकाश मूर्ति के पिछले भाग की ओर मुड़ा।

"यहीं बैठिए।"

"नहीं। उधर बैठेंगे।"

दोनों सघन झाड़ियों की झुरमुट में आकर बैठ गए। "जल्दी बताइए। किसलिए बुलाया है ?" मधु की घबराहट स्वाभाविक थी।

आकाश उसकी मनोदशा को देखकर हँस उठा, "इतनी जल्दी में अगर बताने वाली बात होती तो यहाँ बुलाने की क्या आवश्यकता थी ? उसी दिन कह दिया होता। जब लगातार चार-छः दिनों तक आप इसी प्रकार आती रहेंगी तब कहीं पूरी हो पाए तो हो पाए।"

"तब तो मैं आ चुकी," उसने गर्दन मटकाई, "मेरे पास इतना समय फालतू नहीं है। आप नाराज़ थे इसलिए आगई, अन्यथा कभी नहीं आती।"

"चलिए, एक तरकीब मालूम हुई। जब बुलवाना होगा तो नाराज़ हो जाया करूँगा।"

मधु ने मुँह बनाया और उठने का भाव प्रदर्शित किया। "अब जा रही हूँ।"

आकाश ने उसका हाथ पकड़ लिया। दोनों के शरीर में बिजली दौड़ गई। मधु गर्दन झुकाती हुई बोली, "छोड़िए।" उसने हाथ खींच लिया।

मिनट-दो मिनट के लिए निस्तब्धता फैल गई। दोपहरी का सन्नाटा उभर आया। चिड़ियों की चहचहाहट छा गई। आकाश ने मौनता भंग की, "मैं तुम्हारा प्रेम पा सकता हूँ मधु ?"

वह चुप रही।

तुम्हें अनुमान न होगा, जब से तुमसे भेंट हुई है मैंने कितनी रातें तुम्हें सँवारने में बिताई हैं। मेरी पढ़ाई-लिखाई सब खत्म हो गई है। तबीयत होती है कि दिन-रात तुम्हें अपने पास बनाए रखूँ, किन्तु भाग्य ऐसा अवसर दे सकेगा, ईश्वर के अलावा और कौन बता सकता है ?" उसने एक लम्बी साँस खींची, "खैर, जितना मुझे मिला है, उसे तो कोई छीन सकता नहीं। जिन्दगी इस पर भी काट लूँगा।" वह चुप हो गया और टकटकी लगाकर मधु को देखने लगा।

क्षण भर के लिए मौनता फैल गई। मधु ने गर्दन उठाई। उसके नेत्र आकाश के नेत्रों में खो गए। परन्तु लज्जा ने बहुत देर तक यह सुख लूटने नहीं दिया। आँखें झुक गईं और वह उँगली से घास कुरेदने लगी, "आप अपने मित्रों की," मधु ने पूछा, "जानकारी में यहाँ आए होंगे?"

"नहीं।"

"फिर?"

"घर का एक आवश्यक काम बताकर चला आया था।"

"लेकिन उन लोगों ने बिना कारण जाने आपको आने कैसे दिया? जया बता रही थी कि आप चारों में बड़ी गहरी मित्रता है। कोई किसीसे कुछ छिपाता नहीं है।"

"हाँ। ऐसा ही है।"

"तब।"

"लौटकर सब बताऊँगा। पहले से जानकारी हो जाने पर हरनाथ आने न देता।"

"क्यों?"

"वह इस तरह के कामों को पाप समझता है।"

"ठीक समझते हैं। इसे तो मैं भी पाप मानती हूँ। जिस काम को छिप-छिपकर किया जाए, वह बुरा तो है ही, और जो बुरा है, वह पाप है।"

"तब तो भगवान कृष्ण भी पापी हुए। वह भी तो छिप-छिपकर गोपियों से मिलते और जंगलों में रास रचा करते थे।" मुस्कान की रेखा आकाश के अधरों पर फैल गई।

"वह भगवान थे। उनकी बात और है। और भगवान न भी हों तो भी इसमें कितनी सत्यता है, इसका क्या प्रमाण। यह तो आप पुरुषों की शैतानी है कि स्त्रियों को बुद्धू बनाकर अपने वश में रखने के लिए भगवान की ओट में इन कुराफातों को गढ़ दिया है।"

"हो सकता है, लेकिन इतना तो आपको भी मानना पड़ेगा कि पचास फीसदी नहीं तो दो फीसदी इन मनगढ़न्त कहानियों में सत्यता होगी ही, क्योंकि जब मधुजी और आकाशजी कालेज छोड़कर कम्पनी बाग के इस

सुन्दर कुंज में मिलने आ सकते हैं, तो कृष्णजी और राधाजी अथवा गोपिकाएँजी जंगलों में मिलकर केलि किया करती थीं, इसमें क्या आश्चर्य है ?" वह हँसने लगा ।

मधु ने मुँह बनाया, "बड़े बेशर्म हैं आप !" वह उठने को हुई, "अब मैं जाऊँगी ।"

आकाश ने पुनः हाथ पकड़ लिया, "लव इज़ ब्लाइन्ड[1] मधुजी और इसी ब्लाइन्डनेस ने प्रेम के उस आदर्श रूप को जन्म दिया है जिसके लिए जीवन तक उत्सर्ग करने में सुख का अनुभव होता है ! है न ऐसी बात ?"

"अन्धेपन में और क्या होगा ?" उसने कटाक्षभरी दृष्टि से देखा, "हाथ तो छोड़िये ।" उसने हाथ खींच लिया, "मुझे ऐसे अन्धेपन की आवश्यकता नहीं । मैं इससे बाज़ आई ।"

"लेकिन जान तो तब बचेगी जब मैं भी बाज़ आऊँ और मैं अब बाज आने से रहा । उँगली पकड़ने में देर लगती है; कलाई तो अपने आप हाथ में आ जाती है ।"

"बातों में आप बड़े चतुर हैं ।" उसने अँगड़ाई ली और खड़ी हो गई, "उठिये चलें । आपके मित्रगण आपकी प्रतीक्षा कर रहे होंगे । जल्दी जाकर सारी बातें बतलाइए । वे लोग भी मेरे विषय में क्या सोचते होंगे ?"

आकाश अभी बैठा रहा । उसने मधु की बातों पर बिना ध्यान दिये पूछा, "क्या जाने की बहुत जल्दी है ?"

मधु ने सिर हिलाया, "दो बज रहे हैं । घर जल्दी पहुँच जाना चाहिए ।"

विवश होकर आकाश को खड़ा होना पड़ा । उसने भी अँगड़ाई ली और इच्छा हुई कि मधु को भुजाओं में समेट ले, परन्तु किसी भय ने ऐसा करने से रोक दिया, "अब कब मुलाकात होगी ?" उसने पूछा ।

"कभी नहीं ।" वह चल पड़ी ।

उमेश भी पीछे-पीछे चलने लगा ।

सड़क पर आते ही मधु ने कहा, "आप उधर से जाइए और मैं इधर ।"

---

१. प्रेम अन्धा है ।

उमेश खड़ा हो गया इस उम्मीद पर कि शायद मधु भी खड़ी हो जाए लेकिन वह खड़ी नहीं हुई और मुँह बिराकर कहती हुई चली गई, "परसों आइयेगा।"

१८

फागुन का महीना आया। होली समीप आई। कालेज बन्द होने लगे। कायस्थ पाठशाला बन्द हुई। उमेश गाँव जाने की तैयारी करने लगा। उसके भइया ने गाँव जाने के लिए ही लिखा था। लगभग तीन वर्ष बाद वह जा रहा था।

कल उसने शाम को चार बजे वाली गाड़ी से जाने का निश्चय किया था। आज सवेरे नौ बजे दिन से लेकर नौ बजे रात तक अपने मित्रों के संग रहना पड़ा। क्या करता सवेरे ही हरनाथ अपनी मोटर लेकर आ गया था। विवश होकर जाना पड़ा वरना आज दिन भर वह जया के पास बैठकर बातें करने के इरादे में था। रात में लौटने पर उसे जया के कमरे की बत्ती बुझी मिली, परन्तु कृष्णमुरारीलाल और उनकी पत्नी अभी जाग रहे थे। उमेश समझ गया कि जया ने क्रोधवश इतनी जल्दी सोने का आडम्बर कर लिया है। उसे अपने ऊपर क्रोध आया। किन्तु अब चारा ही क्या था। वह मन मसोसकर कुछ समय तक कृष्णमुरारीलाल से बातें करने के उपरान्त सोने चला गया।

दूसरे दिन सवेरे जया ने ऐसा रुख अख़्तियार किया कि उमेश बड़ी उलझन में पड़ गया। बोलना-चालना तो दूर सम्भवतः वह उमेश की सूरत भी देखना नहीं चाहती थी। किसी प्रकार का अवसर न मिले इस लिए वह कृष्णमुरारीलाल के पास जा बैठी थी। और खूब हँस-हँस के इधर-उधर की बातें करके उमेश के हृदय पर फफोले उठा रही थी। उमेश

बड़ा परेशान था। उसे जया पर क्रोध आने लगा। साथ ही व्याकुलता भी बढ़ती जा रही थी। अन्त में वह बेशर्मों की भाँति थोड़ी देर तक कृष्णमुरारीलाल के पास भी जाकर बैठा, परन्तु जया के भावों में परिवर्तन होता हुआ न देखकर उसे उठ आना पड़ा। अब क्या करे—वह सोचने लगा।

लगभग दस बजे उमेश ने स्नान किया और भोजनोपरान्त बिस्तर और कपड़ों को ठीक करने लगा। इस काम से छुट्टी मिलने पर उसने नौकर को आवाज़ दी। वह आया। उमेश ने पूछा "भाईसाहब कचहरी चले गये ?"

"हाँ।"

"भाभीजी क्या कर रही हैं ?"

'पांडेजी की बीवी आई हैं। उन्हीं से बातें कर रही हैं।"

"और जया ?"

"वह भी वहीं बैठी हैं।"

"जया से जाकर कहो कि वह गाने वाली कापी लेकर आजाएँ तो कुछ लिखवा दें वरना छुट्टियों में वह अभ्यास क्या करेंगी ? जल्दी भेजो। अभी मुझे एक जगह जाना भी है।"

नौकर गर्दन हिलाता हुआ नीचे आया और उमेश के सन्देश को कह दिया।

"अच्छा।" कहकर जया पुनः बातों में लग गई। वह उमेश की चतुराई को भाँप रही थी।

पन्द्रह-बीस मिनट बीतने पर भी जब जया न उठी तो बातों का क्रम तोड़ते हुए उसकी दीदी ने कहा, "जाकर लिख क्यों नहीं लेती ? उमेश ने अभी कहीं जाना भी तो है।"

जया विवश हो गई। वह मुँह सिकोड़ती हुई उठी, "अच्छी बला मोल ले ली। अब अगले वर्ष नहीं सीखूंगी। दिन-रात अभ्यास।"

"अभी तो जाकर सीखो। अगले वर्ष से न सीखना।" वह पँडाइन की ओर देखकर मुस्कराने लगी।

जया ने कमरे से कापी उठाई और कुछ सोचती हुई सीढ़ियाँ चढ़ने

लगी। उमेश दरवाज़े पर दृष्टि गड़ाए प्रतीक्षा कर रहा था। जया को देखते ही वह कुर्सी से उठ खड़ा हुआ। जया गर्दन झुकाए कमरे में आई और बगल की कुर्सी पर बैठ गई, "लिखवाइए, क्या लिखाना है?" उसने गम्भीरता अधिक बढ़ा ली थी।

उमेश प्रसन्न था। वह अपनी चतुराई में सफल हुआ था। उसने हाथ जोड़े, "कम-से-कम एक बार तो हुजूर की निगाह उठ जाए। फिर तो आज्ञाओं के पालन के लिए यह सेवक खड़ा ही है। रात से परेशान हो रहा हूँ।"

"अगर लिखवाना हो तो लिखाइये, वरना मैं जा रही हूँ। बेकार की बातों से कोई फायदा नहीं।" उसकी गर्दन उसी प्रकार झुकी रही।

"अच्छा, एक बार तो देख लीजिए।"

"क्यों देखूँ? नहीं देखती।"

"प्रार्थी क्षमा याचना कर रहा है, इसलिए। मनुष्यता के नाते इतनी कृपा तो होनी ही चाहिए।"

"चतुर लोग इसी प्रकार की बातें करते हैं। कृपा दृष्टि वाली भूख कल कहाँ थी? आपको मैं खूब समझती हूँ।" जया जाने के लिए खड़ी हो गई।

उमेश ने आगे बढ़कर उसे भुजाओं में खींच लिया और उसकी ठोढ़ी को ऊपर उठाया, "कल की मेरी विवशता तो तुम समझती ही हो? मैं क्या करता?"

जया ने उमेश के हाथ को झिटिक दिया, "यह कौन-सी बदतमीज़ी है?" वह अपने को मुक्त करने का प्रयत्न करने लगी।

उमेश ने और कसकर दबा लिया, "अब?"

"मैं दीदी को पुकारूँगी।"

"पुकारो। मना कौन करता है। आज इसका भी फैसला हो जाएगा। एक-न-एक दिन बात तो खुलेगी ही। आज ही खुल जाए?"

"आपका सिर खुलेगा," जया ने आँखें तरेरीं, "ताक़त है, इसलिए अनुचित लाभ उठाने में झेंप नहीं लगती? बड़े आये। अब मैं अगले वर्ष से यहाँ पढ़ने नहीं आऊँगी।"

"न आना, लेकिन होली बाद तो आओगी ?"

जया ने मुँह बिगाड़कर कहा, "होली बाद तो आओगी ?"

उमेश हँस पड़ा।

जया ने उमेश के हाथों को अलग किया और कुर्सी पर बैठ गई। उमेश भी बगल में बैठ गया। वह अब भी हँस रहा था।

"हँसना बन्द करके लिखवाइए। शायद दीदी आती हों। बहाना ढूँढ़ने में बड़े उस्ताद हैं। जब और किसी तरफ से बस न चला तो यह रास्ता पकड़ा।"

"क्या करता ? सभी प्रयत्न कर डाले थे। तुम कब तक घर जा रही हो ?"

"अभी निश्चित नहीं है। मेरी इच्छा तो है, पर जीजाजी सम्भवतः नहीं जाने देंगे।"

"मुझे पत्र लिखोगी ?"

"क्या आपके लिए गाँव जाना आवश्यक है ? गर्मी की छुट्टियों में चले जाइएगा। दो महीने की तो बात है।"

"मैंने भी यही सोचा था, लेकिन भैया का आदेश है। गाँव जाना ही पड़ेगा।"

जया चुप हो गई। कुछ क्षणों बाद बोली, "कब तक लौटिएगा ?"

"होली के चौथे दिन। पत्र डालोगी न ?"

जया ने सिर हिलाकर, "हाँ" किया।

"एक बात बताओ ?"

जया ने तनिक जिज्ञासावश देखा, "क्या ?"

"घर पर शादी की चर्चा चलाऊँ ? तुम तैयार हो ?"

जया लजा गई, "डेढ़ बज रहा है। आपने कपड़े-वपड़े सब ठीक कर लिए ?"

"मैं जो पूछ रहा हूँ, पहले उसका उत्तर दो।"

"मुझे नहीं मालूम।" वह खड़ी हो गई, "आप रात में खाएँगे क्या ? पूड़ियाँ बना दूँ ?"

"नहीं, स्टेशन पर खा लूँगा। यह सब झंझट बेकार है।"

"बेकार क्यों है ? अभी आती हूँ।" जया नीचे चली गई।

१९

गाजीपुर शहर से तेरह-चौदह मील पूरब लखनपुर गाँव में उमेश के सत्तर वर्षीय माता-पिता और साठ वर्षीय एक विधवा चाची रहती हैं। टुनकी नौकर है जो घर-द्वार, मन्दिर, फुलवारी सबका प्रबन्ध देखता है। मन्दिर पर पूजा करने के लिए एक पुजारी जी हैं जो 'रामजी' के नाम से सम्बोधित होते हैं। साठ वर्षीय रामजी बाल-ब्रह्मचारी हैं और इस परिवार के गुरु भी हैं। रामजी की भक्ति और उनका कर्मकाण्ड आसपास के गाँवों तक विख्यात है। उमेश का मकान कच्चा है, किन्तु बहुत बड़ा है। मकान से थोड़ी दूर पर उसका मन्दिर है जो एक बाग के मध्य में बना है। बाग में अमरूद, नींबू, आम, चकोतरा, शरीफा, आँवला, जामुन आदि के पेड़ हैं। उमेश के पिता को फूलों का बड़ा शौक है इसीलिए प्रत्येक मौसम में मौसमी फूलों की शोभा इस बाग में देखते ही बनती है। और इस शोभा को चिरस्थायी रखने के लिए वह स्वयं भी दिन-रात खुरपी लिए क्यारियों को ठीक किया करते हैं।

उमेश के पिता के पास बहुत अधिक ज़मीन नहीं थी, परन्तु जितनी थी, वह स्वयं की थी, अर्थात् उन्हीं की ज़मींदारी थी। फलस्वरूप अहीर लुहार, बढ़ई, कहार, पंडित, धोबी, नाई सभी उनकी ज़मीन में बसे हुए थे और इनकी रियाया थे। तथा एक रियाया को जिस प्रकार जीवन व्यतीत करने का अधिकार होता है इसी प्रकार वे भी व्यतीत करते थे। आवश्यकता पड़ने पर उमेश के घर सबको बेगार करने के लिए भी आना होता था। दशहरा, होली पर नज़राना के रूप में अहीरों को दही और दूध देना पड़ता था और नाई को बाल काटना होता था। शादी-विवाह में धोबी को मुफ़्त

कपड़े धोने होते थे, कहार को बिना थकान महसूस किये पानी की ज़िम्मेदारी निभानी होती थी, और लुहार-बढ़ई को लकड़ी-लावन का प्रबन्ध करना होता था। किस्सा कोताह कि जहाँ तक वे निचोड़े जा सकते थे, निचुड़ रहे थे जबकि महात्मा गांधी ने एक नई चेतना की लहर सारे भारतवर्ष में फैला दी थी।

इस प्रकार लखनपुर गाँव का समाज दो वर्गों में विभाजित था—एक शासक और दूसरा शासित। लखनपुर गाँव में उमेश के पिता जैसे मोटे-मोटे ज़मींदार कई थे।

उमेश खद्दर की धोती, कुरता, जाकट और टोपी लगाये गाँव में आया। बहुतों ने पहिचाना और बहुतों ने नहीं पहिचाना। न पहिचानना स्वाभाविक था। उसे इस वेशभूषा में किसी ने कब देखा था, और न किसी को इस प्रकार की कल्पना ही थी। उस ज़माने में खद्दर पहिनकर गांधी बाबा का अनुयायी बन जाना बड़ी दिलेरी का काम था। अंग्रेज़ों के विरुद्ध खड़े होने का मतलब जान की बाज़ी लगाना ही तो था। उमेश ने बहुत बड़ा त्याग किया था। शीघ्र ही गाँव के अपरिचित परिचित हुए। छोटे-बड़े, संगी-साथी सब के संग उमेश की बैठक होने लगी। जन्म स्थान के कण-कण में एक विशेष प्रकार का खिंचाव है जो अन्यत्र दुलर्भ है।

किसानों की सम्पत्ति खेतों से उठकर खलिहानों में आ गई थी और अगर कुछ शेष थी तो वह बहुत थोड़ी थी, जो बस्ती के आस-पास बिखरी हुई सुरक्षित थी। इन खेतों की बोवाई बाद में हुई थी, इस कारण इनके कटने में अभी विलम्ब था। दूर तक फैले सीवान में सूखी मिट्टी के अतिरिक्त और कुछ नहीं था। हाँ, यत्र-तत्र अरहर के खेत अवश्य लहलहा रहे थे जो अब भी सूरज की किरणों को चुनौती देने में समर्थ थे।

ऐड़ी चोटी का पसीना एक करके जिस फल की किसान कामना करता है यदि अब वह फल मिलने वाला हो तो इससे बढ़कर उनके लिए दूसरी प्रसन्नता और क्या हो सकती थी। उनके लिए तो यही सर्वस्व था। इसी में उनके जीवन का सम्पूर्ण आनन्द निहित था। खलिहान में फसल के ऊँचे-ऊँचे ढेर, वर्ष भर के परिश्रम के उपरान्त कुछ आरम्भ, रात में झुरझुराती हुई फगुनहटा की मस्ती और सोने में सुगन्ध उत्पन्न करने

वाला होली का त्यौहार, अगर उनकी दुनियाँ को अब रंगीन न बनाता तो फिर कब बनाता ? रात में भोजनोपरान्त, चौपालों, खलिहानों, मन्दिरों और बागों में फाग होने लगी थी। ढोलक की ताल पर सुनाई पड़ता—

होली में बाबा देवर लागें होली में,
वह तो भोले बलम से सुघर लागें होली में।

और कहीं से यह आवाज़ आ रही थी—

बम भोला खेलें फाग, गौरा संग लिये।
केकर भींजे चूनरी हो
चूनरी हो, चूनरी हो,
केकर भींजे पाग, गौरा संग लिये।
बम भोला खेले फाग, गौरा संग लिये॥

और उमेश के मन्दिर के समीप वाले खलिहान में बिन्दा गा रहा था—

भौजी लगावें गुलाल बिच दुपहरिया में।
हम के दिखावें सिंगार बिच दुपहरिया में॥

इस प्रकार रात के बारह और एक-एक बजे तक नानाप्रकार के फागों से गाँव का वातावरण रसमय होने लगा था।

इतने अरसे के बाद गाँव आने पर उमेश के लिए स्वाभाविक था कि वह लोगों के बीच अधिक बैठकर उनकी खेती-पाती, दुःख-सुख और घर-परिवार के विषय में सुनकर शोक और सहानुभूति प्रकट करता तथा उन्हें भी देश-विदेश के समाचारों से अवगत कराता। साथ ही उसके लिए यह भी तो आवश्यक था कि वह गोरों के अत्याचारों का विशद वर्णन करके उनके हृदयों में देश की स्वतन्त्रता के हेतु दबी और भयभीत चेतना को उभारता। जब उसने देश के निमित्त अपने को न्यौछावर कर दिया था, तब किसकी चिन्ता और किसका भय ? वह कभी खलिहान में तो कभी दमड़ी के दरवाज़े पर तो कभी आम के बागों में जवान और बूढ़ों के बीच बैठकर उन्हें नाना प्रकार की बातें बताता तथा उन्हें उत्साहित करता कि निकट भविष्य में यदि महात्मा गांधी ने अंग्रेज़ों के विरुद्ध किसी क्रान्ति की तुरही फूंकी तो उन्हें तन-मन-धन से उनकी आज्ञा को पालन करने के लिए तैयार रहना चाहिए। तभी उनका देश गुलामी के बन्धन से मुक्त हो सकेगा

और उन्हें सुख की उपलब्धि होगी। लोग उसकी बातों को बड़े चाव से सुनते और हाँ-में-हाँ मिलाकर अपना समर्थन देते। समाज ने जिस वर्ग को हेय की दृष्टि से देखा है, वही वर्ग घृणा के समस्त विकारों से बचकर, निश्छलता, निष्कपटता, निस्स्वार्थपरता और आत्मीयता के आदर्श को उपस्थित करने में समर्थ हो सका है। संसार ने उसी से मनुष्यता का पाठ सीखा है और आज भी सीख रहा है। यह उल्टी बात अजीब है।

दो-तीन दिन के भीतर ही उमेश ने सबके हृदय में अपना स्थान बना लिया। छोटे-बड़े सभी उसकी इज्ज़त करने लगे और काम से अवकाश मिलने पर उसके समीप बैठकर उसकी बातों को सुनने के लिए उत्सुक रहने लगे। उमेश की गोष्ठी बढ़ी और ऐसी बढ़ी कि खाने-पीने तक की चिन्ता जाती रही। बढ़नी ही चाहिए थी। उसने बीड़ा ही ऐसा उठाया था। जन-जागृति करना उसका प्रथम कर्तव्य था। आग जितनी भड़केगी, लौ उतनी ही विकराल रूप धारण करके अपनी उष्णता और तेज का परिचय दे सकेगी। उमेश बड़ा प्रसन्न था। उसे सन्तोष था कि उसकी छुट्टियाँ बेकार नहीं गईं। वह अपने कर्तव्यों का पालन कर रहा था। बूँद-बूँद से तालाब भर जाता है। लगन लगते-लगते लगती है।

एक दिन दोपहर के समय उमेश अहीर टोले से निकला ही था कि झिंगुरी के ओसारे से आवाज़ आई, "उमेश भैया!"

"क्या है मुन्नर?" उमेश खड़ा हो गया।

तीस वर्षीय मुन्नर एक सीधा-सादा किसान है। उसने पूछा, "कहीं काम से जा रहे हो क्या?"

"नहीं तो।"

"तो आओ, घड़ी भर यहीं बैठ लो। हमारे और बिन्दा महाराज में एक बहस छिड़ गई है। तुमसे फैसला हो जाएगा।" ओसारे में रामखेलावन, पत्ता, ढेलवा, सीपूजन, सुकालू, गोबरी आदि सात-आठ लोग बैठे थे। और लगभग सभी अधेड़ उम्र के थे। केवल बिन्दा उमेश की उम्र का युवक था।

उमेश आकर बैठ गया, "बताओ।" उसने पूछा।

"बिन्दा महाराज का," मुन्नर ने बतलाया, "कहना है कि बिना गोली-बन्दूक चलाए अंग्रेज़ यहाँ से नहीं जा सकते और हम कह रहे हैं कि

गोली-बन्दूक चलाकर हम अंग्रेजों से पार नहीं पा सकते । उनके पास बड़ी-बड़ी तोपें हैं । चाहेंगे तो एक मिनट में देश को जलाकर भस्म कर देंगे । हमारे लिए तो गांधी बाबा की बात ही भलाई करने वाली है । ये गोरे भी तो आदमी हैं । कभी-न-कभी इनका दिल पसीजेगा ही । अब तुम फैसला दो, हम उचित पर हैं या बिन्दा महाराज ?"

उमेश के कुछ कहने के पूर्व ही बिन्दा बोल उठा, "हाँ, हाँ, हम ठीक कह रहे हैं । क्यों उमेश भाई, बिना लड़ाई के कभी किसी को कुछ मिला भी है या इन्हीं को मिलेगा ? आपने तो बड़े-बड़े ग्रन्थ पढ़े हैं । किसी देश का ऐसा इतिहास है ? तुम मुन्नर क्या समझो ? अंग्रेज़ मूर्ख हैं, जो इतनी बड़ी रियासत छोड़कर चले जाएँगे ? क्यों पत्ता काका मेरी बात तुम्हें धँस रही है न ?"

"उमेश भैया की भी तो सुनो या अपनी ही हाँकते रहोगे ।" मुन्नर फैसला सुनना चाहता था । उसे विश्वास था कि फैसला उसी के पक्ष में रहेगा । कारण, कल वह सिवनन्दनलाल वाले बाग में उमेश को इसी प्रकार की बातें करता सुन चुका था ।

उमेश बोला, "बिन्दा महाराज, यह बात तो सही है कि हक़ माँगने से नहीं मिलता, वरन् उसे लेना होता है और तुम भी लेना ही चाहते हो; माँगना नहीं, परन्तु कभी यह भी सोचा है कि तुम्हारे पास यह लेने वाला सामर्थ्य है अथवा नहीं ?"

"यदि नहीं है तो उसके लिएप्रयत्न करना होगा ।"

"ठीक । प्रयत्न करो, किन्तु साथ में यह भी अनुमान लगा लेना आवश्यक होगा कि अंग्रेज़ों की बराबरी में आने के लिए हमें कितना समय और किस-किस प्रकार के साधन जुटाने होंगे । तुम्हें अंग्रेज़ों ने इस बुरी तरह से जकड़ दिया है कि तुम अपने स्थान पर भी हिलने में असमर्थ हो । गोली-बन्दूक के नाम पर तुम्हारे पास केवल लाठी है । वीरता भारतवासियों में अब रही नहीं और है भी तो तोपों और बन्दूकों का सामना लाठियों से कब तक किया जा सकेगा ? नतीजा क्या होगा ? लाखों के घर बरबाद होंगे, लाखों स्त्रियाँ विधवा होंगी और लाखों बच्चे आश्रयहीन होकर बिलबिलाते मर जाएँगे । दासता की ज़ंजीर जकड़ जाएगी । आतंक से लोग

शिथिल पड़ जाएँगे। यही कारण है कि सब तरफ से सोचने के बाद महात्मा गांधी ने सत्याग्रह के नये मार्ग को अपनाया है। हक़ माँगना हमारा धर्म है, सो हम माँग रहे हैं। न लड़ते हैं, न झगड़ते हैं। किसी-न-किसी दिन मनुष्यता का भाव उन गोरों के दिलों में जागेगा ही।"

"और यदि न जागा तो?" बिन्दा ने प्रश्न किया।

"जागेगा क्यों नहीं? हम जगाकर छोड़ेंगे। देख नहीं रहे हो कि हमारी शक्ति दिन-पर-दिन बढ़ती चली जा रही है। नित्य हमें सुविधाओं पर सुविधाएँ मिल रही हैं। अंग्रेज़ घबड़ाने लगे हैं। उन्हें विश्वास होने लगा है कि अब हिन्दुस्तान को अधिक समय तक गुलाम नहीं रखा जा सकता। इतना यह सब कैसे हो सका है? गांधीजी की ही बदौलत न? इनका मार्ग हम भारतवासियों के लिए अधिक उत्तम और लाभदायक है। हमें इसी रास्ते पर चलना चाहिए। गोली-बन्दूक वाले रास्ते से चलकर हमारा कल्याण नहीं होने का। मैं तुम्हारी राय से सहमत नहीं हूँ।"

मुन्नर ने गर्व से बिन्दा की ओर देखा।

२०

परसों होली थी। रस बढ़ गया था। मन खिल उठा था। मस्ती फैल गई थी। छोटे-बड़े, बूढ़े-जवान, स्त्री-पुरुष, सभी एक नये प्रकार के आनन्द का अनुभव करने लगे थे। हर तरफ प्रसन्नता बिखर गई थी। देवर-भाभी का मज़ाक बढ़ गया था। जब जैसा अवसर मिला, रंग या गोबर डालकर होली की मस्ती का परिचय दिया जाने लगा था। रसिकों के नये-नये शगूफे शुरू हो गए थे। छेड़-छाड़ बढ़ गई थी। प्रेमियों की दुनिया में विकलता आ गई थी। लोगों की आँखें बचाकर मिलने की प्रवृत्ति बढ़ गई थी। घरों में पति-पत्नियों की ठिठोलियाँ, रंग का डालना और गुलाल

मलना आरम्भ हो गया था। तात्पर्य यह कि खुशी हर तरफ छा गई थी। लोग ईर्ष्या द्वेष भूल गए थे। दुश्मन दोस्त बन गए थे।

होली की मस्ती इतने तक ही सीमित नहीं थी। रात में लौंडे का नाच भी होने लगा था और टोले-टोले में होने लगा था। भोजनोपरान्त प्रत्येक टोले के लोग मशालों की रोशनी में लौंडे को नचाते हुए गाँव में निकलते और प्रत्येक व्यक्ति के दरवाज़े पर प्रदर्शन दिखलाते हुए लौट आते। कभी-कभी दो दलों में मुठभेड़ भी हो जाती और फिर एक-दूसरे को परास्त करने में किसी तरह की कसर न छोड़ते। उमेश के टोले में भी लौंडा आया था और नामीग्रामी लौंडा आया था। पिछले वर्ष का बदला इस वर्ष निकालना था। उसे गाँव ऊपर सिद्ध करना था। बली चनरमा उर्फ मिरदंगी बड़े खार खाए बैठे थे। क्यों न खाते? उनके जैसा ढोलक बजाने वाला गाँव में कोई था? बेचारे ने पिछले वर्ष एड़ी चोटी का पसीना एक कर दिया था, परन्तु सब बेकार गया। लौंडा ही दो कौड़ी का था। मिरदंगी विष का घूंट पीकर रह गए थे। उन्होंने होली में ढोलक न बजाने की प्रतिज्ञा कर ली थी, परन्तु इस बार लौंजरिया के आने पर तथा संगी-साथियों के आग्रह पर उन्होंने हामी भरी थी।

आज उमेश के टोले के नाच का श्रीगणेश था। जल्दी-जल्दी खाना खाकर लोग उमेश के दरवाज़े पर इकट्ठे होने लगे। उधर कमरे में मुंशी बैजनाथलाल लौंडे के मेकप में जुटे हुए थे। उन्होंने यह हुनर कलकत्ते में सीखा था जब वह पुलिस में थे। बाहर मैदान में मिरदंगी ढोलक की कचूमर निकाल रहे थे। गोल-मटोल शरीर पर बड़ी-बड़ी भूरी मूँछें तथा भूरी आँखें और उन भूरी आँखों में विजया की गुलाबी और होली की मस्ती—इस समय उन्हें किसी और दुनिया में उड़ाए लिए जा रही थी। बार-बार ढोलक चढ़ाते और बार-बार उतार देते। बगल में बैठे हुए लड़के उनकी दिल्लगी उड़ाते और हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाते। मिरदंगी भी हँसते रहते। वह भी तो समझ रहे थे कि उन्हीं जैसी उनके साथियों की भी मस्ती है।

नाच खड़ा हुआ। मशालें जला दी गईं। मिरदंगी के कमर में ढोलक बाँधी गई। उमेश के पिता को अन्दर सूचना दी गई। वह बाहर आए। उन्होंने मुस्कराते हुए मिरदंगी की ओर देखा, "मिरदंगी।"

"हाँ चाचा।" वह झूमता हुआ आगे आया।

"मामला ठीक है न?"

"बहुत ठीक। आज कुछ गहरी कर ली है। कौन ठिकाना, कहीं भिड़न्त हो ही जाए। इस बार बदला निकालना है।"

उमेश के पिता हँसने लगे। "चलो एक कोई भजन सुनवाओ।"

लौंजरिया ने गाना प्रारम्भ किया—

श्यामा श्याम से होली खेलत आज नई।
कभी नचावत कभी है नाचत बहियाँ बीच गही॥
श्यामा श्याम से होली खेलत आज नई।
....
....

गीत समाप्त होने पर उमेश के पिता ने एक रुपया पुरस्कारस्वरूप दिया और जाने की आज्ञा दी। सब उछलते हुए मुड़ चले।

नाच सबके द्वार से होता हुआ बाहर निकलकर सिवनन्दनलाल के बाग में पहुँचा ही था कि सामने से दूसरे टोले वाला नाच आता दिखलाई पड़ गया। मिरदंगी बोले, "हो गई भिड़न्त।" फिर उन्होंने लौंडे से कहा, "नाक न कटने पाए उस्ताद। बड़ी हाँका-हाँकी की बात है इस साल।"

"घबड़ाओ नहीं मिरदंगी। मेरा नाम लौंजरिया है, लौंजरिया। देखना उस लौंडे का कैसा कचूमर निकालता हूँ। विदेसिया ही है न?"

"हाँ विदेसिया है।"

"तब बेफिकर चलो।"

दोनों दल समीप आए। तत्काल प्रबन्धकों ने एक घेरा बनाकर बीच में जगह कर दी। नचनियाँ नाचने लगे। अपने-अपने करश्मा दिखलाने लगे। दोनों ओर के ढोलकिया गर्दन हिला-हिलाकर अपनी ढोलकों पर पिल पड़े। विशेषकर मिरदंगी तो मालूम पड़ रहे थे कि ढोलक के साथ उड़ जाएँगे। समर्थक अपनी-अपनी कह रहे थे। लगभग पौन घंटे तक दोनों नाचने वालों ने बड़ी भयंकरता से नाचा। किसकी जीत होगी और किसकी हार—कहना कठिन हो गया था, परन्तु पन्द्रह मिनट बाद ही विदेसिया में शिथिलता के चिह्न दिखलाई पड़ने लगे। मिरदंगी उछले, "जीते रहो

बाबू ! पड़ाव फतह है ।" और वह ढोलक को अधिक तेज़ी से बजाने लगे।

विदेसिया के दल वाले चिन्तित हुए। बाज़ी हारती हुई नज़र आई। दो-एक के बीच कानाफूसी हुई और तत्काल एक व्यक्ति जोगीड़ा कहता हुआ में बीच में कूद पड़ा—

जोगी जी हो आज हमारी सुन लो मधुरी वानी,
छोड़ दिया मुख ताल, ताल पर उड़ जा जानी जानी
चली जा सारारारा, सारारारा, सारारारा,
चली जा,
चली जा सारारारा, सारारारा, सारारारा
ओ अलबेली
चली जा सारारारा, सारारारा, सारारारा।

यह चतुराई विदेसिया के सुसताने के अभिप्राय से की गई थी और साथ ही यह भी सोचा गया था कि सम्भव है जोगीड़ा के जवाब सवाल में उधर वाले इतने बेजोड़ न साबित हों, परन्तु उनका अनुमान ग़लत निकला। जोगीड़ा कहने वाले ने अपना समाप्त ही किया था कि अचानक बिन्दा उछलकर सामने आया और उसी ढ़ब से जवाब दिया—

गोरखपुर में गोरख बाबा सिंघ जटी कहलावें
पाँच कोस पयकरमा करके द्वारे घंट बजावें
रे बर देख, देख, हा, हा,
रे, बर, देख, देख, हा, हा,
चली जा सारारारा, सारारारा, सारारारा
चली जा,
चली जा सारारारा, सारारारा, सारारारा
ओ अलबेली,
चली जा सारारारा, सारारारा, सारारारा ।

मिरदंगी का हृदय बल्लियों उछल पड़ा। उसने भी बिन्दा के स्वर में अपनी ढोलक का स्वर मिलाते हुए बजाया—

धि धि काँवा, धि धि काँवा, धि धि काँवा,
धि धि काँवा, धि धि काँवा, धि धि काँवा।

समर्थकों का कोलाहल था, "जुग-जुग जियो बिन्दा महाराज जुग-जुग जियो।" सब हाथ उठाकर उछलने लगे थे।

विरोधी अभी विचलित नहीं हुआ था। उसने दूसरा वार किया—

ताल में तल बुक्क बोले बन में तूती,
जहाँनाबाद की बूटी फरोखाबाद में छूटी,
मैंने गाड़ दी खूँटी मैंने गाड़ दी खूँटी,
चली जा नारे, नारे, दिल हक, हक, हका
तवाज गिनगिन गिनगिन, तवाज गिनगिन गिनगिन,
चली जा नारे, नारे, चली जा नारे, नारे।

पुनः बड़ी ज़ोर का हल्ला हुआ। अँगोछे उछाल-उछालकर वाह-वाह के नारे लगने लगे। विदेसिया कमर मटका कर तेज़ी से पूरे घेरे का चक्कर लगाता हुआ पैरों पर लहर खाने लगा। उत्तर की प्रतीक्षा होने लगी।

बिन्दा तैयार बैठा था। उसने उसी तेज़ी से जवाब दिया—

महुआ पर सूआ बोले जामुन पै मैना,
हमरी बरोबरी में बात मत कहना,
हमने जीत ली है मैना हमने जीत ली है मैना,
चली जा नारे, नारे, दिल हक हक हका
तवाज गिनगिन गिनगिन, तवाज गिनगिन गिनगिन
चली जा नारे, नारे, चली जा नारे, नारे,
दिल हक, हक, हका
चली जा नारे, नारे, चली जा नारे नारे॥

मिरदंगी बजाते रहे—

धि धि काँवा, धि धि काँवा, धि धि काँवा,
धि धि काँवा, धि धि काँवा, धि धि काँवा
धि धि काँवा, धि धि काँवा, धि धि काँवा

लौंजरिया बिजली की भाँति चक्कर लगाने लगा। बिन्दा का जवाब इतना माकूल था कि विरोधी दल के पसीने आगये। एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। मिरदंगी ने बाज़ी मार ली। बिन्दा का जवाब तत्काल न मिल सका। विरोधी सोचने लगा। सब 'हो हो' करने लगे और आगे बढ़ गये।

निबटारा हो गया। मिरदंगी की नाक रह गई।

कई दरवाज़ों से होता हुआ मिरदंगी वाला दल एक संकरी गली में आया। सब आगे पीछे हो गये। अँधेरा अधिक था। मशाल वाले आगे निकल चुके थे। धक्कम-धक्का से बचने के लिए बिन्दा एक किनारे खड़ा हो गया। सब के अन्त में बिन्दा ने पैर उठाये। अभी दस कदम ही चल पाया होगा कि किसी ने पीछे से गोबर फेंक कर मारा। बिन्दा सकपका गया। मुड़कर देखा तो रधिया खड़ी अँगूठा बिरा रही थी, "होली है पंडित पोंगा होली। समझे?"

"अभी नहीं समझा...." बिन्दा ने दौड़कर पकड़ना चाहा।

वह झट से भागकर किसी घर में घुस गई।

२१

बिन्दा के आगे पीछे कोई नहीं था। लखनपुर उसके बड़े भाई की ससुराल थी। आज से दस वर्ष पूर्व हैजे की बीमारी में उसके भाई और भौजाई दोनों का देहान्त हो गया था। तब से बिन्दा अपने भाई की ससुराल में आकर रहने लगा था। बिन्दा के भाई के श्वसुर रामलखन पंडित साधारण स्थिति के व्यक्ति थे। पंडिताई के अतिरिक्त थोड़ी बहुत खेती-पाती भी होती थी और अब इसका करने-धरने वाला बिन्दा ही था। रामलखन पंडित के केवल एक ही लड़की थी जो बिन्दा के भाई को ब्याही थी। उसकी असमय मृत्यु और उस मृत्यु से उत्पन्न व्यथा के निवारणार्थ ही रामलखन ने बिन्दा को अपने यहाँ रख लिया था और उसे पाल-पोसकर जवान भी बना दिया था। रामलखन और उसकी पत्नी के लिए वह बुढ़ापे का सहारा हो गया था।

ब्राह्मण कुल में जन्म के संग-संग रामखेलावन द्वारा लालन-पालन

होने के कारण थोड़ा सा समय बिन्दा को विद्यादेवी की आराधना में भी लगाना पड़ा था। फलस्वरूप उसे सत्यनारायण की कथा संस्कृत में कंठस्थ हो गई थी। उपनयन संस्कार और पाणिग्रहण संस्कार के अवसरों पर जिन श्लोकों का उच्चारण तथा जिस विधि से समस्त कार्यक्रमों को सुचारु रूप से किया जाता है वे बिन्दा को मालूम थे। साथ ही राजनीतिक मनोवृत्ति होने के कारण उसे इधर-उधर से पुस्तकें और अखबार भी मिल जाया करते थे। इस प्रकार बिन्दा का धीरे-धीरे विकास ही हो रहा था, ह्रास नहीं।

बिन्दा देखने सुनने में अच्छा था। शरीर हृष्ट-पुष्ट था। तरुणाई की मादकता भी थी, परन्तु उसमें छेड़-छाड़ की आदत नहीं थी। रिश्ते से लखनपुर की सारी लड़कियाँ उसकी साली होती थीं और अधिकतर उन लड़कियों द्वारा वह छेड़ा भी जाता था, परन्तु बिन्दा हँसकर टाल देने के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर पाता था। क्यों नहीं कर पाता था इसका क्या कारण बताया जाए ?

पर इधर कुछ महीनों से रधिया उसके विचारों में घुसने लगी थी। उसकी आमों की फाँकी जैसी लम्बी-लम्बी कजरारी आँखें, सेब की भाँति लाल-लाल गाल, गठे और उभरे शरीर के अंग प्रत्यंग, ऐंठ कर चलने की मस्तानी चाल, सदैव हंसता हुआ चेहरा, निडर होकर बातें करने की आदत और इन सबके ऊपर केवल अठारह वर्ष की आयु बिन्दा को जाल में फाँसने लगी थी। वह बड़ी उलझन में आ पड़ा था।

यद्यपि रधिया का विवाह हो चुका था और दो वर्ष पहले गवना भी हो गया था। उसकी ससुराल पीथापुर गाँव में थी जो गाज़ीपुर से बिल्कुल सटा हुआ था। रधिया का पति शहर में दूध का धन्धा करता था। रधिया अपने पति के पास मुश्किल से डेढ़ साल रही थी और एक दिन लड़कर अपने मायके चली आई थी। तब से यहीं है। कई बार उसका पति लिवाने आया, परन्तु वह नहीं गई। न जाने का कारण वह अपने पति की बदचलनी बतलाती है। रधिया जाति की अहीर है।

रधिया का यौवन, उसकी खुली हुई बात-चीत तथा मस्तानी चाल ने गाँव के रसिकों को पहले तो उत्साहित किया, परन्तु एक-एक करके जब

सब डाँटे गये तो उनकी बड़ी किरकिरी हुई। फलतः बदला चुकाने की भावना से इन लोगों ने उसे बदनाम करने को सोचा और इधर-उधर की बातों का प्रचार करना आरम्भ कर दिया। रधिया कान में तेल डाले सुनती रही। उसे कोई चिन्ता नहीं थी। कभी उसके माँ-बाप कुछ कहते तो वह घर छोड़कर भाग जाने को तैयार हो जाती। पुरुषों के छिछोरेपन को बतला तो सकती नहीं थी। विवश होकर उसके माता-पिता को चुप हो जाना पड़ता। रधिया मनचलों की नींद हराम करती रही।

इधर चार छै महीनों से स्वयं रधिया की नींद हराम होने लगी थी। जिस संयम से उसने अपने को संभाला था वह टूटता हुआ जान पड़ने लगा। बिन्दा उसकी कल्पनाओं में जब-तब आने लगा। उसका व्यक्तित्व उसे आकर्षित करने लगा। मुँह से हर तरह की बात कह कर भी उसे वास्तविक रूप न देने की बिन्दा की अनोखी रीति, उसके हृदय में टीस के साथ-साथ खिचाव में वृद्धि करने लगी। वह जितना पीछे हटने का प्रयत्न करती उसे उतना ही आगे बढ़ना पड़ता। प्रयास निष्फल जाने लगे। हृदय हाथ से बेहाथ होने लगा। मन की प्रतिज्ञाएँ और कसमें केवल दो चार दिनों तक ही अपना प्रभाव रख पातीं। वह पुनः बिन्दा के संग छेड़-छाड़ करने लगती।

दोनों जाने-अनजाने एक दूसरे के समीप आने का प्रयत्न करने लगे। बिन्दा और रधिया के बीच हँसी मजाक का रिश्ता तो था ही, फिर आगे बढ़ने में कितना समय लगता। वहाँ तो लुकने-छिपने की भी आवश्यकता नहीं थी। उँगली सबके सामने पकड़ी जा सकती थी और किसी को सन्देह भी नहीं हो सकता था। बिन्दा की चारित्रिक धाक और रधिया की निस्संकोचिता अभी कुछ समय तक लोगों की आँखों में धूल झोंक सकती थी। दोनों की छेड़-छाड़ बढ़ती गई। होली आई। अब क्या कहना था। इस त्यौहार में चार-छै दिनों के लिए सातों खून माफ रहते हैं। जो चाहो करो। फिर जहाँ साली सलहज का रिश्ता हो उसकी तो पाँचों उँगलियाँ घी में हैं।

कल रात में रधिया गोबर डालकर भाग निकली थी। आज बिन्दा उसकी खोज में था। वह भी उसे एकान्त में ही पकड़ना चाहता था। उसने

कई बार इधर-उधर चक्कर लगाए। रधिया के मकान से भी निकला। दो-चार मिनट रुककर रधिया की माँ से भी बातचीत की, लेकिन रधिया नज़र नहीं आई। वह आश्चर्य में था। रधिया गई तो कहाँ गई? वह घूम-घामकर सिवनन्दनलाल के बाग में आकर खड़ा ही हुआ था कि दूर सीवान में पीयरघट्टा की ओर से वह आती हुई जान पड़ी। उसने ध्यान-पूर्वक देखा। रधिया ही थी। बगल में थोड़े हरे चने दबाये, खाती चली आ रही थी।

अवसर मिल गया। वह तेज़ी से अरहर के खेतों से होता हुआ गन्ने के खेतों में आ गया। दूर तक दोनों ओर फैले हुए गन्ने के खेतों के बीच से ही रधिया को आना था। बिन्दा ने एक गन्ना तोड़ा और डाँड पर बैठकर चूसने लगा। इससे अधिक निर्जनता और कहीं मिलना कठिन थी। खेतों के कट जाने के कारण इधर लोगों का आना-जाना भी कम हो गया था। पीयरघट्टा पर जिनके खेत नहीं कटे हैं, वे ही सवेरे-शाम जब-तब आया-जाया करते थे।

पीठ पीछे किए बिन्दा गन्ना चूस रहा था। परन्तु उसके कान दूर किसी आहट के सुनने में सतर्क थे। कुछ समय बाद खड़खड़ाहट सुनाई पड़ी और वह खड़खड़ाहट समीप होती गई। पता नहीं, क्या सोचकर अचानक जल्दी से उठकर बिन्दा खेत में छिप गया। रधिया गुनगुनाती हुई चली आ रही थी। जब वह बिल्कुल समीप आगई तो बिन्दा उछलता हुआ सामने आ खड़ा हुआ। रधिया डर गई, "बड़े वैसे आदमी हो। हम तो डर गये। इसके भीतर क्या कर रहे थे?"

"तुम्हारे आने की प्रतीक्षा कर रहा था।" बिन्दा के सारे शरीर में कँपकँपी दौड़ गई थी। मुँह से शब्द लड़खड़ाते हुए निकले थे।

"मेरे आने की? यहाँ खेतों के बीच?" रधिया जान-बूझकर गम्भीर बन गई थी। वह बिन्दा के मनोभाव को समझ गई थी।

"और कहाँ करता?" बिन्दा साहस बटोर कर बोला, "तुमने भी तो कल रात में मुझे अकेले ही छेड़ा था।"

"तो तुम भी मुझे यहाँ छेड़ने आए हो?" रधिया की गम्भीरता बिन्दा के हाथ-पैर ढीले किए दे रही थी।

"छेड़ने नहीं, होली खेलने आया हूँ।"

"होली खेलने आये हो ? बिना रंग-वंग के ?"

"नहीं, अबीर लाया हूँ।" बिन्दा ने झट-से धोती के फेंटे से अबीर की पुड़िया निकाली।

"तो फिर ?" रधिया ने पूछा।

"तुम्हारे लगाऊँ ?"

"हटो, जाने दो। पूरे बुद्धू हो। कहीं औरतों के अबीर लगाया जाता है ?" वह बढ़ने को हुई।

बिन्दा ज्यों-का-त्यों खड़ा रहा।

"रास्ते से तो हटो। कोई आगया तो देखकर क्या कहेगा। मेरे पीछे तो यों ही सब हाथ धोकर पड़े रहते हैं।"

"पर यह तो बुरी बात है कि तुम हम पर गोबर फेंक सकती हो और हम तुम्हें रंग भी नहीं लगा सकते ?"

"नहीं। हमारी बात और है और तुम्हारी बात और। तुम्हारे ऐसा करने से जानते हो लोग क्या कहेंगे ?"

"परन्तु यहाँ देख कौन रहा है, जो कोई कुछ कह सकेगा।"

रधिया अपनी मुस्कान न रोक सकी, "बड़े चतुर हो। अच्छा, एक टीका लगा दो, पर यह समझ लो कि फिर इस तरह का कोई काम न करोगे। अगर मंजूर है तब तो ठीक, नहीं तो नहीं।"

"मंजूर है।"

"भली-भाँति सोच लो।"

"सोच लिया।" बिन्दा के मन में कुछ उत्साह बढ़ा।

"और अगर दुबारा तुमने यहाँ हमें रोका तो ?"

"तो तुम बोलना बन्द कर देना।"

"पक्की बात ?"

"एक दम पक्की बात। पर, अगर तुमने मुझ पर कुछ डाला तो ?"

"नहीं। हम नहीं डालेंगे।"

"अगर डाल दिया तो ?"

"तो तुम भी डाल सकते हो। जल्दी लगाओ। कहीं कोई आ न रहा हो।"

बिन्दा ने अबीर का टीका ललाट पर लगा दिया। आगे के लिए हिम्मत ही नहीं थी।

"लाओ। मैं भी तुम्हें लगा दूँ। फिर तो लगाना होगा नहीं।" उसने उसकी पुड़िया से अबीर निकाली, "बैठ जाओ।"

"क्यों?"

"अपनी लम्बाई का ध्यान है? हमें इतने ऊँचे हाथ नहीं उठाना है। जल्दी बैठो भाई।"

बिन्दा बैठा। रधिया ने टीका लगाते हुए उसके पूरे गालों में अबीर पोत दिया और सट से कतराती हुई निकल भागी। बिन्दा जब तक उठे-उठे, तब तक वह दूर निकल गई थी। रधिया ने हँसते हुए दूर से अँगूठा दिखाया और बाहर निकल गई।

बिन्दा पोंगा तो था ही।

२२

तीसरे दिन निश्चित समय पर आकाश को कुछ सन्देह होने लगा। तब तक चप्पलों की आहट कानों में पड़ी। उसने झुककर देखा। मधु चली आ रही थी। आज उसका रूप चकाचौंध उत्पन्न कर रहा था। बड़ी बनी ठनी थी। समीप आने पर आकाश ने हाथ जोड़े। मधु भी हाथ जोड़ती हुई आकर बैठ गई। वह बोली, "आप बहुत परेशान करते हैं। अब भविष्य में कहीं आने-जाने को न कहिएगा वरना बात खाली जाएगी।" उसने पसीना पोंछा, "देखते नहीं कितनी तेज़ धूप है? आपसे आने को कह दिया था अन्यथा कभी न आती।"

आकाश चुप बैठा रहा। वह मधु को देख रहा था।

"मुझे क्यों घूर रहे हो?"

घूर नहीं रहा हूँ, आँखों में तस्वीर उतारने का प्रयत्न कर रहा हूँ। अब मुलाक़ात होने की आशा तो है नहीं। इसी से संतोष कर लिया करूँगा।"

"बड़े दूरदर्शी व्यक्ति हैं। जल्दी उतार लीजिये तो मैं चलूँ। परीक्षा सिर पर आ गई है। पढ़ना-लिखना भी तो है?"

"बस पाँच मिनट! ज़रा आप भी मेरी आँखों में आँखें डालकर देखिए तो।" वह अपनी हँसी को रोके हुए था।

"क्यों?"

"अक्स ऐसे ही उतरता है? फोटो उतरवाते समय आप कैमरा के शीशे की ओर टकटकी लगाकर देखती हैं या नहीं? बस वही चीज़ यहाँ भी समझिए।"

मधु हँस पड़ी और मुँह बनाकर बोली, "बस, वही चीज़ यहाँ भी समझिये। बातें तो कोई आपसे सीखे। बेसिर-पैर का हाँकना खूब जानते हैं। अब मैं जा रही हूँ।"

"कल हरनाथ से मेरी बड़ी देर तक झक लड़ती रही," आकाश ने सिलसिला बढ़ाया, "वह कह रहा था कि सच्चा प्रेम वही है जहाँ दोनों पक्ष संसार की चिन्ता न करते हुए विवाह सम्बन्ध में बंध जाने को दृढ़ हों और अगर दृढ़ न हों तो उन्हें किसी से मुहब्बत करने का कोई हक़ नहीं है। मैंने जवाब में तर्क रखा था कि प्रेम की सीमा विवाह के दायरे के भीतर सीमित नहीं है। प्रेम में विवाह का बंधन कैसा? विवाह हो या न हो लेकिन प्रेम सदैव हो सकता है और जीवन पर्यन्त हो सकता है।"

"ना, यह गलत है। प्रेम का अन्तिम लक्ष विवाह तो है ही। हरनाथ साहब ठीक कह रहे थे।"

"और यदि किन्हीं परिस्थितियोंवश विवाह न हो सका तो? क्या उन मधुर दिनों की बातों और प्रतिज्ञाओं को भूल जाना सम्भव हो सकेगा?"

सम्भव हो अथवा न हो पर उन्हें तो भूलना ही पड़ेगा अन्यथा जीवन

में कड़ुवाहट नहीं आ जाएगी ?"

"प्रेम करना और प्रेम स्वाभाविक रूप से हो जाना क्या दोनों में अन्तर नहीं है ? अगर किसी वजह से मेरी शादी आपसे न हो सकी तो क्या जो प्रेम मैं आपको दे सका हूँ वैसा ही प्रेम मेरी बीवी को मिल सकेगा ? क्या आज की ये बातें जीवन में कभी भुलाई जा सकेंगी ?"

"कहाँ की बात कहाँ लाकर जोड़ दी। जैसी भी बात हो उसे तोड़-मरोड़कर अपने मतलब पर लाना आवश्यक है ? आपसे भगवान बचाए।" उसने कलाई मोड़ कर घड़ी में समय देखा, "ओफ़ ! डेढ़ बज गया। बड़ी देर हो गई।" वह उठने को हुई।

आकाश ने हाथ पकड़ लिया, "अब जाइए।" कमल के डंठल के समान मुलायम कलाई आकाश के शरीर में सनसनी दौड़ा गई।

"हाथ तो छोड़िए।"

"जी नहीं। पहले वायदा कीजिए कि जब तक मैं नहीं कहूँगा आप जाएँगी नहीं।"

"वाह ! यह खूब रही। आपका क्या ठिकाना ? बातों में आप को समय की चिन्ता तो रहती नहीं, चाहे शाम हो जाए।"

"नहीं, बस एक घंटा और !"

"मैं ढाई बजे उठ जाऊँगी।"

"उठ जाइएगा।"

"हाथ छोड़िए।" मधु केवल मुँह से कह भर रही थी। हाथ छुड़ा नहीं रही थी।

"क्यों, ढाई बजे छोड़ूँगा, जब आपके जाने का समय होगा ? छोड़ने की शर्त तो थी नहीं।" आकाश मुस्कराया।

"शक्ति का अनुचित लाभ ?"

"तो इसमें मेरी क्या गलती है ? शक्ति देने वाले ने इसीलिए शक्ति दे रखी है न कि मैं उसका उपयोग करूँ ? वही कर रहा हूँ।" उसने दूसरे हाथ को बढ़ाकर अपनी दोनों हथेलियों के बीच मधु की हथेली को दबा लिया।

मधु ने सिर हिलाया और हाथ खींच लिया।

"लेकिन जो होगई उसके लिए क्या होगा ?" आकाश के लिए अब लेने के देने पड़ गए। उसका क्रोध समाप्त हो गया और उसने मधु को प्रसन्न करने का प्रयत्न आरम्भ कर दिया।

"मुझे कोई दंड दे दीजिए। ताकत वाले का कोई क्या बिगाड़ सकता है ?" वह सामने ही देख रही थी।

"ठीक।" वह खिसककर उसके बगल में आया, "अपना हाथ लाइए।" और उसने हाथ बढ़ाकर उसका हाथ पकड़ लिया।

मधु चुप रही।

आकाश ने कहा, "इधर देखिए।"

पधु ने सिर नहीं घुमाया।

आकाश ने धीरे से ठोढ़ी पकड़कर अपनी तरफ़ कर लिया, "नाराज़ होने पर रौनक बढ़ जाती है। आज यह अच्छी चीज़ मालूम हुई।" वह हँसने लगा।

"हटिए।" मधु ने मुँह हटा लिया, "छोड़िए हाथ।" उसने हाथ खींचना चाहा।

"ऊँहूँ। पहले मेरी तरफ देखिए।"

"नहीं।"

"देखिए तो एक बात बतलाऊँ।"

उसने गर्दन मोड़ी, "क्या ?"

"मैं अपनी गलती के लिए माफी चाहता हूँ। मिल जाएगी माफी ?"

मधु की प्रसन्नता लौट आई, "बड़ी जल्दी क्रोध आता है और बड़ी जल्दी क्षमा याचना भी होने लगती है ?" उसने हाथ खींच लिया था और झटके से खड़ी होगई, "कोई आ रहा है।" उसने उधर को संकेत किया।

आकाश ने सिर घुमाया ही था कि वह जगत से कूदती हुई भाग खड़ी हुई।

२३

आज होली है। दिन चढ़ते ही लखनपुर गाँव में दौड़धूप और हो-हल्ला मचने लगा। रंग चलने लगा। कीचड़ गोबर फेंके जाने लगे। जो बड़े मुरहा थे वे नालियों की गंदगी का भी प्रयोग करने लगे। लड़कों की जमात अलग थी और वयस्कों की अलग। देवर-भौजाई वाला रिश्ता आज बड़ा सुखदायी बन गया था। छीना-झपटी, भागना-पकड़ना खूब होने लगा। बुजुर्गों में जो अब भी रसिक थे, वे बोलियाँ बोलकर ही सन्तोष कर रहे थे। उन्हें इतना ही पर्याप्त था। जो स्त्रियाँ तनिक ढीठ और दबंग किस्म की थीं, उनका तो तमाशा देखते ही बनता था। वे उन रसिकों की अच्छी खबर ले रहीं थीं जो सौ सौ जूते खाएँ तमाशा घुसकर देखने वालों की श्रेणी में आते थे। होली के बहाने वे सब दिन की कसर निकाल रही थीं। खूब उछल-कूद मची हुई थी।

बिन्दा भी रंग और कीचड़ खेल रहा था, परन्तु कुछ उदास मन से। जिसकी खोज थी, वह पता नहीं कहाँ गायब हो गई थी। वह कई बार चक्कर लगा चुका था। अप्रत्यक्ष रूप से जानने का प्रयत्न भी किया था, परन्तु किसी को मालूम हो तब न। रधिया कहाँ छिप गई थी कोई नहीं जानता था। यहाँ तक की उसकी माँ भी नहीं बता सकी, जब अन्त में निराश होकर बिन्दा ने उससे पूछा था। "हाँ ऐसा हो सकता है कि अपने", रधिया की माँ ने अनुमान से बतलाया था, "बाबू के संग पीयरघट्टा चली गई हो। तुम तो जानते हो कि उसके बाबू को न होली से मतलब है न दीवाली से। बैल की तरह दिन रात काम में जुटे रहते हैं। कितना कहा, बुढ़ापे का सरीर है कुछ आराम कर लिया करो पर उनके कान में जूँ तक नहीं रेंगती। न रेंगे। जब ठठाना बदा है तो ठठाते रहें। समझाना······।"

बिन्दा जानता था कि रधिया की माँ जब बातें करने लगती है तो फिर पूर्णविराम नहीं लगाती। इसलिए उसने बीच में टोक दिया था, "क्या करोगी चाची जब उनका स्वभाव ही ऐसा बन गया है तो मजबूरी है।

अच्छा अब चल रहा हूँ।" वह तुरन्त दूसरी ओर मुड़ गया था।

बिन्दा की होली फीकी पड़ गई। मन उचट गया। उत्साह भंग हो गया। परन्तु उसे व्यक्त न होने देने में ही चतुराई थी। वह रंग खेलता रहा परन्तु बीच-बीच में अवसर निकालकर वह सीवान की ओर भी झाँक आया करता था। उसने सोच लिया था कि यदि रधिया आगई तो गन्ने के खेतों के बीच वह कसकर होली खेलेगा।

घंटे-दो घंटे और रंग चले। दोपहर का समय हो आया। रंग कम हुआ। लोग नहाने की तैयारी करने लगे। कुओं पर भीड़ होने लगी। बिन्दा को फ़ुर्सत मिली। वह खलिहान में जाकर बैठ रहा और पीयरघट्टे से आने वाले लोगों को टकटकी लगाकर देखने लगा। घंटा-आध घंटा और बीता तब कहीं रधिया आती हुई दिखलाई पड़ी परन्तु यह दिखलाई पड़ना न दिखलाई पड़ने से भी बुरा था। बिन्दा की सारी कल्पनाओं पर पानी फिर गया। मन छटपटा कर रह गया। रधिया के संग-संग उसका बाबू भी चला आ रहा था। बिन्दा हृदय में पीड़ा लिये उठकर उमेश के कुएँ की ओर चल पड़ा।

नहाते-खाते और भंग की गोली छानते दिन के लगभग चार बज गये। नए कपड़े पहिने गये। बिन्दा ने घुटनों तक की धोती बाँधी, चुस्त-सा कुरता पहिना और लाल अंगोछा गर्दन में लपेटता हुआ घर से निकला। उमेश के दरवाज़े आया। वहाँ पुनः विजया का सेवन ठंठाई के रूप में किया गया और वहीं सहन में बिछी फर्श के किनारे बैठकर रधिया से एकान्त में मिलने का उपाय सोचने लगा। उसे विश्वास हो गया था कि ऊपर से रधिया चाहे जो कहे लेकिन मन से वह भी मिलने के लिए उत्सुक रहती है। बिन्दा को उपाय सोचने में बहुत देर नहीं लगी। उसने उपाय सोच लिया और खड़ा हो गया।

डीह पर नीम की छाँह में रधिया के गोरू बंधे हुए थे। बिन्दा टहलता हुआ वहाँ जा पहुँचा और इधर-उधर देखकर जो पिछले वर्ष दो दाँतवाला बछड़ा खरीदा गया था; उसकी पगही खोल दी। बैल उछलता हुआ भाग चला। बिन्दा दूसरी ओर से घूम कर आवाज़ लगाता हुआ, "रधिया, ओ रधिया," द्वार पर आया।

"क्या है?" रधिया आँगन से बोली।

"तुम्हारा बछड़ा ऊख की ओर भागता जा रहा था। क्या आज बाँधा नहीं गया है। जाकर देखो।" बिन्दा इतना कहकर चलता बना।

रधिया अपनी माँ पर बड़बड़ाती घर से निकली और गन्ने के खेतों की ओर लपक चली। उधर बिन्दा भी अरहर के खेतों से लुकत-छिपता उसी स्थान पर जा पहुँचा।

रधिया ने अनुमान लगाया कि बैल गन्ने के खेतों में घुस गया होगा। अतः वह भी आवाज़ लगाती खेत में घुस गई। बिन्दा को खड़खड़ाहट सुनाई पड़ी। वह समझ गया कि रधिया आगई। वह बैठ गया और उसके समीप आने की प्रतीक्षा करने लगा। उसने जेब से मुट्ठी में अबीर निकाल लिया था। रधिया 'हट, हट' करती आई। बिन्दा उठा और दबे पाँव उसके पीछे पहुँचकर उसे दबा लिया और लगा मुँह में अबीर मलने।

पहले तो रधिया डर गई, परन्तु बाद में बिन्दा को झटकारती हुई अलग हो गई, "यह क्या बदमासी?" वह कठोर शब्दों में बोली और बड़ी-बड़ी आँखों से क्रोध प्रगट करने लगी।

बिन्दा तो भंग की मस्ती में था। उसे किसी बात की क्या चिन्ता। वह हँस पड़ा "वही बदमासी जो तुमने सवेरे की थी। तुम्हें किसी की पीड़ा की क्या चिन्ता? दूसरों को उल्लू बनाने में अच्छा लगता है, किन्तु जब कोई तुम्हें बनाए तो गुर्राने लगती हो। लाओ मुँह पोंछ दूँ नहीं बाहर...।"

"बिन्दा, यह सब मुझे पसन्द नहीं। उस दिन तुमसे टीका क्या लगवा लिया तुम कुछ और ही मतलब लगा बैठे। अगर हम ऐसे होते तो अपने आदमी को छोड़कर न आते।" वह आँचल से अबीर पोंछने लगी।

"हाँ-हाँ। यह सब हमें मालूम है। हमारे ऊपर रोब न गाँठो। मैं अबीर लगाऊँगा और बार-बार लगाऊँगा। तुम्हें जो करना हो कर लो।" बिन्दा अपनी मस्ती में था।

"तो लगाना। हमने बाबू से न कह दिया तो ऐसी की तैसी। हम क्या रंडी-वेश्या हैं? हँसी, हँसी जैसी होती है। हमें धोखा देकर तुम्हें बुलाने का यही मतलब था न? बड़े आये अबीर लगाने वाले। जाओ अपने रस्ते।" रधिया के स्वर में वही कठोरता थी।

बिन्दा की मस्ती उड़ गई। उसे काठ मार गया। रधिया हँसी नहीं

कर रही थी। उसका चेहरा एक बारगी रुआँसा हो आया। उसके मुँह से भर्राये हुए शब्द निकले, "वास्तव में यह सब तुम्हें पसन्द नहीं है रधिया?"

"नहीं। हँसी-हँसी जैसी होनी चाहिए।"

"हूँ। मुझसे भूल हुई।" वह सिर लटकाये मुड पड़ा।

रधिया वहीं खड़ी रही। बिन्दा पच्चीस तीस क़दम ही आगे जा पाया होगा कि रधिया ने कहा—

महुआ पर सूआ बोले जामुन पर मैना,
हमरी बरोबरी में बात मत कहना,
हमने जीत ली है मैना, हमने जीत ली है मैना
चली जा नारे नारे
तवाज गिनगिन गिनगिन, तवाज गिनगिन गिनगिन
चली जा नारे नारे।

बिन्दा ने गर्दन घुमाकर देखा। रधिया ने अँगूठा दिखाकर बिरा दिया और खेत के भीतर भागी। बिन्दा पुनः बुद्धू बन गया। उसने रधिया का पीछा किया और गन्नों से उलझते पुलझते उसके समीप पहुंचा ही था कि वह हँसती हुई खड़ी हो गई और दाहिने हाथ को फैलाकर बोली, "बस, तुम भी वहीं खड़े हो जाओ।"

बिन्दा अब मानने वाला नहीं था। उसने रधिया को बाहुपाशों में खींच लिया, परन्तु तत्काल रधिया अपने को छुड़ाती हुई अलग हो गई, "चाहे जितना समाझाओ तुम्हारी बुद्धी में कुछ धसता नहीं है। अरे पोंगादास, हम तुम्हारी ब्याही हुई स्त्री नहीं हैं। क्या समझे? हंसी दिल्लगी जितनी चाहो कर लिया करो। वह बात दूसरी है पर यह सब बुरा माना जाता है। नहीं करना चाहिए। समझे?"

"और यदि हम तुम्हें अपनी स्त्री मान लें तो?"

"वाह। क्या हमारी जैसी तुम्हारी जात में लड़कियाँ नहीं हैं, जो हमें तुम अपनी स्त्री मान लोगे? बिल्कुल घोंघा हो। अपने कुल परिवार की नाक कटाओगे? तुम पंडित और हम अहीर। कहीं ऐसा भी हुआ है?"

"तुम क्या जानो? लाखों बार हुआ है और अब भी हो रहा है। दिल लगने की बात है। जवाहरलाल नेहरू की लड़की ने तो एक पारसी से ब्याह

किया है।"

"उनकी तुम्हारी बरोबरी। वह बड़े आदमी हैं। सब कर सकते हैं। तुम्हारी तो जात भ्रष्ट हो जाएगी। घर से निकाल दिये जाओगे।"

"निकल जाएँगे। क्या हाथ-पैर नहीं हैं? जहाँ मेहनत करेंगे वहीं खाना मिलेगा।"

"मेरे लिए? भाँग की गोली चढ़ी है न तभी धरती आकास मिला रहे हो। मैं इतनी सुन्दर और हुनरवाली नहीं हूँ जिसके पीछे तुम यह सब करने को तैयार बैठे हो।" उसने इधर-उधर देखा, "अब जाओ। बड़ी देर हो गई। किसी ने देख लिया तो डूबने के लिए चुल्लूभर पानी भी नहीं मिलेगा।"

बिन्दा ने रधिया का हाथ पकड़ लिया, "सचमुच राधो तुम से यदि हम ब्याह करना चाहें तो तुम करोगी?"

"नहीं।"

"क्यों?"

"क्यों क्या? कोई एक-दो कारण हों तो बताऊँ भी। ऐसा कभी हो सकता है।" उसने सिर झुका लिया।

"यदि यहाँ नहीं तो कलकत्ता या बम्बई भाग चलें। वहाँ तो किसी प्रकार का डर न होगा।"

"क्यों नहीं? कलकत्ता-बम्बई ज़रूर भाग चलेंगे। अब जाओ तो सही।" वह तनिक रुकी, "नहीं। हम जा रहे हैं, तुम बाद में उधर से घूमकर आना।" वह चल दी।

"कनपटी के पास बालों में अबीर लगा है उसे तो पोंछ लो।" बिन्दा ने उसे रोकना चाहा।

रधिया ने आँचल से पोंछा।

"ऊहूँ। अभी है। ठहरो मैं पोंछे देता हूँ।" वह आगे बढ़ा।

रधिया समझ गई, "तुम किरपा करो। हम पोंछ लेंगे।" वह बढ़ गई।

बिन्दा हँसने लगा। "रात में मिठका आम के पास मैं तुम्हारी बाट जोहूँगा। आना जरूर।" उसने कहा।

रधिया बिना उत्तर दिये चली गई।

२४

कहावत है, "डू ऐज़ रोमन्ज़ डू।" जैसा देश वैसा भेस। उमेश ने भी होली का आनन्द लिया, परन्तु सीमा के भीतर। दो-चार लोगों से रंग भी खेला। शाम को अपने पिताजी के संग गाँव में मिलने भी गया। जहाँ-तहाँ आवश्यकतानुसार नाच देखने भी खड़ा हो गया और इस प्रकार खुशी-खुशी उसकी भी होली समाप्त हो गई। दो दिन और रुककर तथा छोटे-बड़े सबसे मिलकर वह इलाहाबाद को चल दिया। गाँव का छोटावर्ग उमेश के व्यक्तित्व से बड़ा प्रभावित और प्रसन्न था। लोगों के बीच कई दिनों तक उसकी चर्चा चलती रही। तब के खद्दर में ऐसी ही विशेषता थी।

संध्या को उमेश इलाहाबाद पहुँच गया। रास्ते भर वह जया की कल्पनाओं में डूबता-उतरता आया था। जल्दी-से-जल्दी इलाहाबाद आये, यही बेचैनी थी। मालूम पड़ रहा था जैसे वर्षों से उसने जया को न देखा हो। उसे देखने के लिए अत्यधिक विह्वलता थी। स्टेशन से बाहर निकलते ही उसने रिक्शा किया, "कटरा", वह बोला।

रिक्शे वाले ने पैडिल घुमाई, "नये या पुराने, बाबूजी ?"

"पुराने, चौराहे पर।"

रिक्शा वाला छननऽऽऽ छन्नऽऽ घंटी बजाता उड़ चला। इलाहाबाद के रिक्शे बड़े हलके होते हैं।

घर पर उमेश को केवल नौकर मिला। पूछने पर मालूम हुआ कि सब लोग सिनेमा देखने गये हैं। जया के बड़े भाई जो दिल्ली में काम करते हैं वह भी आये हुए हैं। उमेश की प्रतीक्षा की घड़ियाँ और बढ़ गईं। कुछ अपने ऊपर और कुछ जया के ऊपर झुँझलाहट आने लगी। जया को जब सूचना थी कि आज वह आ रहा है तो उसे सिनेमा जाना नहीं चाहिए था। वह बहाना कर सकती थी। करने वाले के लिए लाख रास्ते हैं। वह बड़ी देर तक छत पर इधर से उधर टहलता रहा। मन-ही-मन कुढ़ता और गुनगुनाता रहा।

नौकर ने कमरा साफ करके विस्तर लगा दिया। उमेश ने बक्स से कपड़े निकाले और नहाने चला गया। नहाते समय पुनः जया के सम्बन्ध में तारतम्य बंध गया। किन्तु इन विचारों का निष्कर्ष जब वह स्नान करके ऊपर आया तो जया के पक्ष में था। उसने सोचा यह कैसे सम्भव था कि जब घर के सभी व्यक्ति सिनेमा जा रहे हों तो वह रुक सके फिर जब उसके भाई भी आये हों। उसका जाना नितान्त आवश्यक था। उसे कुछ शान्ति मिली। वह छत पर कुर्सी निकालकर बैठ गया और जया के आगमन की प्रतीक्षा होने लगी।

चाँदनी टहक रही थी। ठंडी हवा मन्द-मन्द चल रही थी। वातावरण में शान्ति और सरसता थी। फिर क्या था? जब एक भावुक हृदय अपनी प्रतिभा की प्रतिक्षा कर रहा हो और यह भी निश्चित हो कि घंटे-डेढ़-घंटे में वह आ रही होगी तो स्वाभाविक रूप से उसका काव्य-तत्व उभरना अनिवार्य हो जाता है। उमेश गुनगुनाने लगा। धीरे-धीरे गुनगुनाहट बढ़ी। स्वयं अपने स्वरों में बड़ी मिठास प्रतीत होने लगी। वह उठकर कमरे से तानपूरा निकाल लाया और तारों को मिलाकर मधुर स्वर में 'पिया बिनु नहीं आवत चैन' की एक ही पंक्ति को बार-बार चढ़ा-उतारकर आलापों से अलंकृत कर गाने लगा। वह लगभग इसे पौन घंटे तक गाता रहा। तदुपरान्त समाप्त किया।

कुर्सी के सहारे उसने तानपूरा रख दिया और तनिक सुस्ताने लगा। अचानक उसे वह लोकगीत स्मरण हो आया कि जिसे उसने एक दिन गाँव के एक लड़के को आम के पेड़ पर बैठकर गाते हुए सुना था। उमेश ने तानपूरा उठाया और पुनः गाने लगा—

तोर कजरवा दिल जानी गजब करे।
गजब करे हो राम गजब करे,
तोर कजरवा दिल जानी गजब करे॥
मीठी मीठी वोलियाँ वो हँस के ठिठोलियाँ,
साँचि कहूँ रे गोरी लगे दिल में गोलियाँ,
गजब करे हो राम गजब करे;
तोरी चाल मस्तानी गजब करे॥

उमेश मन-ही-मन मुस्करा उठा और आगे की पंक्तियों को सोचता हुआ पहली पंक्ति को दुहराता रहा। अचानक स्मरण हो आई—

मन में बस गई तोरी सुरतिया,
चैन न आये गोरी दिन वो रतिया,
गजब करे हो राम गजब करे;
मुसकान मुसकानी गजब करे।
तोर कजरवा दिल जानी गजब करे॥

उमेश इन्हीं पंक्तियों को बार-बार दुहरा-दुहराकर बड़ी देर तक गाता रहा। उसके आगे की पंक्तियाँ उसे याद नहीं आ रही थीं।

गीत समाप्त होने के पूर्व ही नौकर ने आकर सूचना दी कि सब लोग आगये हैं और उसे बुला रहे हैं। उमेश ने तानपूरा रखा और नीचे आया। कृष्णमुरारीलाल ने जया के बड़े भाई से परिचय कराया। दोनों ने हाथ मिलाये और बैठ गए। कृष्णमुरारीलाल घर का समाचार पूछने लगे और फिर इधर-उधर की तमाम बातें होने लगीं। उमेश के नेत्र अब भी जया को न देखकर अकुला रहे थे, परन्तु विवशता थी। सब्र करना उत्तम था। जया अपने कमरे में सम्भवतः कपड़े बदल रही थी।

खाना जब लगने लगा तब वह कोई सामान लेकर आई। नमस्ते किया और पुनः कोई सामान लेने चली गई। जैसे उमेश का आगमन उसके लिए विशेष महत्व नहीं रखता था। उमेश के हृदय में मानो किसी ने कुछ चुभो दिया हो। जिसके लिए इतनी तड़पन थी वह सीधी आँख भी न देखे। उसका मन बैठ गया। प्रसन्नता खिन्नता में परिवर्तित हो गई। किन्तु फिर भी मस्तिष्क में एक प्रश्न उठा—सम्भव है उसने बड़े भाई के कारण ऐसा व्यवहार अपनाया हो। पर अच्छी तरह नमस्ते करने और मिनट-दो-मिनट खड़े होकर बातें करने में क्या आपत्ति थी? यह तो शिष्टाचार का तक़ाज़ा है। यदि वह चाहती तो कर सकती थी। इसके अतिरिक्त वह उसे संगीत भी तो सिखाता है। उसके भाई को इसकी जानकारी भी होगी। तब उसे बात करने में कानसी परेशानी थी?

पुनः जया कोई सामान लेकर आई। उमेश ने वास्तविकता जानने का प्रयत्न किया, "एक गिलास पानी लाइए।" उसने कहा।

"अच्छा।" उसने उसी गंभीरता से कहा और चली गई।

नौकर पानी लेकर आया। वह स्वयं नहीं आई। उमेश का हृदय टुकड़े-टुकड़े हो गया। स्पष्ट हो गया कि जया स्वयं अपनी ओर से उमेश से कतरा रही थी। बड़े भाई वाली कोई बात नहीं थी।

खाना लग गया। सब खाने लगे। उमेश भी खाता रहा, किन्तु भोजन के स्वाद का उसे ज्ञान नहीं,उसकी बुद्धि तो जया के इस अनायास परिवर्तन के कारण को ढूँढ रही थी। थाली में जितना था उससे अधिक उसने कुछ भी नहीं लिया और सबके पहले ही अनुमति लेता हुआ उठ पड़ा।

यात्रा की थकान होने पर भी रात को नींद आने में काफी समय लग गया।

दो दिन रुककर तीसरे दिन जया के भाई चले गए। इन दो दिनों में उमेश और जया की कोई विशेष बात-चीत नहीं हुई। और जब-जब उमेश ने इसके लिए प्रयास किया, जया 'हाँ, हूँ' कहकर पुनः अपने काम में लग गई। उमेश बड़ा परेशान था। तबीयत कहीं नहीं लग रही थी। यद्यपि इतने दिनों बाद कालेज खुलने के फलस्वरूप यार-दोस्तों से मिलना-जुलना, उनकी सुनना और अपनी सुनाना स्वाभाविक था और वह ऐसा कर भी रहा था, परन्तु सत्यता यह थी कि उसके मन की विकलता उसे अन्दर-ही-अन्दर मथ रही थी। मन कहीं लगता नहीं था। इच्छा होती थी कि छुट्टी होते ही वह शीघ्र घर पहुँच जाए और जया से एकान्त में मिलकर उससे कारण पूछे, परन्तु उसे मित्रों से जल्दी छुट्टी नहीं मिलती और मिलती भी तो घर पर जया उसे एकान्त का अवसर नहीं देती। चौथे दिन उमेश ने एक पत्र जया के नाम लिखा—

प्रिय जया,

मेरे और तुम्हारे बीच कैसे संबंध रहे हैं उसे मैं दुहराने की आवश्यकता नहीं समझता और न उन बातों की याद दिलाने की आवश्यकता समझता हूँ जो तुमने मुझसे कही थीं। तबीयत तबीयत की बात है। जो तुम्हें कभी अच्छा लगता था अब नहीं लगता। खैर, तुम्हें जिसमें सुख मिले वही करो, लेकिन इतना मैं अवश्य जानना चाहता हूँ कि किसी के शरीर पर घाव बनाने के बाद उस पर नमक छिड़कने की कैसी लालसा ? सम्भवतः मेरा

भाव स्पष्ट हो गया होगा। तुम्हारे उत्तर मिलने के उपरान्त फिर तुम्हें मुझसे किसी तरह की शिकायत नहीं रह जाएगी।

उमेश

रात में जब जया अपने कमरे में पढ़ रही थी तो उमेश उसकी मेज़ पर पत्र रखकर चला आया।

दो दिन बीत गए। जया ने कोई उत्तर नहीं दिया। उमेश को बड़ा बुरा लगा, पर वह कर क्या सकता था ? हृदय की दास्ता सारी दास्ताओं से हेय और नारकीय है। यहाँ अपनी कोई वस्तु रह ही नहीं जाती। सब पर अधिकार और एक छत्र अधिकार उसी का हो जाता है जिसके पास यह चला जाता है। दो दिन और बीते फिर भी कोई उत्तर नहीं मिला, परन्तु उमेश के लिए उत्तर लेना अत्यन्त आवश्यक था। जैसे भी हो वह उत्तर लेकर रहेगा। वह दूसरा उपाय सोचने लगा। उसके दिमाग में आया कि क्यों न आकाश के द्वारा मधु से कहलाया जाए परन्तु तत्काल मन ने इसका खंडन किया। यह उचित नहीं है। वह तीसरा उपाय सोचने लगा। तरकीब सूझ गई।

उमेश के कमरे के सामने छत थी और एक छोटी छत पीछे भी थी जहाँ अब कृष्णमुरारीलाल सपत्नीक सोते थे। पर जया की आदत कमरे में सोने की थी और वह वहीं पंखा चलाकर सोया करती थी। नौकर, उमेश वाली छत पर सोता था। लगभग रात के बारह–एक का समय होगा। उमेश उठा और दबे पाँव उसने पीछे की आहट ली। दोनों खर्राटे भर रहे थे। वह पंजे के बल सीढ़ी उतरता हुआ जया के कमरे में आया और उसकी खाट पर बैठ गया। उसने धीरे से उसे हिलाया। वह चौंकी और हड़बड़ा कर कुछ कहने ही वाली थी कि उमेश ने उसके मुँह पर हाथ रख दिया "मैं हूँ उमेश।" वह फुसफुसाया।

जया विस्फारित नेत्रों से देख रही थी, "क्या बात है ? इस समय··· कोई आगया तो ?" वह उठने को हुई।

उमेश ने दबा लिया, "ऐसे ही लेटी रहो," उसने अपना मुँह उसके मुँह से सटा लिया "धीरे बोलो।"

जया ने हाथ जोड़े, "जाइए। कल आपसे बातें करूँगी। कहीं जीजाजी

ग्रा जाएँ।"

"ग्रा जाएँ तो ग्रा जाने दो। पहले यह बताग्रो कि तुमने मेरे पत्र का ।र क्यों नहीं दिया ? तुम्हें मुझसे मिलना पसन्द नहीं है ? ठीक है। पर ष्यता के नाते उत्तर तो दे दिया होता। क्या तुम मेरे लिए ग्रब दो शब्द लिख नहीं सकती ? तुम···।"

जया घबड़ाहट ग्रौर भय के कारण पसीने-पसीने हो उठी थी। वह में गिड़गिड़ा पड़ी, "मैं ग्रापसे क्या बताऊँ ? कुछ समझने की भी शेश कीजिए। कल ग्रापसे सब कुछ बताऊँगी। ग्रब ग्राप जाइए। मेरी ग्रत का तो ध्यान रखिए। यदि कोई···।"

पर उमेश बिना सब कुछ साफ किये कहाँ जाने वाला था, "मगर बात है वह भी तो सुनूं ? ग्रौर ग्रगर कोई बात थी तो पत्र में क्यों नहीं दिया। उत्तर तो तुम्हें प्रत्येक दशा में देना ही था। तुम्हीं सोचो मैं का क्या मतलब लगा सकता हूँ ? मेरे···।"

"ग्रब जाइए। मैं ग्रापके पैरों पड़ती हूँ। कल उत्तर ग्रवश्य दूंगी। ग्राप जाइए।" वह रुग्राँसी होती जा रही थी।

"बात क्या है ? कुछ तो हिन्ट दो।" जया को ग्रपनी पड़ी थी ग्रौर को ग्रपनी।

"कल सब बताऊँगी। ग्रब ग्राप जाइए। कोई ग्रागया तो क्या " जया के नेत्रों से ग्राँसू बह चले।

उमेश उठा। ग्राँसुग्रों के सामने टिकना कठिन होता है, "कल कब कहाँ मिलोगी ?" उसने झुककर पूछा।

"सब ग्रापको मालूम हो जाएगा। जाइए।"

उमेश बाहर निकल गया।

२५

किसी चीज़ का चसका लगना ही बुरा होता है। स्वाद मिल जाने पर तबीयत को रोकना कठिन हो जाता है। इच्छाएँ बलवती हो उठती हैं। भलाई-बुराई का ध्यान नहीं रह जाता। मन का उतावलापन बढ़ जाता है। सदैव वस्तु की उपलब्धि की लालसा बनी रहती है। ठीक यही दशा बिन्दा की हो गई थी। न दिन में चैन और न रात में नींद। रधिया, बिन्दा के तन और मन दोनों में समा गई थी। बिन्दा के उठने-बैठने, खाने-पीने, सोने-जागने सबमें रधिया ही रधिया थी। रधिया का विचित्र सम्मोहन था। नदी में प्रवाह के संग बहती नाव के सदृश बिन्दा बिना पीछे का ध्यान किये आगे बढ़ने लगा था। उसे यह बिलकुल ध्यान नहीं रह गया था कि तूफान के आने पर बढ़ाव की यह तेज़ी हाला-डोला में परिवर्तित होकर नाव को नदी के गर्त में डूबो सकती है।

उस रात को रधिया मिठका आम के पास नहीं आई थी। बिन्दा ने बड़ी रात तक प्रतीक्षा की थी। दूसरे दिन भी कोई अवसर नहीं मिला, और तीसरे दिन भी नहीं। इस प्रकार पाँच-छः दिन बीत गए। बिन्दा नित्य सिवनन्दनलाल के बाग में बैठकर पीयरघट्टा से आती हुई रधिया की बाट जोहा करता, परन्तु पता नहीं रधिया को क्या सनक सवार हो गई थी कि वह गन्ने के खेतों से न होकर थोड़ा चक्कर लगाकर बाहर-बाहर से आती। बिन्दा कुढ़ कर रह जाता, किन्तु अन्त में यह सोचकर कि सम्भवतः कल वह इधर से आवे, वह दूसरे दिन की बड़ी बेसब्री से प्रतीक्षा करने लगता और इस तरह कल कल करते करते पाँच-छै दिन और गुज़र गए। रधिया बाहर-ही-बाहर से आती रही।

बिन्दा के अब समझ में आया कि रधिया ने जान-बूझकर मार्ग बदला है, परन्तु बदलने का कारण क्या है, इसे वह अब भी नहीं समझ पाया था। समझ में न आने वाली बात भी थी। जब वह गाँव में मिलती तो बातचीत या उसके अन्य भावों से कोई अन्तर नहीं दिखलाई पड़ता। वह हँसती

हुई उसी कटाक्षपूर्ण नेत्रों से देखती, रिश्ते के अनुसार सबके सामने ठिठोली भी करती और लोगों की आँखें बचाकर मुँह बिराती हुई चली भी जाती। तात्पर्य यह कि कोई लड़ाई-झगड़ा या रूठने वाली बात का अनुमान नहीं लग रहा था। तब प्रश्न था मार्ग परिवर्तन की नींव का। वह ऐसा क्यों कर रही थी ? बिन्दा सब सोचकर भी निष्कर्ष निकालने में असमर्थ था।

दो-चार दिन और बीते। बिन्दा के अब भी कारण समझ में नहीं आया और न कोई ऐसा अवसर ही मिला कि वह एकान्त में रधिया से मिनट-दो-मिनट मिलकर कुछ पूछ सके। यद्यपि अवसर की खोज में उसने ज़मीन आसमान के कुलाबे एक कर दिये थे।

अँधेरा हो गया था। बिन्दा उमेश के कुएँ पर अन्यमनस्क बैठा अपनी गुत्थियों को सुलझा रहा था। उसके पास अब और कोई काम नहीं था। रधिया किस प्रकार प्राप्त होगी, यही एक चिन्ता थी। तब तक अचानक एक बैल खाँवां फाँदता मन्दिर के उस ओर से भागता हुआ निकल गया और आगे अरहर के खेतों में चरने लगा। थोड़ी देर बाद एक युवती भी हाथ में लाठी लिये दौड़ती हुई आई और दूर से आवाज़ लगाकर पूछा, "किधर गया है ?" उसे कुएँ पर बैठे हुए किसी व्यक्ति का आभास मिला था।

बिन्दा चौंक पड़ा। बिजली की भाँति प्रसन्नता सारे शरीर में दौड़ गई, परन्तु उसकी बुद्धि ने भी इस समय कमाल कर दिखाया। बिन्दा ने मुँह में उँगली डालते हुए बताया, "सामने अरहर के खेत में चर रहा है।"

रधिया दौड़ती हुई आगे निकल गई।

बिन्दा उठा और दबे पाँव पीछे लग लिया।

रधिया ने खेत में घुसकर बैल पकड़ लिया और उसकी पगही खींचती हुई मुड़ी ही थी कि पीछे खेत में खड़खड़ाहट की ध्वनि सुनकर तनिक चौंकी "कौन ?" अँधेरे के कारण सूरत पहिचान में नहीं आ रही थी।

बिन्दा ने कोई उत्तर नहीं दिया और समीप आते ही रधिया को अंकवार में भींच लिया और उसे बलपूर्वक बैठ जाने के लिए विवश कर दिया। रधिया बैठ तो गई, लेकिन उसे धक्का देती हुई उसकी भुजाओं से अलग हो गई, "बड़े निर्लज्ज हो। क्या दिन-रात मेरी ही टोह में रहा करते हो ? खूब

है तुम्हारी
"मैं भी
में गिरकर ज

२६

"क्यों ?
छिपकर बैठी न कालेज जाने से पहले जया किसी पुस्तक के बहाने ऊपर
मर्यादा की। अ ज़े से पत्र फेंकती हुई शीघ्रता से नीचे आ गई। उमेश को
हमारी तो नाक ी नहीं दिया कि वह उसे रोक सके। उमेश ने पत्र खोलकर
"हमें शिक्षा ते
और गाँव की बड़ी चि
जब मिलो तब वही पाठ से आप रुष्ट हैं, उसका एक कारण है। न मालूम
रहा परन्तु तुम्हारा कोई पत आपके सम्बन्ध की कुछ जानकारी हो गई है।
उसे भी छोड़ दिया और अब ब से कहा भी है। दीदी ने मुझसे पूछा था।
करना था तो मुझे इतने आगे बढ़ा उसे बेसिर-पैर की बात बताकर उन्हें
"अच्छी कही तुमने। क्या हमने श्वास हो गया, लेकिन जीजाजी को
लिया करो और बेसिर-पैर की बातें पूछा ने अनुभव किया है। वह अब भी
तक पोंगा रहोगे। कई बार कहा है कि हमारे लोगों को दस-पाँच दिनों
तुम्हारी जात में तुम्हें मिल जाएँगी, पर न मालूम तुम्हारे भेजे में कि उन्हें
घुसती क्यों नहीं है ? बेकार मेरे पीछे हाथ धोकर पड़े रहते हो। छोड़ो हाथ।
कहीं माई ढूँढ़ती हुई इधर न आती हो।"

"छूट चुका।"

"क्या ?"

"क्या-वया से अब विन्दा नहीं डरने का। आज कुछ तय करना पड़ेगा।"

"क्या तय करना पड़ेगा ?"

"यही कि तुम कल से हमें रोज़ यहीं इसी समय मिला करोगी।"

"क्यों ?"

"बैठकर बातें करने के लिए।"

"इस अँधेरे में। बात करने की इतनी भूख है तो संध्या समय द्वार पर आजाया करो। क्या वहाँ बातचीत नहीं हो सकती ?"

हुई उसी कटाक्षपूर्ण नेत्रों से देखती, रिश्ते के अनुसार सबके साम। समझाया
भी करती और लोगों की आँखें बचाकर मुँह बिराती हुई चली? ?"
तात्पर्य यह कि कोई लड़ाई-झगड़ा या रूठने वाली बात का अ कती है ?"
लग रहा था। तब प्रश्न था मार्ग परिवर्तन की नींव का। कता हूँ अथवा
कर रही थी ? बिन्दा सब सोचकर भी निष्कर्ष निकालने में

दो-चार दिन और बीते। बिन्दा के अब भी कारण समझनी इज्जत की
और न कोई ऐसा अवसर ही मिला कि वह एकान्त में र। अब चलेंगे।"
दो-मिनट मिलकर कुछ पूछ सके। यद्यपि अवसर की खो
आसमान के कुलाबे एक कर दिये थे। तय हो जाएगा। हमें

अँधेरा हो गया था। बिन्दा उमेश के कुएँ पर
गुत्थियों को सुलझा रहा था। उसके पास अ क्या जरूरत है ?" उसने
रधिया किस प्रकार प्राप्त होगी, यही एक
एक बैल खाँवां फाँदता मन्दिर के उस र ऐसी स्थिति में माना भी नहीं
और आगे अरहर के खेतों में चरने योग किया और रधिया को अपनी
हाथ में लाठी लिये दौड़ती हुई ?"
"किधर गया है ?" दाँत गड़ा दिये। बिन्दा ने 'सी' किया और
था। । रधिया अलग हो गई, "कैसा लगा ?" उसने पूछा, "जब
तुम अपना बल दिखा सकते हो तो क्या मैं नहीं दिखा सकती ?" वह उठने
को हुई।

बिन्दा ने पुनः पकड़ा, "अभी देखता……।"

तब तक कान में आवाज़ पड़ी, "रधिया, ओ रधिया ?"

"लो आ गये न बाबू ? तुम किसी दिन नाक कटवाकर रहोगे।" वह
खड़ी होगई और चिल्लाकर बोली, "पकड़ लिया है बाबू। आ रही हूँ।"
वह चलने को हुई।

'रधिया।' बिन्दा धीरे से बोला।

"आऊँगी पर यह समझलो कि आज जैसी हरकत करोगे तो फिर
हमारी तुम्हारी बातचीत नहीं होगी। समझ गये न ?"

"कान पकड़ता हूँ, मैं बिल्कुल नहीं करूँगा।"

रधिया मुँह फेर कर मुस्कराती हुई चली गई।

२६

दूसरे दिन कालेज जाने से पहले जया किसी पुस्तक के वहाने ऊपर गई और दरवाज़े से पत्र फेंकती हुई शीघ्रता से नीचे आ गई। उमेश को इतना अवसर ही नहीं दिया कि वह उसे रोक सके। उमेश ने पत्र खोलकर पढ़ा। लिखा था—

....

मेरे जिस व्यवहार से आप रुष्ट हैं, उसका एक कारण है। न मालूम कैसे जीजाजी को हमारे-आपके सम्बन्ध की कुछ जानकारी हो गई है। और उन्होंने इस बात को दीदी से कहा भी है। दीदी ने मुझसे पूछा था। मैं दीदी पर बहुत बिगड़ी और उसे बेसिर-पैर की बात बताकर उन्हें विश्वास दिला दिया। दीदी को विश्वास हो गया, लेकिन जीजाजी को सम्भवतः अब भी सन्देह है—ऐसा मैंने अनुभव किया है। वह अब भी अनजान बनकर जानने के प्रयत्न में हैं। अभी हम लोगों को दस-पाँच दिनों तक इसी रूप से रहना है, जिससे जीजाजी को विश्वास हो जाए कि उन्हें जो कुछ बताया गया है, बिल्कुल गलत है। सम्भवतः आप मेरे विचार से सहमत होंगे। वैसे अगर अवसर निकल सका तो मधु के द्वारा कोई प्रोग्राम बनाकर पिक्चर या कम्पनी बाग चलेंगे। मेरे दिन-रात कैसे कटते हैं, उसे मैं ही जानती हूँ। आप शाम को देर से न आया कीजिए। मैं बहुत 'बोर' महसूस करती हूँ। अगर और कुछ न सही तो आप दीदी के पास बैठकर बातें तो कर सकते हैं। इसी बहाने मुझे भी बात करने का अवसर मिल जाया करेगा। आज देर न कीजिएगा।

आपकी

जया

उमेश ने पत्र पढ़कर रख दिया और सोचने लगा उस व्यक्ति के विषय में जिसके द्वारा कृष्णमुरारीलाल को ऐसी जानकारी हो सकी थी। वह बड़े अचरज में था। ख़ैर, जो भी हो हृदय में बिंधता हुआ शूल तो मिटा। इतने

दिनों की उलझन तो दूर हुई। मन आह्लादित हो आया। जया उसका कितना ध्यान रखती है। उसके लिए क्या नहीं करने के लिए तत्पर रहती है। उसी की नींद सोती है और उसी की नींद जागती है। वह स्वयं कितनी परेशान है। उसका प्रेम सच्चा प्रेम है। उसके लिए वह सब-कुछ कर सकती है। उमेश बहुत देर तक इस प्रकार की सुखद कल्पनाओं में विचरण करता रहा। तदुपरान्त उठा और कालेज जाने की तैयारी करने लगा।

जया के कथनानुसार ही उमेश ने आचरण बरतना आरम्भ किया। सन्ध्या को वह अधिकतर आने का प्रयत्न करता और जया की दीदी के पास बैठकर घण्टों इधर-उधर की बातें करता। जया भी पास में बैठी रहती और इस प्रकार और कुछ नहीं तो दोनों की आँखों की प्यास तो बुझा करती थी। दो-चार दिन बीते। उमेश अब और अधिक गम्भीर बन गया था। वह परोक्ष रूप से कृष्णमुरारीलाल के हृदय में बैठा देना चाहता था कि जया और उसके बीच किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है। दिखावे के लिए उसने बिल्कुल जया से बातचीत बन्द कर दी थी। अब दोनों में पत्रों का अधिक आदान-प्रदान होने लगा था।

इस प्रकार कुछ दिन और बीते और फिर परीक्षा का भूत सिरपर आ खड़ा हुआ। जो कुछ थोड़ी-बहुत थी वह भी समाप्त हो गई। पढ़ाई की व्यस्तता बढ़ गई। निश्चित तिथि पर परीक्षा आरम्भ हुई और दोनों परीक्षा देने लगे।

कृष्णमुरारीलाल के मन के भीतर चाहे जो हो, परन्तु उमेश और जया की इतने दिनों की तपस्या ने उन्हें अपने भावों में परिवर्तन लाने के लिए विवश कर दिया। यद्यपि पहले भी उनके व्यवहार से यह आभास नहीं मिल सका कि वह उमेश और जया पर किसी प्रकार का सन्देह करते हैं, परन्तु अब तो उसमें लेशमात्र की भी गुंजाइश नहीं रह गई थी। अब वह बड़े चाव से दोनों को पास बिठलाकर चाय पिलाते, उनके पर्चे देखते और उनके सम्बन्ध में पूछते-पाछते। एक-एक, दो-दो करके पर्चे भी समाप्त हो गए। अब परीक्षा-फल की प्रतीक्षा होने लगी।

बहुत दिनों बाद अवकाश मिला था। लग रहा था जैसे कई वर्षों की अवधि समाप्त हुई है। बड़ी खुशी थी। जैसे कृपण को अपनी इकट्ठी की

हुई धनराशि के देखने में, पहलवान को अपने प्रतिद्वन्द्वी पहलवान को पछाड़ देने में, कवि-लेखकों को अपनी रचनाओं की प्रशंसा सुनने में तथा निराशा में आशा की ज्योति मिलने में जिस आह्लाद का अनुभव होता है, ठीक वैसा ही आह्लाद विद्यार्थी को अपनी परीक्षा की समाप्ति पर होता है। परीक्षा समाप्ति के दूसरे दिन कृष्णमुरारीलाल सपरिवार सिनेमा देखने गये, जिसमें उमेश भी था और मधु भी थी। लौटते समय सिविल लाइन्स में रसगुल्ले और रसमलाई के भी दौर रहे और तब मधु को छोड़ते हुए कृष्णमुरारीलाल घर आए।

दस मई तक नतीजा सुनाया जाने वाला था। अभी कई दिन थे। अब कालेज में केवल हाज़िरी देने जाना पड़ता था—सवेरे के समय। परन्तु उमेश को अधिकतर घर लौटने में बारह-एक बज जाया करते थे। दोस्तों से छुट्टी मिलने में बड़ी कठिनाई होती थी। आज पुनः उमेश एक के लगभग आया था। उसने घर में घुसते ही नौकर को खाना लाने के लिए आवाज़ दी और ऊपर जाने को हुआ कि जया का स्वर सुनाई पड़ा, "घर में आते ही भूख लग आती है? आपका भी जल्वा अनोखा है।"

उमेश लौट पड़ा। कमरे में आया। जया ब्लाउज सी रही थी। उमेश ने इधर-उधर देखकर भाभीजी के कमरे में झाँका। भाभीजी वहाँ नहीं थीं। उसने पूछा, "आपकी दीदी कहाँ हैं?"

जया होंठों में मुस्कराई, "क्यों?"

"योंही।" वह जया से सटकर बैठ गया।

"अरे···दूर बैठिए, दूर।" वह खिसकने को हुई।

उमेश ने उसे पकड़ लिया, "तुम्हारी दीदी कहाँ हैं?"

"पड़ोस में गई हुई हैं। आरही होंगी।"

उमेश ने झुककर उसके अधरों को चूम लिया। तब तक बाहर दरवाज़े पर किसी की आहट मिली। जया घबड़ा कर अलग हट गई। उमेश खड़ा हो गया, "आजकल आप सिलाई-पुराई में बहुत जुटी रहती हैं। मालूम हो रहा है···।" वह बातें करने लगा। मानो वह अभी-अभी कमरे में आया हो।

"बीबीजी," नौकर बर्फ लेकर आया था, "पानी बनाऊँ?"

"नहीं। पहले उमेशबाबू के लिये खाना ले आओ।" उसने उमेश की ओर देखा, "जाइए कपड़े बदल आइये।"

उमेश झटपट कपड़े बदलकर आगया। नौकर कमरे में खाना रखकर पानी बना लाया। "ठीक है, जाओ!" जया ने कहा।

"आप पानी नहीं पीयेंगी ?"

"नहीं।"

वह चला गया और चौका-बरतन के धंधे में लग गया।

"ऐसी पट्टी आँखों पर न बाँधा कीजिये कि स्वयं तो डूबें ही दूसरे को भी ले डूबें।" जया ने बनावटी क्रोध की मुद्रा बना ली थी।

"क्यों, मेरे साथ डूबने में आनन्द नहीं मिलेगा ? ऐसा सुन्दर लड़का कहीं और आपने देखा है ?"

"जी नहीं। कहाँ देखते ? इस शहर में तो है नहीं।" उसने आँखें नचाई "अगर इतना न कहने आये तो लोगों को सन्तोष कहाँ से मिले ? वास्तविक आनन्द तो ख्याली-पुलाव पकाने में है।" वह पुनः ब्लाउज़ को सीने लगी।

"भगवान करे, मेरे जैसा सबको ख्याली-पुलाव पकाने का अवसर मिले। जब ख्याली-पुलाव में ऐसी-ऐसी लड़कियाँ अपने आप खिंचती चली आती हैं तो राम जाने असलियत पर क्या आलम होगा ?"

"ज़रूर चली आती होंगी। तभी तो रात में चोरों की भाँति कमरे में घुसने का साहस किया जाता है। घाव पर नमक न छिड़कने की विनती की जाती है।"

"ऐसा साहस तुम तो कभी करो, मैं अपनी चीज़ को योंही थोड़े छोड़ दूँगा। वैसे नहीं तो ज़बर्दस्ती सही। बिना प्राप्त किए मानने का नहीं।" काफी दिनों बाद आज इस प्रकार की बातें करने का दोनों को अवसर मिला था।

"बड़े आये प्राप्त करने वाले। मान न मान मैं तेरा मेहमान। अब देखूँगी आपकी ज़बर्दस्ती ? अभी तो आठ-दस दिन और यहाँ रहना है।"

उमेश भोजन कर चुका था। वह उठा और स्वयं थाली लेकर नल के ास रख आया जहाँ नौकर बर्तन साफ कर रहा था। वह झटपट मुँह हाथ

धोकर कमरे में घुसा ही था कि जया खड़ी होती हुई बोली, "चलिये बरामदे में बाहर बैठेंगे।"

"क्यों ? यहीं बैठो न।"

"नहीं। दीदी अब आरही होंगी।"

"अच्छा दस मिनट और बैठलो तो फिर चले चलेंगे।"

जया ने गर्दन हिलाई "आपके पास अकेले बैठने का अर्थ है किसी संकट को निमंत्रण देना। आपको अपनी धुन के आगे और कुछ तो दिखलाई पड़ता नहीं। चलिये बाहर।" वह चलने को हुई।

उमेश उसके सामने आकर खड़ा हो गया और हँसने लगा।

"दीदी आरही होंगी। कुछ ध्यान तो रखा कीजिये।" उसने बगल से निकलना चाहा।

उमेश ने उसे पकड़ लिया।

"नहीं छोड़िये। दीदी आरही होंगी।" वह बाहर आकर कुर्सी पर बैठ गई।

उमेश हँसता हुआ आकर बैठ गया। उसने पूछा, "घर कब तक जाने का विचार है ?"

"रिज़ल्ट सुनने के दो-तीन दिन बाद।"

"इतनी जल्दी ?"

"भाईसाहब ने दिल्ली बुलाया है। जीजाजी से फौरन भेजने को कह गये हैं। आप कब तक जा रहे हैं ?"

"तुम्हारे जाने के बाद। अकेले यहाँ क्या करूँगा ? पाँच-सात दिन और नहीं रुक सकतीं ?"

"मुश्किल है। दिल्ली जाना है इसलिए। आप गाँव जाएँगे या कानपुर ?"

"कानपुर ही जाने की सोच रहा हूँ। अब तो हमारी तुम्हारी भेंट जुलाई में होगी ?"

जया ने गर्दन हिलाई।

"पत्र लिखोगी ?"

"अभी कुछ निश्चित रूप से नहीं कह सकती। वैसे आपके कानपुर का

पता क्या है ?"

उमेश ने पता बताया। जया ने कमरे में जाकर लिखा और पुनः आकर बैठ गई।

"कल-परसों में" उमेश ने प्रस्ताव रखा, "मधु के संग 'मैटनी शो' का प्रोग्राम बनाओ। जिस पिक्चर की तय करो हम दोनों वहीं मिल जाएँगे। मधु के संग तो तुम अकेले जा सकती हो ?"

"रिसकी है। अगर जीजाजी को किसी प्रकार मालूम हो गया तो ?"

"मालूम नहीं होगा। तुम बताओ तो सही। हम लोग वहाँ होंगे ही नहीं। जब पिक्चर शुरू हो जाएगी तब आएँगे। सीट तुम लोग रोके रखना।"

तब तक बाहर का दरवाज़ा खुला और जया की दीदी आती हुई दिखलाई पड़ीं।

२७

लगभग रात के आठ का समय होगा। जमुना में मन्थरगति से एक नाव संगम की ओर बहती चली जा रही थी। चाँद आकाश में चमक रहा था और उसकी शीतल चाँदनी जमुना की शीतलता को अधिक बढ़ाकर वातावरण को ठगिया बना रही थी, अपने में तन्मय होजाने की जड़-चेतन में भावना उत्पन्न कर रही थी। रात्रि का सौन्दर्य निखर आया था। शोभा बढ़ गई थी। किनारे पर बने हुए मकानों में जलते प्रकाश विशेष प्रकार की आभा उत्पन्न करने लगे थे और किले के ऊपर, बहुत ऊपर लाल-हरी बत्तियों की रोशनी इस प्राकृतिक छटा में निस्सन्देह चार चाँद लगा रही थी। इस समय जमुना का यह प्रदेश बड़ा ही सुहावना और शान्तिमय था।

नाविक ने डाँडे चलाना बन्द किया और उन्हें अन्दर रखते हुए जेब

से रूमाल निकालकर मुँह पोंछा और सामने गावतकिया के सहारे उस अर्धलेटी रूपसी के समीप आकर बैठ गया। "किस दुनिया की सैर हो रही है?" उसने मुस्कराते हुए पूछा और एक दूसरे गावतकिये को खींचकर उसके बगल में लेट गया।

"उसी दुनिया की जिसमें आप मुझे सैर करा रहे हैं।" वह उठकर सीधी बैठ गई, "चलाते-चलाते थक गए न?"

युवक ने युवती के अन्तिम वाक्य पर ध्यान नहीं दिया। वह उसी भाव में बोला, "फिर तो मैं बड़ा तक़दीरवाला हूँ। लेकिन एक बात समझ में नहीं आई कि मेरी दुनिया में सैर करने की इच्छा रखते हुए भी मुझे संग न रखने की विचित्रता कैसी?"

"मैं मतलब समझी नहीं।" वास्तव में युवती समझ नहीं सकी थी।

"आप नहीं समझेंगी। इतनी मेहनत के बाद तो अवसर मिला कि आपके क़रीव लेटकर कुछ बातें करूँ, लेकिन मेरे लेटते ही आप उठकर बैठ गईं। ऐसी खोटी तक़दीर किसकी होगी?"

युवती हँस उठी, "आप भी विचित्र हैं।" उसने बगल में रखे वायलिन को निकाला और तारों को मिलाने लगी, "सुनियेगा, बजाऊँ?"

युवक ने गरदन हिलाई और उसे एकटक निहारने लगा।

नाव जमुना के बीचोबीच खड़ी थी। गंगा की भाँति जमुना में बहाव नहीं होता।

सफेद वस्त्रों से सजी हुई सफेद चाँदनी के बीच मधु इस समय स्वर्ग की अप्सरा जैसी दिख रही थी। मधु ने तारों को मिलाकर स्वर भरना आरम्भ किया। वायलिन से निकली हुई स्वर-लहरियाँ जमुना के पानी पर थिरकती हुई हवा में मिलकर वातावरण में मादकता उत्पन्न करने लगीं। मधु तन्मय होती गई और ज्यों-ज्यों उसकी तन्मयता बढ़ती गई वातावरण की मादकता भी बढ़ती गई। आकाश की सुध-बुध हर ली गई। वह अपने को भूल गया और जब तक वायलिन बजता रहा, वह मधु को अपलक निहारता रहा।

काफी समय बाद मधु की उँगलियाँ रुकीं। वायुमण्डल में फैली हुई मीठी ध्वनि फैलकर विलीन हो गई। मधु ने वायलिन एक ओर रखा और

पूछा, "अच्छा लगा आपको ?"

आकाश ने अंगड़ाई ली और उठकर बैठ गया, "कुछ और सुनाइये।"

"ऊहूँ। बहुत देर हो जाएगी।" उसने घड़ी में समय देखा, "नौ बज गए। चलिये लौटिये। दस बजे तक घर पहुँच जाना चाहिए।"

"बस एक और। बहुत वक्त नहीं लगेगा। अभी पहुँचते हैं।"

मधु ने एक सिनेमा का गीत बजाकर सुना दिया। आकाश ने उठकर डाँड़े संभाले और नाव किनारे को मुड़ चली। मधु भी उठकर उसके सामने आकर बैठ गई, "लाइये, मैं भी चलाऊँ ?"

आकाश हँसा, "मेरी फिक्र अब ज़्यादा होने लगी है ! अब आशा है भविष्य की कल्पना साकार हो जाएगी।"

मधु बिना बोले उसके पार्श्व में आकर बैठ गई। आकाश ने उसे डाँड़े पकड़ायी और चलाने की विधि बतलाने लगा। नाव कभी दाएँ कभी बाएँ और कभी चक्कर लगाकर घूमने लगी। खिलवाड़ होने लगा, आनन्द आने लगा। पन्द्रह-बीस मिनट बीते। अनुमानतः साढ़े नौ से अधिक का समय हो गया। मधु अब भी हँसती हुई पानी में डाँड़ छप-छप कर रही थी जैसे अब समय की उसे चिन्ता थी ही नहीं।

"क्या ग्यारह बजे घर पहुँचने का इरादा है ?" आकाश ने पूछा।

"क्यों ? घर तो चल ही रहे हैं। क्या डाँड़ें को और तेज चलाऊँ ? वह किसी भेद भरी दृष्टि से आकाश को देखकर पुनः छप-छप करके पानी को उछालने लगी।

आकाश ने अपने डाँड़े को उठाकर अन्दर रखा तदुपरान्त मधु वाले डाँड़े को भी। "यह क्या ?" मधु ने पूछा।

आकाश ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसे अपने आलिंगन में बाँध लिया।

× × ×

उमेश के कथनानुसार जया ने सिनेमा का कार्यक्रम बनाया। रीजेंट पिक्चर हाउस में अंग्रेज़ी पिक्चर देखने की तय हुई। मधु ने जया की दीदी से अनुमति ले ली और दोनों सहेलियाँ पिक्चर देखने चल पड़ीं। जैसा तय था सिनेमा शुरू हो जाने पर उमेश और आकाश आए और अपनी-अपनी

प्रेयसी के बगल में बैठ गये। सिनेमा देखने का वास्तविक ग्रानन्द तो यही है। पिक्चर बहुत ग्रच्छी लग रही थी।

इन्टरवल हुग्रा। सरसरी दृष्टि से बैठे हुए व्यक्तियों को देखा गया। परिचित व्यक्ति नहीं थे। बालकनी एक प्रकार से खाली थी। बेयरा को ठंडी चीज़ लाने को कहकर उमेश ग्रौर ग्राकाश चुहलबाज़ी करने लगे। बातों के दौरान में यह भी तय हुग्रा कि पिक्चर समाप्त होने पर कम्पनी बाग चला जाएगा। बेयरा बोतल लेकर ग्राया। सब पीने लगे। पिक्चर शुरू हुई। ग्राँखें पर्दे पर ग्रटक गईं। रीलें बड़ी तेज़ी से दौड़ने लगीं, दृश्य ग्रौर घटनाएँ बदलने लगीं। दर्शकों के भावों में परिवर्तन लाने लगीं।

खेल समाप्त हुग्रा। मधु ग्रौर जया पहले निकलीं। पीछे ग्राकाश ग्रौर उमेश निकले। कम्पनी बाग जाने की बात तय थी ही इसलिए ग्रलग-ग्रलग रिक्शे हुए ग्रौर सब वहाँ जा पहुँचे। लगभग पौन घंटे तक यह चौकड़ी कभी हरी-हरी दूवों पर बैठकर तो कुछ देर इधर-उधर टहलकर मस्ती लेती रही। तदुपरान्त जया ने लौटने को कहा। समय ग्रधिक हो गया था। ग्राकाश ने हाथ जोड़ते हुए जया से पूछा, "ग्रब तो ग्रापसे मुलाकात होगी नहीं ?"

"मुश्किल है। रिज़ल्ट सुनने के दूसरे ही दिन सम्भवतः मैं दिल्ली चली जाऊँ।" उसने हाथ जोड़े, "ग्रच्छा"। वह मुड़ी, परन्तु तत्काल रुक गई ग्रौर उमेश की ग्रोर देखती हुई बोली, "ग्रब तो ग्राप दस-ग्यारह के पहले ग्राने से रहे ?"

"क्या करूँ ? ईश्वर ने ऐसा ही भाग्य बनाया है। जब सामने लगी थाली का भोजन ग्रप्राप्य हो तो फिर होटलों ग्रौर दूकानों की खाक-छाननी ही पड़ेगी।"

सब हँस पड़े, "सही है खूब छानिये।" जया ग्राँखें तरेरती हुई मधु को साथ लेकर चल दी। उमेश ग्रौर ग्राकाश दूसरी ग्रोर मुड़ गये।

सड़क पर ग्राकर जया ने रिक्शा किया ग्रौर दोनों बैठ गईं, "कटरा चलो।" जया ने कहा।

रिक्शा चलने पर जया ने मधु से पूछा, "सुनाग्रो, तुम्हारे रोमान्स की प्रगति कैसी है ?"

"वैसी ही है जैसी तुम्हारी।"

"छिपाओ नहीं।"

"छिपाने की क्या बात है ? गुरुआनीजी से शिष्या आगे थोड़े बढ़ सकती है ? बराबरी में चल रही है यही बहुत है।"

"झूठ बोलने में अब तुम भी उस्ताद हो गई हो। मुझसे भी बातें छिपाई जाने लगी हैं ?"

"कोई बात भी तो हो या योंही गढ़कर बतला दूं। तुम्हीं बताओ क्या बताऊँ ?" मधु अब भी छिपा रही थी।

"बताऊँ ? मुझे एक-एक बात की जानकारी है।"

"हाँ, हाँ बताओ। ज़रा मैं भी तो सुनूँ।"

"उस दिन रात में जो बोटिंग होती रही और उसके बाद...।" वह हँसने लगी, "इसके आगे भी बताऊँ ?"

मधु ने उसके गाल को नोच लिया, "चुप रहो। बदतमीज़ !" वह भी हँसने लगी, "अब आकाश साहब मिलेंगे तब मैं खबर लूँगी। मैंने बार-बार उनसे मना किया था कि वह अपने मित्रों से यह सब बातें न किया करें, लेकिन उन्हें चैन कहाँ ? आदमियों में यही तो कमी है।"

"और स्त्रियों में कौनसी कमी है उसका तुम्हें आनुमान है ?"

"बहुत अच्छी तरह।"

"बिल्कुल नहीं। यदि अनुमान होता तो उतनी स्वच्छन्दता तुम पसन्द न करतीं। इसमें जीवन बिगड़ते बहुत समय नहीं लगता है मधु। तुम मेरा मतलब समझ रही हो न ?" जया ने बड़ी दूर की बात कह दी थी।

मधु को निरुत्तर हो जाना पड़ा। उसने जया की बातों की गहराई का अनुभव किया, "तुम्हारा कहना उचित है। मुझ से गलती हो गई।"

जया ने प्रसंग बदल दिया और छुट्टियों के बाहर आने-जाने तथा पत्र व्यवहार के विषय में बातचीत करने लगी। कटरा आ गया। दोनों उतर पड़ीं।

× × ×

दो-एक दिन के हेर-फेर से सभी कालेजों में नतीजा सुना दिया गया। उमेश की मित्रमंडली के साथ-साथ जया और मधु भी पास हो गई थीं।

परीक्षाफल सुनने के तीसरे दिन जया ने अश्रुपूर्ण नेत्रोंसहित उमेश से विदाई ली। उसके जाने के पाँच-सात दिनों बाद उमेश भी कानपुर चला गया।

नारी को समझना हो तो संसार की पहेलियों को समझने का प्रयत्न करो और जो जितना अधिक इन्हें समझने में समर्थ हो सकेगा उसे उतना अधिक नारी के सामीप्य का आभास मिलेगा। इसके सामीप्य का अर्थ है जगत के रहस्य की जानकारी प्राप्त करना—सत्यं, शिवं, सुन्दरम् का आत्मसात कर लेना।

द्वितीय इयत्ता

२८

जुलाई का महीना आया। इलाहाबाद में पुनः चहल-पहल बढ़ने लगी। यह नगर एक प्रकार से विद्यार्थियों का ही नगर है। लड़के आने लगे। बाज़ारों और दूकानों की जमघट बढ़ गई। विशेषकर किताबों की दूकानों का तो कुछ कहना ही नहीं था। दूकानदारों को सवेरे आठ बजे से रात के दस-ग्यारह तक दम मारने की फ़ुर्सत नहीं रहती थी। शाम के समय सिविल-लाइन्स की छटा भी देखने लायक हो गई थी। बने-ठने विश्वविद्यालय और कालेजों के लड़के-लड़कियों के झुंड कहकहे लगाते और एक-दूसरे पर छींटा कसते इधर-से-उधर और उधर-से-इधर चक्कर लगाने लगे थे। एंग्लोइण्डियन तथा अंग्रेज़ लड़कियों और औरतों को देखकर लड़के इस तरह आहें भरते और ऊलजलूल की आवाज़ें कसते कि सड़क पर उनका सिर उठाना दूभर हो जाता। ऐसा वह जान-बूझकर करते। कारण, इन दोनों जातियों को भारत में रहते हुए भी भारतीयों से घृणा थी।

बीस तारीख को उमेश आया। बाईस तक जया आ रही थी, ऐसी सूचना उसने उमेश को दे रखी थी। उमेश ने आते ही आकाश से भेंट की। सबके समाचार पूछे। तब अपने रोमान्स का विस्तारपूर्वक हाल बताने के लिए कहा। आकाश बड़ी देर तक बताता रहा। बात समाप्त होने पर दोनों हरनाथ के पास गए और फिर तीनों सन्तबक्स के पास पहुँचे। लगभग दो मास उपरान्त चारों मित्र एकत्रित हुए थे। दोपहर के बैठे-बैठे संध्या हो गई, परन्तु अभी उनकी बातों का अन्त नहीं हुआ। खूब घुटती रही।

बाईस तारीख को जया न आकर चौबीस को दोपहर में आई। घर में नौकर के अतिरिक्त और कोई नहीं था। उसकी दीदी सामान लेने चौक

गई हुई थीं। नौकर से पूछने पर मालूम हुआ था। खैर, नौकर को चाय बनाने के लिए कहकर जया नहाने चली गई। स्नान किया, कपड़े बदले और फिर गीले बालों को कपड़े से कुछ समय तक झाड़ने के उपरान्त बरामदे में आकर बैठ गई। लम्बे-लम्बे बाल चारों ओर फैल गए। खुले हुए बालों में रूप का आकर्षण बढ़ जाता है। नौकर चाय बनाकर लाया, "पकौड़ियाँ बना दूँ बीबीजी ?" उसने पूछा।

"बना दो। भूख तो लगी है। दीदी कब तक आएँगी ? कुछ कह गई हैं ?"

"कुछ कहा नहीं था, लेकिन अब आती ही होंगी।"

"उमेशबाबू आ गए ?"

"वह तो तीन-चार दिन हुए आ गए थे।"

जया चाय पीने लगी। नौकर पकौड़ियाँ बनाने चला गया।

जया की चाय समाप्त भी नहीं हो पाई थी कि बाहर के दरवाज़े के खुलने की आहट पाकर उसने जो सिर उठाकर देखा तो वहाँ दीदी के स्थान पर उमेश दिखलाई पड़ा। उमेश को भी आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वह एकटक जया को देखता हुआ मेज़ के समीप आकर खड़ा हो गया। जया ने खड़े होकर नमस्ते किया और क्षणभर नेत्रों से नेत्र मिलाए रहने के उपरान्त आँखें नीची कर लीं, "बैठिए।" वह धीरे से बोली।

"कब आईं आप ?"

"अभी आध घंटे पहले," उसने सिर उठाया, "बैठिए न।" पुनः उसकी आँखें झुक गईं। न जाने उसे इस समय शर्म क्यों लग रही थी ? सम्भव है बहुत दिनों बाद देखने पर ऐसा कुछ हो जाता हो।

उमेश बैठ गया। उसने इधर-उधर देखा, "आपकी दीदी कहाँ गई हुई हैं ?"

"चौक ! सामान खरीदने।"

"छुट्टियाँ अच्छी तरह बीतीं ?"

"हाँ।"

"परसों क्यों नहीं आना हुआ ? मैं दिन भर प्रतीक्षा करता रहा।"

"माँ ने रोक लिया था। आप भली-भाँति रहे ?"

"भली-भाँति ही कहना चाहिए। छुट्टियाँ कट गई यही क्या कम है? तारीख गिनते-गिनते जान को आफत आगई थी। किसी चीज़ का चसका लग जाने में यही तो बुराई है।"

जया ने सिर उठाया। दोनों एक-दूसरे को देखकर मुस्करा उठे। वह बोली, "तब तो इस बुराई को दूर करने की चेष्टा करनी चाहिए अन्यथा आगे चलकर यह और भी कष्टदायक सिद्ध हो सकती है। दो महीने का समय तो खैर जैसे-तैसे बीत गया पर कहीं चार-छः महीने काटने पड़ें तो।"

नौकर पकौड़ियाँ बना लाया।

"मिठाई मँगवाऊँ?" उमेश ने पूछा।

"नहीं। पकौड़ियाँ बहुत हैं। तबीयत नहीं है।"

"मैं आपकी तबीयत को समझ रहा हूँ।" उसने एक रुपया निकालकर नौकर को दिया। यूनिवर्सिटी वाले चौराहे के भोलामहाराज वाली दूकान से ले आना। जल्दी आओ।"

नौकर रुपया लेकर चला गया।

उमेश ने जया का हाथ पकड़ा, "बड़ी मुश्किल से दो महीने बीते हैं जया। एक-एक दिन पहाड़ की तरह कटता था। हमेशा तुम्हारा ही चित्र आँखों के सामने नाचता था। ऐसा…।"

जया ने धीरे से हाथ खींच लिया, "दीदी अब आती होंगी।" उसने पकौड़ी की तश्तरी उमेश की ओर खिसकाई, "लीजिए खाइए।"

"तुम खाओ?" उसने एक पकौड़ी अपने हाथ से उसके मुँह में डाल दी।

"आप भी लीजिए।"

"मुझे भूख नहीं है।"

"तो क्या हुआ? उठाइए।"

"ऊहूँ।"

जया ने भी एक पकौड़ी उठाकर उसके मुँह में डाल दी। दोनों पकौड़ियाँ खाने लगे।

जया ने पूछा, "आज आप इस समय कैसे आगये? क्या हरनाथ

वगैरह कहीं बाहर गये हुए हैं ?"

"सब यहीं हैं। मैं आज कालेज नहीं गया था। सवेरे आठ बजे पंचानन के घर कुछ खास कार्यकताओं की मीटिंग थी। वहीं था और इस समय सीधे वहीं से आ रहा हूँ। पहले सोचा कालेज चला चलूँ, परन्तु पता नहीं कैसे मन में यह विचार आया कि तुम आगई होगी। मैं कालेज न जाकर इधर चला आया। मेरे मन की बात सच निकली। मकान में घुसते ही तुम सामने दिखाई पड़ गईं। दिल की कशिश ऐसी ही होती है।"

"पंचानन के यहाँ कैसी मीटिंग थी ?" जया ने दूसरी वार्ता चलाई।

जुलूस-वलूस निकालने के सम्बन्ध में थी। देश की राजनीति में बहुत शीघ्र कोई बड़ा परिवर्तन आने वाला है। स्थिति दिन-पर-दिन गम्भीर होती जा रही है। मालूम...।"

तब तक दरवाज़े पर आहट मिली। जया की दीदी ने आँगन में प्रवेश किया।

२९

महात्मा गांधी ने 'भारत छोड़ो' का नारा लगाया। फिर क्या था, देश तो इसी प्रतीक्षा में था ही। क्रान्ति की चिंगारी फूटी। अंग्रेज़ों ने चिंगारी को दबाना चाहा। देश के नेता गिरफ्तार किये जाने लगे। उनकी समझ में दमन वाला रास्ता उपयुक्त दिख रहा था। परन्तु नेताओं की गिफ्तारी ने आग में घी का काम किया। वह और प्रज्ज्वलित हो उठी। 'भारत छोड़ो', 'अंग्रेज़ो भारत छोड़ो', 'अंग्रेज़ो भारत छोड़ो' की आवाज़ देश के कोने-कोने से आने लगी। चिंगारी लपट बनकर फैलने लगी और देखते-देखते धू-धू करके जलने लगी। नेता विहीन देश मनमानी करने पर उतर आया। उतरना स्वाभाविक था। बर्दाश्त की सीमा होती है। घुट-घुट-

कर मरने से उत्तम है अपनी शक्ति को आज़माते हुए गोली का शिकार हो जाना। नगर-नगर और गाँव-गाँव से सिर पर कफन बाँधे शहीदों की टोलियां निकलने लगीं। रेल की पटरियाँ उखाड़ी जाने लगीं, तार काटे जाने लगे, पुलिस चौकियाँ जलाई जाने लगीं, कचहरियों और डाकखानों पर अधिकार जमाया जाने लगा, फौजी कामों में बाधाएँ उत्पन्न की जाने लगीं, बड़े-बड़े जुलूस निकालकर तथा अधिक-से-अधिक बन्दी बनकर जेलों को भरने का प्रयास किया जाने लगा, जिससे व्यवस्था में अस्तव्यस्तता आ जाए। चन्द्रशेखर आज़ाद और भगतसिंह के अनुयायियों ने ज़ंग लगते हुए तमन्चों और बमों को संभाला। उधर बलिया की जनता ने पूर्णरूप से स्वतन्त्रता की घोषणा करके सम्पूर्ण शासन की बागडोर अपने हाथों में ले ली। बलिया के शेर चीतूपांडे की दहाड़ देश के दूरस्थ भागों में सुनाई पड़ने लगी और प्रत्येक देशवासी को प्रोत्साहित करने लगी कि वह भी ऐसी दहाड़ दहाड़कर इस भू-भाग से विदेशी सत्ता का अन्त करे।

इलाहाबाद में विद्यार्थियों ने सीना खोलकर गोलियों का सामना करना आरम्भ कर दिया। नित्य विश्वविद्यालय के यूनियन हाल में समस्त स्कूल और कालेजों के लड़के-लड़कियाँ एकत्रित होते और फिर एक बड़े जुलूस को लेकर नगर में निकल पड़ते। चार-चार की क़तार में मीलों लम्बा जुलूस 'अंग्रेज़ो भारत छोड़ो' का नारा लगाता हुआ पूरे नगर में घूमकर लौट आता। फिर मीटिंग होती, जोशीले भाषण होते। दूसरी जगहों के समाचार बतलाए जाते तदुपरान्त अगले दिन के कार्यक्रमों की घोषणा करके मीटिंग समाप्त कर दी जाती।

पहले तो अधिकारियों ने संस्थाओं के प्रधानाचार्यों को धमकी देकर उन्हें आदेश दिया कि वे लड़कों को हड़ताल करने से रोकें, परन्तु जब उन्होंने पूर्णरूप से असमर्थता व्यक्त की तो अधिकारी बौखला उठे। उन्होंने अपनी शक्ति का प्रयोग करना आरम्भ किया। आदेश जारी हुए। निहत्थे विद्यार्थियों पर लाठी चार्ज प्रारम्भ हुए, सिर फूटने लगे। पर वाहरे भारत माँ के सपूत और सपूतनियाँ! उनका जुलूस दुगने उत्साह से निकलने लगा।

उमेश अब दिन-दिन और रात-रात भर घर न आता। वह पंचानन

के संग कभी इस मुहल्ले में तो कभी उस मुहल्ले में, कभी इस स्कूल में तो कभी उस कालेज में विद्यार्थियों से मिलकर उन्हें उत्साहित करता और इसी लगन के साथ नित्य जुलूसों में भाग लेते रहने की शपथ दिलाकर देश के प्रति अपनी वफादारी का परिचय देता। हरनाथ तथा अन्य मित्रों से भी उसकी भेंट कम हो गई थी। उसकी बुद्धि से इस समय उसका केवल एक कर्तव्य था और वह था देश की स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए अपने को पूर्णरूप से न्यौछावर कर देना। मनुष्य के स्वभाव की विचित्रता अज्ञेय है।

मीटिंग समाप्त होने पर आज शाम को उमेश जब घर आया तो उसका कुरता फटा हुआ था और चेहरे पर शुष्कता दृष्टिगोचर होगई थी। उमेश बिना कुछ बोले चुपचाप ऊपर चला गया। जया और उसकी दीदी चौके में बैठी थीं। जया की दीदी ने नौकर को बुलाकर ऊपर पानी ले जाने को कहा और स्वयं चाय बनाने लगीं। देश के प्रति उमेश के इस त्याग और वफादारी ने घर के सभी प्राणियों के हृदय में ऐसा स्थान बना लिया था कि सभी उसके लिए चिन्तित रहने लगे थे। खैर, जया तो अब उसके चरणों की दासीजैसी बन गई थी। उसके प्रेम में सबलता आ गई थी और वह उमेश को बिल्कुल अपना समझकर उसपर गर्व करने लगी थी।

नौकर ने पानी लाकर दिया। उमेश ने मुँह-हाथ धोये, कपड़े बदले और एक क्षीण वेदना के साथ खाट पर लेट गया।

"कुछ तकलीफ है उमेशबाबू ?" नौकर ने संवेदना प्रकट की। उसे उमेश की पीड़ा का आभास मिल गया था।

"नहीं ठीक हूँ। देखो, अगर भाभीजी ने चाय बना ली हो तो ले आओ।"

वह झटपट नीचे उतरा, परन्तु बरामदे में जया चाय ले जाती हुई मिल गई, "तुम एक गिलास पानी दे जाओ।" कहती हुई वह ऊपर चली गई।

जया ने चाय और नमकीन की तश्तरी मेज़ पर रखी और स्वयं कुर्सी खींचकर पास बैठ गई। उमेश उठकर बैठ गया और चाय पीने लगा। वह मौन था। जया भी मौन थी। वह संभवतः उमेश के मुखमण्डल

पर फैली हुई उदासी के कारण का अनुमान लगा रही थी। नौकर आया। क्षणभर रुकने के उपरान्त पानी रखकर चला गया। उमेश की व्यथा से उसे भी व्यथा थी। कमरे में उसी प्रकार निस्तब्धता छाई रही। जया उमेश को निहार रही थी और उमेश सिर लटकाए चाय पी रहा था। दो-चार मिनट और बीतने पर उमेश ने गर्दन उठाई, "आप चाय पी चुकी हैं?"

"अभी-अभी पी है।"

"नमकीन लीजिए।"

जया ने समोसा उठाते हुए पूछा, "आपके लिए और चाय लाऊँ?"

"बस! काफी है।"

"एक प्याली और?" वह उठी।

"नहीं।"

"नुकसान नहीं करेगी। अभी लाती हूँ।" वह झट से नीचे आई और चाय लेकर ऊपर आगई।

उमेश चाय पीने लगा।

"तबीयत तो ठीक है?"

"क्यों? आपको खराब मालूम पड़ती है?" उसने ज़बर्दस्ती मुस्कराकर वास्तविकता को छिपाना चाहा। "मैं ठीक हूँ।"

"आज भी तो लाठी चार्ज हुआ है? सुना है काफी लड़के-लड़कियाँ घायल हुए हैं?"

"हाँ। एक लड़के को तो काफी चोट आई है।" उसने चाय पीली थी। पैर से मेज़ को खिसकाते हुए वह पुनः बोला, "मैं लेटकर बात करूँ तुम बुरा तो नहीं मानोगी? आज ज़रा ज़्यादा थक गया हूँ।" वह धीरे से पैरों को उठाता हुआ लेट गया। लेटते समय कुरता खिसकने के कारण कन्धे पर बँधी हुई पट्टी जया को दिख गई। "कन्धे में क्या हुआ?" वह घबड़ाकर खड़ी होती हुई उसकी खाट पर आकर झुक गई और कुरता हटाकर देखने लगी, "लाठी लगी है?"

उमेश का भेद खुल गया। उसने सिर हिलाकर स्वीकार किया।

"और भी कहीं चोट है?" जया की आँखें भर आईं।

"नहीं। सिर बच गया वरना अधिक चोट आई होती। डाक्टर ने टिकिया खाने को दी है। रात-भर में ठीक हो जाऊँगा। विशेष चोट नहीं है।" उसने जया को सन्तोश दिया, "बैठिये।" उसने उसके कपोलों को थपथपाया।

जया बैठ गई। आँसू टप-टप करके गिर गए।

"अरे, इसमें रोने की कौन-सी बात है? क्या कोई गोली लग गई है? ऐसी चोटें तो खेलने-कूदने में लगा ही करती हैं। मुझे नहीं मालूम था वरना मैं आता ही नहीं।"

जया ने आँखें पोछीं और मुँह लटकाकर बैठ गई। उसके मस्तिष्क में नानाप्रकार के विचार उठने लगे थे। परन्तु वह विचार आते ही कि उसे गोली भी तो लग सकती है—उसके शरीर में कँपकँपी दौड़ गई। पुनः आँखों में आँसू छलछला आए और बहुत रोकने का प्रयास करने पर भी वह कपोलों पर बह निकले।

"जाओ मुँह धो आओ।" उमेश ने तनिक डाँट बताई।

जया बैठी रही।

"जया।"

उसने सिर उठाया।

"मैं मुँह धोने के लिए कह रहा हूँ न? उठो, कहीं तुम्हारी दीदी आगई तो?"

जया ने उठकर मुँह धोया और पुनः चुपचाप आकर बैठ गई।

जया के मूड को बदलने के लिए उमेश ने छेड़-छाड़ आरम्भ की, "क्यों, आज दीदी और जीजाजी का भय नहीं सता रहा है? यह आन्दोलन अच्छा शुरू हुआ। लोगों के विचारों में परिवर्तन आगया है। भगवान की दया से कहीं यह महीने-दो महीने चल गया तो जो अप्राप्य है वह भी प्राप्त हो जाएगा।"

"प्राप्त हो जाएगा। लेकिन कान खोलकर यह भी सुन लीजिए, कल से आपका बाहर जाना बन्द। स्वतन्त्रता के लिए लड़ने वालों की संख्या बहुत है। अभी आपको तीसमारखाँ बनने की कोई आवश्यकता नहीं है। समझ गए न?"

उमेश मुस्कराया, "आवाज़ तो निकली। खैर आप कह रही हैं तो मैं कल से नहीं जाऊँगा। पर यह भी सोच लीजिए कि मेरे यहाँ रहने से आपकी परेशानी बढ़ तो नहीं जाएगी ?"

"मेरी परेशानी किस लिए बढ़ जाएगी।" जया ने उमेश का भाव समझा नहीं था।

"मैं कहता हूँ बढ़ जाएगी। एकान्त मिलने पर मैं छेड़-छाड़ करने से बाज़ नहीं आता और आपको यह पसन्द नहीं है। फिर बताइए, आपकी परेशानी बढ़ी या नहीं ?"

जया ने आँखें नचाईं, "चुप रहिए।"

उमेश हँसने लगा।

"कल से आप नहीं जाएँगे, यह निश्चित हो गया न ?" सम्भवतः जया को अभी पूर्ण विश्वास नहीं हो पाया था।

"कहती हैं तो नहीं जाऊँगा पर इसे भी तो सोच लीजिये कि क्या मेरा न जाना उचित होगा ? हमारे सहयोगी या दूसरे लड़के क्या सोचेंगे और यदि न भी सोचें तब भी देश के प्रति मेरा कुछ कर्तव्य है न ? मेरे लिए उसका पालन करना अनिवार्य है।"

"अनिवार्य है इससे कौन इन्कार करता है, लेकिन केवल जुलूस में जाने से ही कर्तव्यों की पूर्ति हो जाएगी, यह मैं नहीं मानती। इसके लिए और भी रास्ते हैं।"

"इस समय ?"

"कर्तव्यों के पालन के लिए अभी या बाद का क्या प्रश्न ? फिर जहाँ देश की स्वतन्त्रता की प्राप्ति के हेतु कर्तव्यों का सवाल है वहाँ अभी क्या जल्दी है ? ऐसे अवसर तमाम आएँगे। इस बार नहीं अगले किसी आन्दोलन में सही।"

"मैं समझ रहा हूँ। यह विचार जयाजी की बुद्धि से नहीं वरन् उनके हृदय से निकल रहे हैं जिस पर उमेश का आधिपत्य है। हृदय और वह भी किसी की आधीनता में कुछ कहे तो इसके अतिरिक्त और कह ही क्या सकता है ?" वह मुस्कराया, "फिर भी मैं आपके आदेश का उल्लंघन नहीं करूँगा। कल मैं नहीं जाऊँगा।" उमेश ने इस समय जया के अनुकूल कहना

नहीं पड़ रहा था। दूसरे दिन वह नाश्ता के उपरान्त कब घर से निकल गया किसी को विदित नहीं।

विश्वविद्यालय से जुलूस निकला और दाहिनी ओर सड़क से मुड़ता हुआ कचहरी की तरफ 'इन्कलाब ज़िन्दाबाद,' 'अंग्रेज़ो भारत छोड़ो', 'महात्मा गांधी की जय हो' आदि नारे लगाता हुआ बढ़ चला। हज़ारों मुँह से निकले हुए नारे गगन भेदने लगे थे। जुलूस बढ़ता गया परन्तु कचहरी के समीप पहुँचने के पहले ही उसे रुक जाना पड़ा। सामने भरी हुई बन्दूकें तनी थीं। विद्यार्थियों के रोंगटे खड़े हो गये। भय की सिहरन बदनभर में दौड़ गई। पर साथ ही बढ़े हुए क़दमों ने पीछे मुड़ने से इन्कार भी कर दिया। सब जहाँ थे वहीं खड़े हो गये।

अधिकारी ने लाउडस्पीकर से घोषणा की,"पाँच मिनट का वक्त दिया ज़ाता है। अगर जुलूस तितर-वितर न हुआ तो उसे गोलिओं से तितर-वितर कर दिया जाएगा।"

झटपट लड़कों ने भी मोर्चा बनाया। और 'अंग्रेज़ो भारत छोड़ो' के नारे लगाने लगे। जान रहते पीछे न हटने का उन लोगों ने फ़ैसला कर लिया था।

आदेश हुआ, "फायर।"

आगे खड़े लड़कों ने चिल्लाकर कहा "लेट जाओ।"

सब लड़के लेट गए। गोलियाँ सनसन करती हुई ऊपर से निकल गईं।

फिर नारे लगे "इन्कलाब ज़िन्दाबाद," "अंग्रेज़ो भारत छोड़ो," "महात्मा गांधी की जय हो।"

पुनः वही आदेश। तत्काल लड़के लेट गए। गोलियाँ सनसनाती निकल गईं, परन्तु इस बार कईयों के पैरों और जांघों को छेदकर निकली थीं। कई बार गोलियाँ चलीं और कई बार लड़के लेटे। बहुत से घायल हुए। कुछ भाग भी गए, परन्तु सुन्दर-सा युवक लाल पद्मधर अपने स्थान पर उसी प्रकार खड़ा रहा। उसने लेटना भी अपमान समझा था। वह अंग्रेज़ों के सामने न तो झुक सकता है और न पीछे हट सकता है। वह सीना ताने खड़ा था। किसी अधिकारी ने संकेत किया और इस बार की चली

हुई गोलियों में एक गोली उसके सीने को भेदती हुई निकल गई। लाल पद्मधर लड़खड़ाया और गिर पड़ा, परन्तु अब भी उसकी रुकती हुई साँस कह रही थी, "भा···र···त···छो···ड़···ो।"

दूर से देखने वाले रो पड़े, वातावरण रो पड़ा और सम्भवतः वह निर्मम हत्यारा भी अपनी इस निर्दयता पर रोने लगा हो तो कोई आश्चर्य नहीं। भगदड़ मच गई। साहस कब तक साथ देता निहत्थे युवक का। उमेश और उसके कुछ सहयोगियों ने बढ़कर लाल पद्मधर की लाश को उठाया और युनिवर्सिटी को चल पड़े।

हवा की भाँति यह दुखद समाचार सारे शहर में फैल गया। लोगों की आत्माएँ कराह उठीं। बर्बरता ने सीमा का उल्लंघन कर दिया था। ऐसी हेवानियत! यह अत्याचार!! खैर पाप का घड़ा कभी फूटेगा ही। इस ज़ुल्म का अन्त अवश्य होगा। इन गोरों को सज़ा मिलकर रहेगी।

इधर जया की व्याकुलता बढ़ता जा रही थी। उसके घर से कचहरी बिल्कुल पास थी। जब गोलियाँ चल रही थीं तो साफ सुनाई पड़ रहा था। वह कभी छत पर जाकर कुछ जानने का प्रयास करती तो कभी नीचे आकर पता करने का प्रयत्न करती। उसका कलवाला भय बढ़ता जारहा था। तमाम इधर-उधर के बुरे विचार मस्तिष्क में आने लगे थे। फिर सुनने में आया कि बहुत से लड़के घायल हो गए हैं और एक लड़का मर भी गया है। जया अपने को न रोक सकी। आँखों से आँसू बहने लगे। उसे विश्वास हो गया कि उमेश को भी गोली लग गई होगी। वह कमरे में आकर लेट गई और तकिये में मुँह दबाकर रोने लगी।

संध्या होने को आई। उमेश नहीं आया। जया की दीदी और कृष्णमुरारीलाल भी चिन्तित हुए, परन्तु इस समय पता लगाने का उनके पास साधन क्या था? शाम होगई। बत्तियाँ जल गईं। चिन्ता और बढ़ गई। जया का हृदय तो जैसे बैठने लगा हो। उसे फिर रूलाई आने लगी। तब तक बाहर किसी ने आवाज़ दी। जया स्वयं दौड़कर आई। एक लड़का चिट्ठी लिए खड़ा था। "उमेश ने दिया है।" वह बोला, "आज वह नहीं आ सकेंगे।" उसने जया को पत्र थमा दिया।

और···!" जया के मुँह से शब्द नहीं निकल पा रहे थे।

लड़का समझ गया, "वह अच्छी तरह हैं। उन्हें किसी प्रकार की चोट नहीं लगी है। नमस्ते।" वह चला गया।

सम्भवतः इतनी प्रसन्नता एक जन्मान्ध को भी आँखें मिलने पर न हुई होती जितनी उस समय जया को थी। पत्र कृष्णमुरारीलाल के नाम था और उसमें वही लिखा था जो उस लड़के ने जया को बतलाया था। पत्र पढ़ने के उपरान्त कृष्णमुरारीलाल अपनी पत्नी से सलाह करने लगे कि क्यों न उमेश के भाई के पास एक चिट्ठी लिखकर उन्हें इन परिस्थितियों का ज्ञान करा दिया जाय और साथ ही उन्हें यह भी लिख दिया जाय कि वह शीघ्र ही उमेश को कानपुर बुला लें। उनकी पत्नी इस राय से सहमत थी। कृष्णमुरारीलाल ने मेज़ से कागज़ और कलम उठाया और पत्र लिखने लगे।

३०

दूसरे दिन विद्यार्थियों में कुछ शिथिलता दिखलाई पड़ी। यद्यपि जुलूस निकला और मीटिंग भी हुई, परन्तु संख्या में लड़के कम थे। साथ ही यह भी सुनने में आया कि अधिकारियों ने पुनः कालेजों के प्रधानाचार्यों और लड़कों के अभिभावकों को वही चेतावनी दी है कि यदि वे अपने लड़कों को जुलूस अथवा अन्य सरकार के विरोधी कार्यों में भाग लेने से न रोकेंगे तो उनके विरुद्ध कोई सख्त कदम उठाया जाएगा। मीटिंग में यह भी बात बतलाई गई कि आज बंगाली कालेज में हड़ताल न हो सकी, क्योंकि प्रिंसिपल ने लड़कों को कमरे में बिठलाकर बाहर से ताला बन्द करा दिया था। लड़के निकलते तो कैसे निकलते?

सभा समाप्त होने के उपरान्त कुछ विशेष लड़कों की बैठक के० पी० यू० सी० होस्टल में हुई और वहाँ तय हुआ कि कल से जिन कालेजों में

हुई गोलियों में एक गोली उसके सीने को भेदती हुई निकल गई। लाल पद्मधर लड़खड़ाया और गिर पड़ा, परन्तु अब भी उसकी रुकती हुई साँस कह रही थी, "भा···र···त···छो···ड़···ो।"

दूर से देखने वाले रो पड़े, वातावरण रो पड़ा और सम्भवतः वह निर्मम हत्यारा भी अपनी इस निर्दयता पर रोने लगा हो तो कोई आश्चर्य नहीं। भगदड़ मच गई। साहस कब तक साथ देता निहत्थे युवक का। उमेश और उसके कुछ सहयोगियों ने बढ़कर लाल पद्मधर की लाश को उठाया और युनिवर्सिटी को चल पड़े।

हवा की भाँति यह दुखद समाचार सारे शहर में फैल गया। लोगों की आत्माएँ कराह उठीं। वर्बरता ने सीमा का उल्लंघन कर दिया था। ऐसी हेवानियत! यह अत्याचार!! ख़ैर पाप का घड़ा कभी फूटेगा ही। इस ज़ुल्म का अन्त अवश्य होगा। इन गोरों को सज़ा मिलकर रहेगी।

इधर जया की व्याकुलता बढ़ता जा रही थी। उसके घर से कचहरी बिल्कुल पास थी। जब गोलियाँ चल रही थीं तो साफ सुनाई पड़ रहा था। वह कभी छत पर जाकर कुछ जानने का प्रयास करती तो कभी नीचे आकर पता करने का प्रयत्न करती। उसका कलवाला भय बढ़ता जारहा था। तमाम इधर-उधर के बुरे विचार मस्तिष्क में आने लगे थे। फिर सुनने में आया कि बहुत से लड़के घायल हो गए हैं और एक लड़का मर भी गया है। जया अपने को न रोक सकी। आँखों से आँसू बहने लगे। उसे विश्वास हो गया कि उमेश को भी गोली लग गई होगी। वह कमरे में आकर लेट गई और तकिये में मुँह दबाकर रोने लगी।

संध्या होने को आई। उमेश नहीं आया। जया की दीदी और कृष्णमुरारीलाल भी चिन्तित हुए, परन्तु इस समय पता लगाने का उनके पास साधन क्या था? शाम होगई। बत्तियाँ जल गईं। चिन्ता और बढ़ गई। जया का हृदय तो जैसे बैठने लगा हो। उसे फिर रूलाई आने लगी। तब तक बाहर किसी ने आवाज़ दी। जया स्वयं दौड़कर आई। एक लड़का चिट्ठी लिए खड़ा था। "उमेश ने दिया है।" वह बोला, "आज वह नहीं आ सकेंगे।" उसने जया को पत्र थमा दिया।

और···!" जया के मुँह से शब्द नहीं निकल पा रहे थे।

लड़का समझ गया, "वह अच्छी तरह हैं। उन्हें किसी प्रकार की चोट नहीं लगी है। नमस्ते।" वह चला गया।

सम्भवतः इतनी प्रसन्नता एक जन्मान्ध को भी आँखें मिलने पर न हुई होती जितनी उस समय जया को थी। पत्र कृष्णमुरारीलाल के नाम था और उसमें वही लिखा था जो उस लड़के ने जया को बतलाया था। पत्र पढ़ने के उपरान्त कृष्णमुरारीलाल अपनी पत्नी से सलाह करने लगे कि क्यों न उमेश के भाई के पास एक चिट्ठी लिखकर उन्हें इन परिस्थितियों का ज्ञान करा दिया जाय और साथ ही उन्हें यह भी लिख दिया जाय कि वह शीघ्र ही उमेश को कानपुर बुला लें। उनकी पत्नी इस राय से सहमत थी। कृष्णमुरारीलाल ने मेज़ से कागज़ और कलम उठाया और पत्र लिखने लगे।

३०

दूसरे दिन विद्यार्थियों में कुछ शिथिलता दिखलाई पड़ी। यद्यपि जुलूस निकला और मीटिंग भी हुई, परन्तु संख्या में लड़के कम थे। साथ ही यह भी सुनने में आया कि अधिकारियों ने पुनः कालेजों के प्रधानाचार्यों और लड़कों के अभिभावकों को वही चेतावनी दी है कि यदि वे अपने लड़कों को जुलूस अथवा अन्य सरकार के विरोधी कार्यों में भाग लेने से न रोकेंगे तो उनके विरुद्ध कोई सख्त कदम उठाया जाएगा। मीटिंग में यह भी बात बतलाई गई कि आज बंगाली कालेज में हड़ताल न हो सकी, क्योंकि प्रिंसिपल ने लड़कों को कमरे में बिठलाकर बाहर से ताला बन्द करा दिया था। लड़के निकलते तो कैसे निकलते ?

सभा समाप्त होने के उपरान्त कुछ विशेष लड़कों की बैठक के० पी० यू० सी० होस्टल में हुई और वहाँ तय हुआ कि कल से जिन कालेजों में

हड़ताल होने में रुकावट दिखलाई पड़े वहाँ हड़ताल कराई जाए और लड़कों को देश पर मर मिटने की प्रेरणा देते हुए आतंक से उभरी हुई शिथिलता को दूर किया जाए अन्यथा सब किये-कराये पर पानी फिर जाने की सम्भावना है। बात तय होगई और यह भी तय होगया कि उमेश एक जत्थे के साथ कल बँगाली कालेज में स्ट्राइक कराने जाएगा।

उस रात भी उमेश घर पर न आ सका था, परन्तु किसी को चिन्ता न हो विशेषकर जया की रात जागते न बीते, इसलिए उसने पत्र भिजवा दिया था। उसे रात में कई लोगों से गुप्तरूप से मिलना था। जब कमर को कस लिया तो सभी कुछ करना था।

दूसरे दिन ग्यारह बजे दिन के लगभग उमेश तिरंगा झण्डा हाथ में लिये अपने जत्थे के साथ बँगाली कालेज में 'इन्कलाब ज़िन्दाबाद', 'महात्मा गांधी की जय हो', 'जवाहरलाल नेहरू की जय हो', 'राजेन्द्रप्रसाद की जय हो' आदि नारे लगाता हुआ घुसा। पहले तो उन चापलूस और गद्दार मास्टरों ने उमेश को रोकने का प्रयत्न किया और अपशब्दों का प्रयोग करते हुए उसे कालेज से निकल जाने को कहा। उमेश उग्र स्वभाव का था ही और फिर ऐसे समय में—वह भी बमक पड़ा तथा उन्हें कायर और देशद्रोही बताकर लगा ऊँचे स्वर में भाषण देने। कुछ इधर-उधर के लड़के इकट्ठे हुए। सरगर्मी बढ़ी, जोश उमड़ा। लड़के मारने पीटने पर तैयार हुए। मास्टर भागकर अन्दर घुस गये। फिर बड़े ज़ोर-शोर से 'इन्कलाब ज़िन्दाबाद' के नारे लगाने लगे। कुछ लड़के पत्थरों से कमरों के ताले तोड़ने लगे। कमरे के अन्दर से लड़के भी किवाड़ों पर धक्के मारने लगे। पढ़ाई के विचार से कालेज में आकर उन्होंने कायरता दिखाई थी, उस पर वे पर्दा डालकर बहादुरों की श्रेणी में आजाना चाहते थे। जो लड़के ऊपर के खंड में बन्द थे वे छज्जों में आकर 'इन्कलाब ज़िन्दाबाद' चिल्लाने लगे और शीघ्र-से-शीघ्र ज़ीने के तालों को तोड़ने के लिए शोरगुल मचाने लगे। कुछ हिम्मती लड़के नलों के द्वारा नीचे उतरे और कुछ बिना हाथ-पैर टूटने की चिन्ता किये कूद पड़े।

ताले टूटने लगे, जमघट बढ़ने लगी। नारे बुलन्द होने लगे। उमेश ने मैदान में लड़कों को एकत्रित किया और फिर जुलूस बनाकर बाहर

निकलने ही वाला था कि सड़क पर शोर सुनाई पड़ा, "पुलिस आगई, पुलिस आगई।" और दो पुलिस की लारी फाटक पर आकर रुक गई। संगीनधारी सिपाही खटखट कूदकर बाहर आगए। फाटक बन्द कर दिया गया।

लड़कों में भगदड़ मच गई। कुछ पीछे भागे, कुछ दर्जों में घुस गए और कुछ चारदीवारी फाँदकर शहर की ओर भाग चले। परन्तु उमेश और उसके पाँच-सात साथी जहाँ खड़े थे, वहीं खड़े रहे। सम्भवतः पुलिसवाले भी सबको पकड़ना नहीं चाहते थे। ठीक भी था। जेलों में जगह कहाँ थी? उमेश के संग-संग छै लड़कों को गिरफ्तार किया गया और उन्हें लाकर गाड़ी में बिठला दिया गया। उमेश के हाथ में अब भी झंडा लहरा रहा था।

शान्ति की व्यवस्था हो जाने पर गाड़ियाँ कोतवाली को चल पड़ीं। अन्दर बैठे हुए सातों युवक नारे लगाते रहे। वे सड़क पर चलने वाले अपने भाइयों को बता रहे थे, उन्हें प्रेरणा दे रहे थे कि वे भी भारत-माता की ज़ंजीरों को तोड़ने के लिए अपने को न्यौछावर कर दें।

हवालात में उमेश अपने साथियों सहित बन्द कर दिया गया। हवालात में पाँच-सात लड़के और भी थे जो दूसरे कालेजों से पकड़कर लाए गए थे। वे सब उमेश के परिचित थे। यद्यपि कोतवाल रशीदअली बड़ा ज़ालिम कोतवाल था और उसे देशभक्तों से नफरत भी थी, तो भी उमेश भयरहित होकर खूब अंग्रेज़ों के विरुद्ध अपने साथियों से बातें करता रहा। जब उसे मृत्यु का डर नहीं था तो बेंतों और हंटरों से क्या डर लगता। जोश में लोगों की शक्ति असीमित हो जाया करती है।

यद्यपि हरनाथ, आकाश और सन्तबक्स स्वतन्त्रता संग्राम में उतना सहयोग नहीं दे रहे थे जितना देना चाहिए था फिर भी जिस रूप से जितना वे कर सकते थे—कर रहे थे। पर उन्हें प्रसन्नता के साथ-साथ गर्व था कि उनका साथी उमेश किस प्रकार जान हथेली पर लेकर आज़ादी की लड़ाई में जूझा हुआ है।

उमेश की गिरफ्तारी का समाचार सबसे पहले आकाश को मिला। वह सीधे कोतवाली पहुँचा। भेंट हुई। दोनों एक-दूसरे को देखकर हँस

पड़े। आकाश ने छड़ों के भीतर हाथ डालते हुए उमेश की पीठ थपथपाई, "जीओ मेरे शेर। जो करना चाहिए था वह तुमने कर दिखाया। हम लोगों की भी नाक ऊँची होगई। कितनी देर हुई यहाँ आए ?"

"लगभग एक घंटा।" उमेश उसी प्रकार हँस रहा था, "हरनाथ और सन्तबक्स को तो अभी खबर न होगी ?"

"अब जा रहा हूँ। पहले यह बताओ कुछ खाओगे ?"

"कुछ नहीं, बहुत। भूख बड़ी ज़ोर की भूख है।"

"अभी लाता हूँ।" वह मुड़ने को हुआ।

"सुनो।" उमेश ने रोका और धीरे से कहा, "काफी पूड़ियाँ लाना। यह सब लड़के भी भूखे हैं।"

आकाश सिर हिलाता हुआ बाहर आया और लगभग दस रुपए की पूड़ी और मिठाइयाँ बँधवा लाया। "अब तुम सब" उसने उमेश से कहा, "खाओ। तब तक मैं सन्तबक्स और हरनाथ को लेकर आता हूँ। जाऊँ ?"

"हाँ।"

आकाश, हरनाथ के पास पहुँचा। हरनाथ को सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई। फिर दोनों सन्तबक्स की कोठी पर आए और उसे साथ लेकर सीधे कोतवाली आ पहुँचे। हरनाथ ने भी पहुँचकर उमेश की पीठ थपथपाई, "कमाल कर दिया पट्ठे। इस समय अगर तुम कहीं लड़की होते तो शादी करे बिना मैं मानता नहीं। तुमसे सरऊ इतनी आशा नहीं थी।"

"इसीलिए तो किया है। अब साबित हो गया न कि मैं आशिक-मिजाज़ के साथ-साथ बहादुर भी हूँ ?" उमेश हँसने लगा और तनिक धीरे से बोला, "अगर लड़कियों के चक्कर में रात-दिन एक कर सकता हूँ तो अवसर पड़ने पर यह भी कर सकता हूँ। समझे ब्रह्मचारीजी ?"

हरनाथ हँसने लगा। "मैंने तुम्हारा लोहा मान लिया प्यारे।"

"तो फिर जेल से छूटकर आने पर तुम सरऊ लड़कियों के मामले में कभी हस्तक्षेप नहीं करोगे न ? क्यों आकाश ?"

सन्तबक्स ने पूछा, "तुम्हें जेल कब तक भेजा जाएगा ?"

"सम्भवतः शाम तक। अभी दस-पाँच बहादुर और आ रहे होंगे।"

"मलाका जेल जाओगे या नैनी ?"

"अभी तो शायद मलाका ही जाना पड़े। परसों-नरसों तक नैनी भेज दें तो भेज दें। वैसे··· ।"

तभी एक पुलिसवाला आया और उसने बातचीत समाप्त करने को कहा। सबने उमेश से बिदाई ली, परन्तु न जाने क्यों अलग होते समय वे रुआँसे हो आये थे। उमेश चुपचाप बैठ गया। मन कुछ उदास हो आया।

अभी बहुत समय नहीं बीता होगा कि कृष्णमुरारीलाल आ पहुँचे। उमेश सकपकाकर खड़ा हो गया। कृष्णमुरारीलाल गंभीर स्वर में बोले, "मैंने कोतवालसाहब से अभी बातचीत की है। वह मेरे ऊपर बड़े मेहरबान हैं। माफी माँगने से रिहाई हो सकती है। ऐसा उन्होंने आश्वासन दिया है। मेरे विचार···।"

"सो तो ठीक है भाईसाहब," उमेश ने बीच में टोक दिया, "लेकिन माफी कैसे माँग सकता हूँ ? इससे बड़ी भद होगी।"

"उमेशसाहब, न तो आपकी अभी उम्र खत्म हुई जा रही है और न ये आन्दोलन। अभी दस-बीस वर्ष अंग्रेज़ों को कोई हटा नहीं सकता। आप दूसरे आन्दोलन में भी जेल जा सकते हैं। अभी तो यों भी आप लोग लड़के हैं। रोज ऊधम मचाइए और रोज़ माफी माँगिए। इसमें आपका क्या बिगड़ता है ?" कृष्णमुरारीलाल ने समझाने की कोशिश की थी।

"आपका कहना-उचित है पर मैं माफी नहीं माँग सकता भाईसाहब। यह मेरे सिद्धान्त के विरुद्ध है। वैसे अगर आप चाहें तो कानपुर भैया को लिख दें।"

मिनट-दो-मिनट सोचते रहने के उपरान्त पुनः कृष्णमुरारीलाल ने कहा, "आपने परिस्थितियों को भली-भाँति सोच लिया है न ? आगे का कैरियर न बिगड़े इसी की मुझे चिन्ता है।"

"जहाँ इतने लोगों का बिगड़ रहा है उसमें एक मेरा भी बिगड़ जाएगा तो क्या हुआ भाईसाहब ?"

उन्होंने सिर हिलाया, "तब ठीक है। फिर ?"

"भाभीजी से नमस्ते कहियेगा और उन्हें बताइएगा कि मैं बिल्कुल अच्छी तरह हूँ। घबड़ाने की बात नहीं। अधिक-से अधिक तीन महीने की सज़ा होगी। उसे मैं चुटकियाँ बजाते काट लूँगा। आप जाइए।" उसने

हाथ जोड़ लिए।

कृष्णमुरारीलाल दो कदम चलकर फिर लौट आए, "किसी चीज़ की ज़रूरत ?"

"नहीं।"

वह चले गये।

रात में जया जितना अधिक सोचती आँसुओं का वेग भी उतना ही अधिक बढ़ता जाता। नींद पलकों में भीग कर जम गई। उसमें सुलाने-वाली शक्ति नहीं रह गई।

३१

रधिया बड़ी चतुर थी। वह नित्य बिन्दा से मिलने को कहती परन्तु मिलती जब तब और वह भी बहुत थोड़े समय के लिए जो न मिलने के समान था। वह चीज़ दूसरी थी कि धोखा-धड़ी में कभी-कभी बिन्दा के चक्कर में वह आ जाती परन्तु फिर भी जिस सफलता के लिए बिन्दा लालायित रहता वह प्राप्त न हो पाती और रधिया दाँव पढ़ाकर निकल भागती। लालसा प्रबल हो उठती। आकर्षण बढ़ जाता और दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा था।

इधर कई दिनों से पानी न बरसने के कारण मिट्टी सूख गई थी। कीचड़ समाप्त हो गया था। बाहर-भीतर आने जाने में अच्छा लगता था। आकाश में मेघों के टुकड़े आते और चक्कर काटते क्षितिज के गर्त में विलीन हो जाते। धूप-छाँव की उष्णता और शीतलता बड़ी भली लगती। खेतों में ज्वार, बाजरा और मक्का के पौधे लहलहा रहे थे। चारों ओर हरियाली का साम्राज्य फैल गया था। प्रकृति का सौन्दर्य निखर आया था।

आज दोपहरी में दो क्षण के लिए बिन्दा की भेंट रधिया से हो गई

थी। बिन्दा ने रात में भिखारीबाबा वाले बरगद के नीचे मिलने को कहा था। कई दिनों से न मिलने के कारण मन बड़ा व्याकुल था। कुछ उचटा उचटा-सा रहता था। रधिया ने मुस्कराते हुए आने का वायदा किया था। बिन्दा को उसके कहने पर विश्वास नहीं था इसलिए उसने पुनः अपनी कसम दिलाकर वायदे पर मोहर लगवाई थी और साथ ही यह भी कह दिया था कि यदि इस बार उसने बुद्धू बनाया तो पुनः उसकी भेंट न हो सकेगी। वह गाँव छोड़कर कहीं चला जाएगा। तब रधिया मुँह बिराती चली गई थी।

रात की प्रतीक्षा होने लगी। शाम आई परन्तु दुर्भाग्य को क्या कहा जाए? छितराये बादल सिमटने लगे। घनघोरता बढ़ने लगी और देखते-देखते काले-काले विकराल मेघों से नभमंडल घिर गया। पानी के भार से लदे हुए विकराल टकराये। तड़तड़ाहट हुई, लगने लगा आकाश फट कर गिर पड़ेगा। गर्जना बढ़ गई। पृथ्वी दहल उठी। पुनः बिजली कड़की, चमकी और मेघों को चुनौती देती हुई ओझल हो गई। मेघों के पास इतनी सहनशीलता कहाँ थी? उन्हें भी दहाड़ना और दूसरों पर अपनी शक्ति का प्रदर्शन करना आता था। वे भी गरजने लगे। थोड़ी देर तक जैसे दोनों में होड़ लग गई हो। कड़कना और गर्जना चलता रहा। परन्तु अन्त में बादलों की विजय हुई। वे झमाझम बरस उठे। मूसलाधार पानी गिरने लगा। बिन्दा अपने ओसारा में बैठा मन-ही-मन भगवान को सैकड़ों गालियाँ देने लगा। उसका सारा बना बनाया काम बिगड़ गया था।

समय का ठीक अनुमान नहीं था, परन्तु घड़ी भर रात गई होगी ऐसा समझ में आ रहा था। बिन्दा भोजन करके अपनी खटोली पर आकर लेट गया और सोचने लगा चलने न चलने के विषय में। गाँव सो चुका था। पानी अब भी बरस रहा था, परन्तु पहले जैसी तेज़ी नहीं थी। बिन्दा उठकर बैठ गया। अन्तर्द्वन्द्व बढ़ गया। कुछ समय और बीता। पानी थमने लगा। बिन्दा ने चलने का निश्चय किया। अपनी बात से क्यों मुकरा जाए? कहीं वह आ गई तो जीवन भर उसे कहने को हो जाएगा। वह खड़ा हुआ। अंगोछे को सिर पर बाँधा, लाठी उठाई और छप-छप करता हुआ भिखारीबाबा को चल पड़ा।

बरगद के पास पहुँचते-पहुँचते पानी पूर्णरूप से थम गया। केवल बूँदा-बाँदी थी। बरगद के नीचे वह भी नहीं थी। बिन्दा बरगद से सटकर खड़ा हो गया और प्रतीक्षा करने लगा। लगभग पौन घण्टा समाप्त हो गया रधिया नहीं आई। बिन्दा उसी प्रकार खड़ा रहा। घंटे भर से अधिक का समय गुज़र गया। रधिया नहीं आई। बरगद के पत्तों पर टपटपाहट बढ़ने लगी। पानी पुनः तेज़ होने वाला था। तब तक बादलों में गड़गड़ाहट हुई और तड़तड़ करती बिजली चमकी। सारा प्रदेश आलोकमय हो उठा। बिन्दा को दूर किसी आती हुई आकृति का आभास मिला। मन खिल उठा। रधिया के अतिरिक्त और कौन हो सकता था? वह सामने से हटकर बरगद के उस ओर छिप गया। उसने रधिया को डराने की सोचली थी।

आकृति समीप आती गई, परन्तु अँधेरा होने के कारण अभी अनुमान ठीक से नहीं लग पा रहा था। आकृति और समीप आई। बिल्कुल बरगद के पास आ गई। बिन्दा दाँत तले उँगली दबाकर काँप उठा। वह रधिया नहीं जमुनवा लोहार था। चोरी करने को निकला था। जमुनवा, लोहारगीरी के संग-संग रात में उपयुक्त अवसर देखकर लोगों के घर में सेंध भी लगा लिया करता था। बिन्दा साँस रोके मन-ही-मन ईश्वर की स्तुति करने लगा। यदि कहीं जमुनवा ने देख लिया तो बड़ी आफत आ जाएगी। खैर, भगवान ने उसकी सुन ली। जमुनवा सीधे आगे बढ़ गया। सम्भवतः आज उसे दूसरे गाँव में चोरी करनी थी।

बिन्दा ने संतोष की साँस ली और लाठी को संभाला। रधिया के आने की अब कोई आशा नहीं थी। उसे पुनः बुद्धू बनाया गया था। वह खिन्नचित चल पड़ा। पानी ज़ोर का बरसने लगा था। वह अभी पचास-साठ कदम ही गया होगा कि फिर कोई सामने हिलती हुई आकृति दिखलाई पड़ी। बिन्दा तनिक सतर्क होकर चलने लगा। अब किसी प्रकार का भय तो था ही नहीं, परन्तु जानने की जिज्ञासा स्वाभाविक थी। दोनों और समीप आये। बिन्दा को रधिया जैसी आकृति प्रतीत हुई। वह ठिठका "कौन है?" उसने पूछा।

उधर से कोई उत्तर नहीं मिला। आकृति पहिचान में आगई। वह

रधिया ही थी। बिन्दा का हृदय झूम उठा। रधिया समीप आगई, "लौट जा रहे थे ?" उसने पूछा।

"क्या करता ? घंटों से खड़ा हूँ।"

"तो मैं क्या करती तुम्हारी तरह मुझमें उतावलापन तो है नहीं। कसम दिलवादी थी इसलिए आगई नहीं तो आती भी नहीं। तुम्हारी बात रख दी। अब जाओ। हम इधर से चले जाएँगे।"

बिन्दा ने उसका हाथ पकड़ लिया, "क्यों नहीं ? अब तुम इधर से ज़रूर जाओगी।" वह रधिया का हाथ खींचता हुआ बरगद की ओर चल पड़ा।

दोनों भीगे हुए थे। बरगद के नीचे आने पर अपने-अपने कपड़े निचोड़े। बिन्दा ने सिर से अँगोछा खोलकर अपने मुँह को पोंछा और फिर रधिया को पोंछने लगा। रधिया ने अँगोछा उसके हाथ से छीन लिया। दोनों पेड़ से सटकर खड़े होगए। पुराने और सघन बरगद की मोटी-मोटी डालियों ने पानी का बरकाव कर दिया, परन्तु अभी और भी बरकाव की गुंजाइश थी अगर वे दोनों इकाई में परिवर्तित हो जाते। अन्त में यही हुआ भी। मिनट-दो-मिनट भी न बीते होंगे कि दोनों एक-दूसरे के आलिंगन में कस गए और एक-दूसरे से मुँह सटाकर बातें करने लगे। बिन्दा बोला, "आज अगर तुम न आतीं तो हमने कल गाँव छोड़ दिया होता।"

"तो इसमें नुकसान किसका था ? पछताना तो तुम्हीं को पड़ता। हम तो जैसे अब हैं वैसे तब भी रहते।"

"क्या तुम्हें मेरे जाने का दुःख न होता ?"

"बिल्कुल न होता। जब तुम हमें छोड़ सकते हो तो क्या हम तुम्हें नहीं छोड़ सकते ? जब तुम्हें हमारी चिन्ता नहीं तो हमें तुम्हारी क्यों होने लगी ?"

बिन्दा ने उसके होंठों को काट लिया, "मेरे संग भागकर चल सकती हो ?"

"तुम अपने मन की सोचो। मुझे भागने में कितनी देर लगेगी। जब कहो तब चले चलें।"

"हम सोचकर ही तो कह रहे हैं और बहुत पहले से कह रहे हैं। अगर

तुम तैयार होगई होतीं तो अबतक हम लोगों का घर बस गया होता।"

"कब चल रहे हो ? कल।"

"कल भी चल सकते हैं।' बिन्दा बड़ा प्रसन्न था। रधिया आज स्वयं सब कुछ कह रही थी।

"और चलोगे कहाँ ?"

"कलकत्ता।"

"पर एक बात और समझ लो, फिर लखनपुर में आना न हो सकेगा। यह सदा के लिए छूट जाएगा।"

"रधिया के लिए तो समूचा संसार छूट जाए तो कोई चिन्ता नहीं। इस लखनपुर की क्या बिसात ?"

रधिया ने अपने हाथ ढीले किए, "छोड़ो।"

"क्यों ?"

"अब चलना चाहिए।"

"इतनी जल्दी ?"

"बहुत समय हो गया है। कहीं माई जग गई तो ?"

"चलने के लिए क्या तय किया ?" बिन्दा अभी उसी प्रकार जकड़े रहा।

"तीन-चार दिन बाद। गाड़ी-वाड़ी का सब टाइम तो पता लगा लो। यहाँ से निकल चलना आसान काम थोड़े है। भनक पड़ते ही सब भरभंड हो जाएगा। बहुत चतुराई से सब कुछ करना होगा। छोड़ो।" वह नीचे बैठती हुई सट से अलग हो गई।

बिन्दा ने हाथ पकड़कर पुनः आबद्ध करना चाहा, परन्तु रधिया ने बिल्कुल नाही कर दिया। बिन्दा को रुक जाना पड़ा। वह बोली, "तुम बाद में आना।" वह चलने को हुई फिर रुक गई, "परसों इसी समय यहाँ मिलना। कल-परसों में हमारी सब तैयारी हो जाएगी। तुम भी सब पता लगा लो। अब हम जाएँ ?"

"जाओ।"

उसके जाने के कुछ समय उपरान्त बिन्दा भी आगामी जीवन की सुखद कल्पना करता हुआ धीरे-धीरे घर को चल पड़ा।

मनुष्य सोचता है कुछ और, परन्तु संसार का रचने वाला कर देता है कुछ और। ठीक भी करता है। यदि ऐसा न करे तो सृष्टि में विषमता फैल जाए, सारा प्रबन्ध बिगड़ जाए, उसके प्रति किसी की आस्था न रह जाए।

दूसरे दिन सवेरे बिन्दा ने स्टेशन जाकर गाड़ियों के समय का पता लगाया। फिर घर जाकर गुप्तरूप से जो कुछ तैयारी करनी थी—करने लगा। उसका मन बल्लियों उछल रहा था। बड़ी-बड़ी सुखद कल्पनाओं का निर्माण हो रहा था। स्वप्न संवर रहा था, प्रसन्नता बिखर रही थी। जल्दी से किसी प्रकार तीन-चार दिन बीतें, इसी की इन्तज़ारी थी।

किसी प्रकार दिन बीता और जैसे-तैसे रात भी बीती। एक दिन समाप्त हुआ। दूसरा दिन आया। लगभग दस बज रहे होंगे। बिन्दा द्वार पर बैठा चबैना चबा रहा था कि दारोगाजी चार पुलिसवालों के संग आ पहुँचे। साथ में गाँव का चौकीदार भी था। उसने बिन्दा की ओर संकेत किया। दो पुलिसवालों ने बढ़कर उसे पकड़ लिया और तत्काल उसके हाथों में हथकड़ी डाल दी। बिन्दा गिड़गिड़ाने लगा। उसे कारण समझ में नहीं आ रहा था। तुरन्त ही गाँव में ख़बर फैल गई और देखते-देखते पूरा गाँव वहाँ इकट्ठा हो गया। पूछने पर मालूम हुआ कि बिन्दा के विरुद्ध सरकार के खिलाफ गुप्तरूप से काम करने की रिपोर्ट है। पुलिस के पिट्ठुओं और बिन्दा से वैर मानने वालों ने अपना बदला निकाला था।

जो कुछ दारोगाजी को लिखना-पढ़ना था उसे उन्होंने लिखा-पढ़ा। तदुपरान्त बिन्दा को लेकर चल पड़े। बिन्दा के पितातुल्य ससुर खड़े-खड़े आँसू बहाते रहे। उन्हें दारोगाजी से जितनी आरज़ू मिन्नतें करनी थीं, सब करली थीं। पर दारोगाजी असमर्थ थे। बिन्दा के कमर में रस्सी बाँधी गई और पुलिसवाले उसे लेकर चल दिए। रधिया भीड़ में खड़ी आँसू बहा रही थी। होने को क्या था और क्या हो गया! होनहार प्रबल है।

३२

इलाहाबाद, जमुना के उस पार नैनी में सेन्ट्रलजेल है और इलाहाबाद शहर में, गवर्मेन्ट कालेज के पास डिस्ट्रिक्ट जेल है जो 'मलाकाजेल' से सम्बोधित होता है। संध्या होते-होते उमेश तथा अन्य गिरफ्तार किये हुए लड़के पुलिसलारी में बिठलाकर मलाकाजेल भेज दिये गए। ज्यों-ज्यों जेल समीप आता गया, उमेश ज़ोर-ज़ोर से नारे लगवाने लगा। जेल समीप आने पर जेल से भी नारों की आवाज़ आने लगी। सम्भवतः अन्दरवालों ने इन लोगों की आवाज़ सुन ली थी। जेल के फाटक पर लारी आकर रुकी। नारे और ज़ोर-शोर से लगे। भीतर से भी नारे लगे और फिर दो-चार मिनट तक खूब नारे लगे। शायद आगन्तुक अपने आने का उत्साह व्यक्त कर रहे थे और अन्दर वाले उनके स्वागत में सम्मान प्रदर्शित कर रहे थे।

जेल के भीतर ऊँची दीवारों के मध्य बने बैरक के दरवाज़े से उमेश के प्रवेश करते ही पुनः 'इन्कलाब ज़िन्दाबाद' के नारे लगे और जितने लोग थे सब उमेश की टोली के चारों ओर एकत्रित हो गये। इस बैरक में केवल राजनीतिक बन्दी ही थे और इन बन्दियों में अधिकतर संख्या विद्यार्थियों की थी। सबने सबको देखा। बहुत से उमेश के साथी निकल आये। बड़ी खुशी हुई। चन्द शब्दों में परिचय हुआ और जेल के जमादारसाहब के आग्रह पर सब बैरक में जाकर बन्द हो गये। अन्दर बैरक में बैठक बैठी और बड़ी रात गये तक सारे समाचार पूछे गये। उमेश सविस्तार बताता रहा।

उमेशवाले बैरक में अधिकतर विद्यार्थी ही थे परन्तु इस बैरक के सामने जो दूसरा बैरक था उसमें कुछ विद्यार्थी और कुछ दूसरे लोग थे। पर ये सब राजनीतिक थे, देहातों और कसबों में गिरफ्तार होकर आये थे। दोनों बैरकों की संख्या लगभग सौ के थी। राजनीतिक बन्दियों को किसी प्रकार का काम तो करना नहीं होता और फिर ऐसे समय में तो और भी काम का नाम नहीं लिया जाता। गुनाह-बेलज्ज़त अधिकारी एक और नई परेशानी क्यों मोल लें?

स्नान और भोजन के उपरान्त दोनों बैरकों के लोग बैठे। सर्वप्रथम परिचय हुआ तदुपरान्त दूसरे बैरक वालों के कहने पर उमेश ने थोड़े में बाहर की स्थिति बताई और गर्व के साथ आशा व्यक्त की कि वे अपनी लड़ाई में निस्संदेह विजयी होंगे। हर्ष ध्वनियाँ हुई और तालियाँ पीटीं। इसके उपरान्त नित्य की भाँति ठाकुर रघुनाथसिंह जो किसी देहाती क्षेत्र से गिरफ्तार होकर आये थे और सबमें बुजुर्ग थे—सभापति बनाये गये और कवि सम्मेलन का कार्यक्रम आरम्भ हुआ। कविताएँ पढ़ी जाने लगीं। सभी को कुछ-न-कुछ सुनाना होता था—चाहे वह उर्दू में हो या हिन्दी में। उमेश का भी नम्बर आया। उससे भी सुनाने के लिए कहा गया। उसने सुनाया—

भारत छोड़ो, भारत छोड़ो की पुकार आई कहाँ से,
ज़ंजीर तोड़ो, ज़ंजीर तोड़ो की पुकार आई कहाँ से।

सत्तावन ने हमें जगाया,
ब्यालिस ने अब हमें उठाया,
मिटकर रहेगी यह सरकार,
ऐसी पुकार आई कहाँ से।

जान गंवाई वीर भगत ने,
शान बढ़ाई 'चन्द्र' प्रवर ने,
निकली हृदय से सबके पुकार,
ऐसी पुकार आई कहाँ से।

अब न सहेंगे ज़ुल्म तुम्हारे,
जान हथेली पै हमने हैं धारे,
निश्चित तुम्हारी होगई हार,
ऐसी पुकार आई कहाँ से।

देश का कण-कण जाग उठा है,
अपनी सफलता माँग उठा है,
भारत माँ की हुई जयकार,
ऐसी पुकार आई कहाँ से।

खूब तालियाँ पिटीं और पुनः एक कविता सुनाने को कहा गया। उमेश ने पुरानी कविता 'जवानो आज तुम लेकर चलो टोली' सुना दी। इसकी

तो और भी प्रशंसा हुई। काफी देर तक 'वाह-वाह' होता रहा।

लगभग पाँच बजे यह कवि सम्मेलन समाप्त हुआ और सब अपने दैनिक क्रियाओं में व्यस्त होगये। यही इनके नित्य का मनोरंजन था। इस चारदीवारी के बीच और कुछ उपलब्ध नहीं हो सकता था।

तीसरे दिन उमेश और उसके साथियों का मुकदमा हुआ। जबसे आन्दोलन ने उग्र रूप धारण किया था, तबसे समस्त राजनीतिक बन्दियों का मुकदमा जेल के भीतर ही होने लगा था। एक एंग्लोइण्डियन मजिस्ट्रेट उसके लिए नियुक्त किया गया था। ग्यारह बजे के लगभग उमेश मजिस्ट्रेट के सामने उपस्थित किया गया। उसने पूछा, "टुम बेंगाली कॉलेज गया था?"

"गया था।" उमेश ने उत्तर दिया।

"टुमने टीचर्स को पीटा और लाक्स तोड़कर स्टूडेन्टस् को फोरसिबली बाहर निकालकर प्रोसेशन में चलने के लिए मजबूर किया?"

"बिल्कुल ग़लत। मैंने न तो टीचर्स को पीटा और न स्टूडेन्टस् को फोरसिबली...।"

वह बीच में बोल उठा, "खैर, खैर। हम सब समझता है। टुम माफी माँगकर छूट सकता है। टुम ब्रिटिश गवर्मेन्ट के खिलाफ काम कर रहा था।"

उमेश ने भी उसी के टोन में कहा, "हम अब भी करेगा और माफी नहीं माँगेगा। हम गद्दार नहीं है। हम अपनी कन्ट्री पर जान दे सकता है। टुम समझा?"

अधिकारी को आगे कुछ कहने का साहस नहीं हुआ। वह लिखने लगा और तत्काल फैसला सुना दिया, "तीन महीने की सज़ा या दो सौ रुपए जुर्माना।" उमेश मुस्कराता हुआ कमरे से बाहर निकला। उसे तीन महीने की सज़ा अधिक प्रिय थी।

लगभग एक सप्ताह तो उमेश ने बड़ी हँसी-खुशी में बिताए, लेकिन

टीचर्स=अध्यापक । लाक्स=ताले । स्टूडेन्टस्=विद्यार्थी । फोरसिबली=ज़बर्दस्ती । प्रोसेशन=जुलूस ।

अब जब-तब एकान्त में या रात में सोते समय उसे जेल का वातावरण भयानक लगने लगा था। उसकी तबीयत ऊबने लगी थी। इच्छा होती कि अगर किसी प्रकार निकल भागने का उपाय बन जाता तो बड़ा सुन्दर होता और तब वह घंटों इस उपाय को कार्यान्वित करने के रास्तों पर सोचता-विचारता, परन्तु अन्त में निष्कर्ष यही निकलता कि ऐसा कर लेना उसके बूते के बाहर की चीज़ है। वह खिन्नचित्त मन मारकर कुछ और सोचने का प्रयत्न करने लगता। अथवा अपनी कायरता पर अपने को धिक्कारता, हेय बताता तथा पुन: इस प्रकार के विचार न लाने की प्रतिज्ञाएं करने लगता। सम्भवत: प्रथम बार जेल आने में सबकी मन:स्थिति ऐसी ही होगी। दिन जैसे-तैसे कटने लगे।

× × ×

यद्यपि कहने के लिए जया ने दोनों शाम मुँह जूठा किया था, परन्तु वैसे कई दिनों तक उसका खाना-पीना हराम रहा। आँखों में आँसू थमते नहीं थे। एकान्त में या रात के सोते समय उसका तकिया भीग जाया करता था। उमेश क्षणभर के लिए भी उसके विचारों से हटता नहीं था। अजीब हालत होगई थी। वह असहाय बन गई थी। रोने के अतिरिक्त उसके पास कोई चारा नहीं था। फिर एक दिन मधु द्वारा तीन मास की सज़ा की सूचना मिली। जैसे उस पर पहाड़ टूट पड़ा हो। वह बिलख उठी। मधु ने समझाया, "तीन महीने तीन वर्ष नहीं होते जया। इसे बीतते कितना समय लगेगा? तुम्हें इतना अधीर नहीं होना चाहिए। उमेशबाबू का त्याग महान् है। तुम्हें उनके कार्यों पर गर्व करना चाहिए और अपनी प्रेरणा से उन्हें बल देने का प्रयास करना चाहिए, जिससे वह अधिक दृढ़ता के साथ इस यातना में सफलता पा सकें।"

जया को कुछ ढाढ़स बँधा, फिर भी वह रुँधे कंठ से बोली, "मैंने तो उन्हें बहुत दिनों से देखा तक नहीं है मधु। वह इधर घर पर आते कहाँ थे? उन्होंने मेरे लिए सब-कुछ किया पर मैं उनके लिए कुछ न कर सकी और अब···।"

"खैर, अभी बिगड़ा क्या है? आजाएँ तब कर देना," वह मुस्कराई, "आदमियों की तो बहुत लिमिटेड डिज़ायर्स होती हैं। मिनटों में पूरी हो

जाएँगी।" उसने उसके गाल में चिकोटी काट लिया, "इस प्रकार दुखी होने की आवश्यकता नहीं। कल सम्भवत: आकाशसाहब से भेंट होगी तब मैं उमेशबाबू से मुलाकात की चर्चा चलाऊँगी। अभी नरसों वह, हरनाथसिंह और सन्तबक्स मिलकर आए हैं।"

"उमेशबाबू से ?"

"हाँ।"

"पर तुमने अभी तक क्यों नहीं बताया ?"

"बताती कैसे ? पहले तुम्हें रोने से छुट्टी तो मिले।" वह जान-बूझकर तनिक रुक गई। जया ने उसकी ओर देखते हुए उत्सुकता व्यक्त की। मधु हँसने लगी, "वह बहुत अच्छी तरह हैं। स्वास्थ्य भी बढ़िया है। खाने-सोने के अतिरिक्त और कोई काम नहीं है। दिन-भर गाने और कविताएँ हुआ करती हैं।"

"और ?"

"और क्या ? उन्होंने तुम्हारे विषय में भी पूछा था और आकाशसाहब से कहा था कि मेरे द्वारा अपने स्वास्थ्य की सूचना तुम्हें दे दी जाए।"

जया के मुखमंडल पर प्रसन्नता झलक आई, "तो कल तुम आकाशसाहब से मिलोगी ?"

"आशा तो है।"

"फिर मुलाकात···।"

"इतनी जल्दी बेचैनी बढ़ गई ? श्रीमतीजी अभी उसमें हफ्ते-दो हफ्ते का समय लगेगा तब कहीं भेंट करने की परमीशन मिल सकेगी। इतना आसान काम नहीं है। आकाशसाहब बतला रहे थे कि बड़ी दौड़धूप के बाद उन लोगों की मुलाकात हो सकी थी।"

जया ने कुछ सोचने के उपरान्त पूछा, "कल तुम कहाँ और किस समय मिलोगी ?"

"पब्लिक लाइब्रेरी में, ग्यारह बजे।"

"क्या मैं भी तुम्हारे साथ चलूँ ?"

"उमेशबाबू के विषय में पूछने के लिए ?"

जया ने सिर हिलाया।

"बड़ा जादू कर रखा है उमेशबाबू ने। अगर यही दशा रही तो मैरिज की तैयारी जल्द करनी होगी।" वह हँसने लगी।

मधु का कान पकड़कर जया ने हिलाया।

दूसरे दिन जया ने मधु के संग आकाश से कम्पनी बाग स्थित पब्लिक लाइब्रेरी में भेंट की और काफी देर तक बात-चीत होती रही।

एक सप्ताह के भीतर मुलाक़ात की अनुमति मिल गई। मुलाक़ाती थीं जया और मधु। निश्चित तिथि पर मधु पहले जया के घर आई। उसकी दीदी से बहाना करके उसे अपने घर ले जाने को कहा। अनुमति मिल गई। दोनों सहेलियों ने बाहर आकर रिक्शा किया और मलाकाजेल चल पड़ीं। रास्ते में फल भी ले लिये गए। जया की व्याकुलता बढ़ गई थी। शीघ्र उमेश देखने को मिलता यही बेचैनी थी। जेल आया। फाटक से कुछ पहले हरनाथ और सन्तबक्स और आकाश खड़े मिले। आकाश दोनों युवतियों को संग ले गया। जेलर महोदय ने सज्जनता बरती। उन्होंने दोनों को अपने आफिस में बुला लिया और फिर एक सिपाही को आदेश दिया कि वह उमेश को ले आए। आकाश यह कहकर कि हम बाहर हैं, चला आया। जेलरसाहब भी उठकर जेल के भीतर चले गए।

उमेश किसी वाद-विवाद में उलझा हुआ था जब सिपाही ने आकर मुलाक़ात की सूचना दी और फाटक पर चलने को कहा। उमेश क्षणभर तक उसे देखता रहा तदुपरान्त कुछ सोचता हुआ खड़ा हो गया। मुलाक़ाती कौन हो सकता है—वह अनुमान नहीं लगा पा रहा था। बैरक से बाहर निकला। अनायास ध्यान में आया—भैया तो नहीं आगए? मस्तिष्क ने पुष्टि की—अवश्य भइया आगए। उनके सिवा और कौन हो सकता था? उसके अन्तर में उदासी फैल गई। भैया पूछेंगे तो वह क्या उत्तर देगा? शायद उन्हें भी मेरा इस प्रकार सक्रिय होकर काम करना पसन्द न हो। खैर, मैंने कोई निन्दनीय कार्य तो किया नहीं है।

फाटक आ गया। सिपाही ने खटखटाया। फाटक खुला। उमेश अन्दर आया, परन्तु सामने फाटक पर किसी को न देखकर उसने गर्दन मोड़ी ही थी कि सिपाही बोला, "इधर आफिस में।"

उमेश ने दरवाज़े की चिक उठाई—सामने जया और मधु बैठी थीं। वह सन्न रह गया। दोनों खड़ी हो गईं और नमस्ते किया। उमेश कुर्सी पर आकर बैठ गया। सैकण्ड-दो-सैकण्ड उमेश और जया के नेत्र एक-दूसरे को निहारते रहे तदुपरान्त जया ने गर्दन झुका ली। "आप अच्छी तरह हैं, मधुजी ?"

"जी हाँ।"

"आप लोग अकेले आई हैं या...।"

"नहीं। हरनाथसाहव वग़ैरह सब लोग हैं। आप ठीक हैं ?"

"ठीक ही समझिए। जेलियों को बेठीक कहने का अधिकार कहाँ ?" अब जैसे भी हो तीन महीने काटने होंगे।" उसने जया की ओर गर्दन मोड़ी और आश्चर्य से बोल उठा, "यह क्या ?"

जया भरसक रोकने का प्रयत्न करने पर भी अपने आँसुओं को न रोक सकी थी। वह कपोलों पर बह चले थे। मधु ने देखा "जब से आप जेल आये हैं" वह बोली, "इसकी यही हालत है, न खाती है न पीती है और दिन-रात रोया करती है।"

"पर इसमें रोने की क्या बात है ? मुझे दस-पाँच हज़ार वर्ष की सजा तो हुई नहीं है। तीन महीने गुज़रने में कितना समय लगेगा ? यह बिल्कुल लड़कपन है। ऐसा नहीं होना चाहिए।" उमेश ढाढ़स दे रहा था पर मन उसका भी भर आया था।

जया के आँसू और तेज़ होगए।

मधु ने डाँट बताई, "जब केवल रोना था तो यहाँ आने की क्या आवश्यकता थी ? तुम्हारी भी अजीब हालत है। उमेशबाबू से कुछ बातें करो। कितनी उलझनों के बाद तो भेंट की परमीशन मिल सकी है।" उसने आँचल से उसकी आँखों को पोंछा और अचानक कुछ स्मरण आने के कारण वह खड़ी होगई, "फल कहाँ हैं ?" उसने पूछा।

"रिक्शे में।" जया धीरे से बोली।

"मैं अभी लेकर आती हूँ।" वह बाहर चली गई।

उमेश उठकर जया के बगल में आ बैठा। जया ने सिर उठाया,

"आपको कोई तकलीफ तो नहीं है ?" वह क्या पूछे यही नहीं समझ पा रही थी।

"तकलीफ तो कोई नहीं थी, लेकिन अब होगई है। जब तुम इस प्रकार रोया करोगी तो हो चुका। साहस इतना है कि मुझसे मिलने जेल चली आई और यहाँ आकर रोने भी लगीं। बोलो, अब तो नहीं रोओगी ?"

जया ने सिर हिलाया।

"नहीं।" मुँह से बोलो।

"नहीं रोऊँगी।"

"अब हँसो। हँसो न !"

जया मुस्कराई और सिर झुका लिया।

मधु फल लेकर आई और उसके पीछे-पीछे सिपाही भी आया और बात समाप्त करने के लिए कहा।

"बस दो मिनट और।" मधु ने कहा और कुर्सी खींचकर बैठ गई। उसने जया की ओर देखा, "चलिये, मूड तो बदला। कुछ बातें भी हुईं उमेशबाबू ?"

"यह भाग्य में नहीं बदा है। इतने दिनों बाद अवसर भी मिला तो बेकार चला गया। क्या बताया जाए ?"

"बेकार तो नहीं गया। दर्शन मिल गया यह क्या कम है ?" वह हँसी।

"यह भी आप ठीक कह रही हैं। इस बार दर्शन और अगली बार बातचीत। बढ़ावा धीरे-धीरे मिलना चाहिए।"

सब हँसने लगे।

पुनः सिपाही ने कमरे की चिक उठाई और झाँक कर चला गया। यह संकेत पर्याप्त था। उमेश खड़ा होगया, "आइये, चलिये।" वह बोला।

मधु और जया उठीं। उमेश ने मधु से कहा, "आकाश से कहियेगा कि आज तो केवल दर्शन-लाभ ही हो सका है। अगर दुबारा मुलाक़ात के लिए परमीशन मिल सके तो लेने का प्रयत्न करें अन्यथा इस तीन महीने की लम्बी अवधि बड़ी कठिनाई से कट पाएगी।" वह जया को देखकर मुस्कराया। जया उसे देखती रही।

फाटक खुला। नमस्ते के लिए हाथ जुड़ गए। जया के मुँह पर पुनः उदासी की रेखा फैल गई। मधु उसका हाथ पकड़ती हुई बाहर हो गई।

३३

कृष्णमुरारीलाल ने कई पत्र कानपुर डाले। तार भी किया, परन्तु उमेश के बड़े भाई नहीं आये। आजकल-आजकल में एक महीना समाप्त होने को आया। अब कृष्णमुरारीलाल ने किसी को भेजना ही उपयुक्त समझा। उन्होंने अपने दफ्तर के एक चपरासी को छुट्टी दिलवाई और भलीभाँति पता समझाकर जाने के लिए कहा। वे बड़े चिन्तित थे। उमेश के भैया क्या सोचेंगे ? ज़िम्मेदारियों को निभाना ही दुनिया में सबसे मुश्किल है।

संध्या हुई। अभी कृष्णमुरारीलाल कचहरी से आकर बैठे ही थे कि बाहर किसी ने आवाज दी। नौकर ने जाकर देखा। ताँगावाला बिस्तरबन्द लिए खड़ा था। पूछने पर मालूम हुआ कि कोई साहब कानपुर से आए हैं और अभी उनका बक्स भी लाना है। नौकर ने आकर कृष्णमुरारीलाल से बताया। "उमेश के बड़े भाई आगए ?" उन्होंने अपनी पत्नी से कहा और स्वयं सड़क पर आए। दोनों का परिचय हुआ। उमेश के बड़े भाई ही थे। कृष्णमुरारीलाल बड़े आवभगत के साथ लिवा लाये। सहायबाबू ने बैठते ही पूछा, "उमेश कहाँ है ?"

"क्या मेरा तार आपको नहीं मिला था ?"

"नहीं।"

"और पत्र ?"

"पत्र भी नहीं मिले।"

तब कृष्णमुरारीलाल ने सारी बातें बताईं और अन्त में यह भी कहा

कि कल चपरासी उनके पास जा रहा था। सहायबाबू अब सब सुनते रहे। उन्हें स्वप्न जैसा लग रहा था। चाय आई। चाय पीने के उपरान्त नहाने का प्रबन्ध हुआ और उसके बाद भोजन। रात में बड़ी देर तक कृष्णमुरारीलाल और सहायबाबू बातें करते रहे।

दूसरे दिन सहायबाबू का पहला काम था जुर्माने का रुपया जमा करना। कृष्णमुरारीलाल की वजह से सारे काम बहुत जल्दी हुए फिर भी रिहाई का हुक्म होते-होते शाम हो गई। सहायबाबू जेल आये और प्रतीक्षा करने लगे। अन्दर उमेश को सूचना दीगई। फाटक पर उसे इस समय क्यों बुलाया गया, वह समझ न सका। उसने अपने साथियों से जानना चाहा। बताया गया कि उसकी रिहाई होगई है, परन्तु उसे विश्वास नहीं हुआ। वह मज़ाक समझकर सिपाही के संग चल पड़ा।

जेलरसाहब के आफिस में घुसते ही भैया को देखकर वह सन्न रह गया। उसने बढ़कर पैर छुए। उन्होंने पीठ थपथपाई। तत्पश्चात दफ्तर के बाबुओं से जो कुछ लिखना-पढ़ना था उन्होंने लिखा-पढ़ा और उमेश की रिहाई होगई। सहायबाबू ने उठते हुए जेलरसाहब से हाथ मिलाया और बाहर निकले। सहायबाबू उमेश को बहुत प्यार करते थे। उन्होंने केवल इतना ही कहा, "पढ़ाई की ओर अधिक ध्यान होना चाहिए उमेश। यह सब काम बाद में भी हो सकते हैं।"

उमेश 'जी' कहकर चुप होरहा।

कृष्णमुरारीलाल के घर पर एक प्रकार से लड़कियों का झुण्ड लगा हुआ था। कालेज की और पास-पड़ोस की जया की सारी सहेलियाँ एकत्र होगई थीं तथा बड़ी बेसब्री से उमेश की प्रतीक्षा कर रही थीं। उमेश आया। फिर क्या था? लगा स्वागत-सत्कार होने। सभी उसकी प्रशंसा कर रही थीं और अप्रत्यक्ष रूप से अपने आकर्षण का संकेत दे रही थीं। उमेश गंभीर बना सब देखता-सुनता रहा। उसे अपने व्यक्तित्व पर गर्व होने लगा था। स्वाभाविक था। फिर जेल की चर्चा चली और नानाप्रकार के प्रश्न उमेश से होने लगे। वह एक-एक करके उत्तर देता रहा। इस प्रकार बातचीत में घंटा-डेढ़ घंटा बीत गया। फिर उमेश को चाय और खाने का निमन्त्रण मिलना आरम्भ हुआ। उमेश ने बीच में टोका, "लेकिन यह

सब होना कठिन है। भैया सवेरे वाली गाड़ी से मुझे गाँव ले जारहे हैं। विवशता है।"

कमरे में मौनता फैली, लेकिन तत्काल मधु बोली, "वाह ऐसा कैसे होगा? मैं अभी भाईसाहब से बात करके आती हूँ।" वह जया को साथ ले ऊपर जा पहुंची और उमेश को दो-एक दिन और रुकने के लिए आग्रह किया।

सहायबाबू ने बड़े स्नेह से समझाया, "मैं उसे छोड़ देता बेटी, लेकिन घर पर वाबूजी बड़े चिन्तित होंगे। उसे मेरे साथ न देखकर उनकी परेशानी बढ़ जाएगी। यह हो सकता है कि मैं सवेरेवाली गाड़ी से न जाकर शाम वाली गाड़ी से चला जाऊँगा। यह ठीक है?"

मधु आगे कुछ कहने में असमर्थ थी। वह 'जी' कहकर जया के साथ नीचे आगई और दिन-भर के अनुसार कार्य-क्रम बनाने लगी। तब तक बाहर से हरनाथ की आवाज़ आई, "उमेश! उमेश!!"

सब हँस पड़े, "लीजिए मित्रगण भी आगए।"

उमेश खड़ा हुआ। जया बोली, "कहीं जाने का कष्ट न कीजिएगा। मिलकर आजाइये।"

"अभी आया। ऐसी ग़लती इस वक्त नहीं करूँगा।" वह मुस्कराता हुआ बाहर आया।

बाहर तीनों मित्र खड़े थे। हरनाथ ने उसे गोद में उठा लिया, "सरऊ, खबर तक नहीं की और यहाँ बैठे रोमान्स कर रहे हो। जैसे हम लोगों का कोई महत्व नहीं?"

उमेश उसका हाथ खींचता हुआ सड़क पर आया। मोटर खड़ी थी। सब उसमें बैठ गये। "तुम साले बिल्कुल" उमेश बोला, "उजड्ड हो। कुछ मालूम भी है। इस समय लड़कियों की भीड़ लगी है। सब मेरी आरती उतार रही हैं? मेरे लिए सर्वस्व न्यौछावर करने को तैयार हैं। ऐसे समय में आपके पास आकर क्या मैं घुईयाँ छीलता? बौड़म कहीं का।"

"आकाश," हरनाथ बोला, "मोटर स्टार्ट करो। अब मैं इनकी आरती उतारूँगा। बच्चू नक्से की लेने लगे। इतने बड़े नेता होगए कि आपकी आरती उतारी जा रही है?"

"आकाश तो अब यों भी नहीं जा सकते। इनकी भी सरकारे आलम आई हुई हैं। उन्होंने तो भइया से कहकर कल दिन भर के लिए रोक लिया है वरना सवेरेवाली गाड़ी से तैयारी हो गई थी।"

आकाश दरवाज़ा खोलकर बाहर आगया, "भई, अब तो मैं कहीं जाने से रहा। जब वह यहाँ है तो फिर कहाँ आना-जाना?"

सब हँसने लगे। हँसी करने पर उमेश ने पूछा "अब बोलो क्या प्रोग्राम है?"

"क्या वास्तव में कल शाम को जाना तुम्हारा निश्चित हो गया है।"

"हाँ, भैइया गाँव लिवा जा रहे हैं।"

"लौटोगे कब तक?"

"मैं समझता हूँ आन्दोलन समाप्त होने के बाद ही परमीशन मिल सकेगी।"

हरनाथ सोचने लगा।

"मैं उन लोगों से कहकर आता हूँ," उमेश बाहर निकला, "फिर सिविल लाइन्स चलेंगे। कल दिनभर छुट्टी तो मिलने से रही। जाऊँ?"

"जाओ।"

उमेश ने आकर लड़कियों से विवशता प्रगट की और क्षमा माँगते हुए जाने की अनुमति माँगी। साथ ही, यह भी कह दिया कि कल का कार्यक्रम उन्हीं के ऊपर है। वे जैसा कहेंगी सब उसके लिए अनुकूल रहेगा। वह चला आया।

रात को लगभग ग्यारह बजे उमेश को घर पर छोड़ते हुए उसके मित्रों ने उससे बिदा ली।

सहायबाबू और कृष्णमुरारीलाल भोजन करके सो चुके थे। जया और उसकी दीदी उमेश की प्रतीक्षा में थीं। उमेश ने संग-संग बैठकर भोजन किया यद्यपि उसे भूख बिल्कुल नहीं थी। जया की दीदी से उमेश की विस्तारपूर्वक बातें नहीं हुई थीं इसलिए थोड़ी देर तक उमेश को उनसे भी बातें करनी पड़ीं। फिर सब सोने चले गए।

सब सो चुके थे, परन्तु उमेश अभी जग रहा था। रात साँय-साँय करने लगी थी। तब तक कचहरी का घंटा बोला, 'टन-टन।' दो बज गए। उमेश

ने करवट ली। बगल की खाट पर उसके भइया खर्राटे भर रहे थे। वह अपनी खाट से उठा और दबेपाँव नीचे जया के कमरे में आया और उसकी खाट पर बैठ गया। जया भी जग रही थी। उसने करवट बदली। उसे देखा और पुनः आँखें मूँदती हुई तकिये में मुँह को छिपा लिया। उमेश ने उसके मुँह को उठाना चाहा लेकिन उसने उठाया नहीं और लगी सिसक-सिसककर रोने। उमेश कारण न समझ सका। वह पूछने लगा, परन्तु जया उत्तर देने को तैयार नहीं थी। उसे तो केवल रोना था। उमेश ने बल का प्रयोग किया और उसे खींचकर अपनी गोद में कर लिया। जया और तेज़ी से रोने लगी। इस समय न तो उसे अपने जीजाजी की चिन्ता थी और न अपनी दीदी की। उमेश घबड़ाया। उसके मुँह पर हाथ रख दिया और तनिक कठोर शब्दों में बोला, "लोग जग जाएँगे जया। मैं साल-दो साल के लिए नहीं जा रहा हूँ। एक-दो महीने में आजाऊँगा। यह लड़कपन ठीक नहीं।"

जया उसी प्रकार रोती रही, परन्तु मुँह पर हाथ रखने से आवाज़ कम होगई थी। उमेश ने पुनः कहा, "मुझे महीने-दो महीने से ज्यादा समय नहीं लगेगा जया और हो सका तो पहले भी आजाऊँ। मैं तुम्हारी सौगन्ध खाकर कहता हूँ। मैं ज़रूर लौट आऊँगा। रोना बन्द करो। कहीं कोई जग न जाए। कुछ तो सोचो।" उमेश ने अपना हाथ हटा लिया।

मिनट-दो मिनट के लिए जया की सिसकियाँ धीमी पड़ीं परन्तु अचानक फिर तेज हो गईं और पहले की भाँति वह फिर ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी। उमेश ने पुनः उसके मुँह पर हाथ रख दिया और उसे समझाने का प्रयत्न करने लगा।

होने वाली बात। अनायास कृष्णमुरारीलाल की नींद खुल गई और उन्हें किसी के सिसकने का आभास हुआ। वह उठे और छत की मुँडेर के समीप आए। उन्हें जया के कमरे से आवाज़ आती हुई मालूम पड़ी। वह घूमकर उमेश की छत पर आए। उमेश की खाट खाली थी। उन्हें सब समझ में आगया। वह सैकण्ड-दो सैकण्ड कुछ सोचते रहे। क्या करना उपयुक्त होगा, सम्भवतः इसका निष्कर्ष निकालते रहे। लगभग पाँच मिनट बाद वह पट-पट करते हुये नीचे आए। अपने कमरे में गए और पुनः

ऊपर लौट गए। उन्होंने चोर को बता दिया कि उसकी चोरी पकड़ी गई है।

उमेश को काटो तो खून नहीं। उसने ज़ोर से जया के मुँह को दबा दिया था। वह काँप उठा था, शरीर पसीने से भीग गया था। जब उसे अनुमान लग गया कि आने वाला पुनः ऊपर लौट गया तो उसने धीरे से जया के कान में फुसफुसाया, "कोई आकर देख गया है।" वह उठकर वाहर आया और डरता हुआ दबेपाँव अपनी खाट पर आकर लेट रहा। अब नींद कहाँ आने को थी ? नानाप्रकार की बातें मस्तिष्क में चक्कर काटने लगीं। चिन्ता बढ़ गई। रात बीत गई। सवेरा होने को आया। उमेश व्यथा से व्यथित अभी तक यह निर्णय नहीं कर पाया था कि कृष्णमुरारीलाल नीचे गए थे या उनकी पत्नी।

ऐसी ही दशा नीचे जया की थी।

सब लोग जागे। मुँह-हाथ और स्नान-ध्यान होने लगा। चाय-नाश्ता हुआ। उमेश और जया के हृदय धक-धक कर रहे थे। वे ऊपर से प्रसन्न अवश्य दिख रहे थे, परन्तु अन्तर में जो ऐंठन थी उसके शूल का अनुमान दूसरा नहीं लगा सकता था। यद्यपि कृष्णमुरारीलाल अथवा उनकी पत्नी की बातों या व्यवहारों में किसी प्रकार का अन्तर नहीं था जिससे लेशमात्र भी सन्देह किया जा सके परन्तु इसमें भी, लेशमात्र सन्देह नहीं था कि रात में ऊपर से नीचे आने वाले व्यक्ति ने यह जताना चाहा था कि उसे सब कुछ मालूम हो चुका है। उमेश की उलझन जया से अधिक थी। खैर, जहाँ-जहाँ उसे चाय पीनी थी वह जया को संग लेकर गया। इसे तो करना ही था। रास्ते में दोनों ने प्रत्येक रूप से इस समस्या पर विचार भी किया, परन्तु अन्त में यह सोचकर कि जो होना होगा उसे देखा जाएगा—संतोश किया। पता नहीं कैसे पहले की अपेक्षा जया में अधिक दृढ़ता आगई थी।

जैसे-तैसे दिन का कार्यक्रम समाप्त हुआ। पाँच बजने को आये। चलने की तैयारी होने लगी। छै बजे रामबाग से गाड़ी छूटती थी। ताँगा आया। नौकर ने सामान रखा। कृष्णमुरारीलाल के संग सहायबाबू निकले। तदुपरान्त उमेश ने सबसे नमस्ते किया और मुड़कर आगे बढ़ा ही था कि जया सिसक उठी। उमेश ने गर्दन छुपाकर देखा, परन्तु रुका नहीं।

वह बढ़ता चला गया। जया सबके सामने उसी प्रकार रोती रही।

× × ×

रात में कृष्णमुरारीलाल ने अपनी पत्नी से कल रात वाली घटना बतलाई। और अन्त में सुझाव रखा कि वह अपने पिता को लिखे कि जैसे भी हो इसी जाड़े में जया का विवाह तय कर दिया जाए अथवा आगे पढ़ाने का विचार हो तो कहीं और प्रबन्ध किया जाए। जया की दीदी हक्का-बक्का सब सुनती-समझती रहीं। उन्हें अपने पति का सुझाव पसन्द था। "विवाह कर देना ही उत्तम रहेगा।" उन्होंने अपना निर्णय दिया।

"यह हो जाए तो अति उत्तम। तुम कल पत्र लिखदो। साथ ही किसी बहाने से हफ्ते-दो हफ्ते के भीतर जया को घर भेज दो। इसे अब यहाँ रखना ठीक नहीं है।"

३४

बिन्दा को मजिस्ट्रेट ने गुण्डा एक्ट के अन्तर्गत छै मास की सख्त सज़ा दे दी। वह जेल भेज दिया गया। जेल में भी उसके साथ कठोरता का व्यवहार किया गया। कारण, छोटे और बड़े जमादारसाहब की जेब गर्म नहीं हो सकी थी। बिन्दा चक्की पीसने में लगा दिया गया। पन्द्रह-पन्द्रह और बीस-बीस सेर खड़े होकर आटा या दाल पीसना इन्सानियत के नाम पर कलंक लगाना था न ? महीना भर बीता। बिन्दा की घनिष्ठता अन्य कैदियों की अपेक्षा उसके बगल में चक्की पीसने वाले से अधिक बढ़ने लगी। यद्यपि उस व्यक्ति की लम्बी-लम्बी दाढ़ी, बिखरे हुए सिर के बाल, सदैव चेहरे पर फैली हुई उदासी और एक पैर से लंग खाते हुए चलना—उसके व्यक्तित्व को घिनौना बनाये हुए थे, परन्तु उसकी बातों में जो आकर्षण था वह अनोखा था और इसी कारण बिन्दा दिन-प्रतिदिन उसकी ओर खिंचता

चला जा रहा था। वह भी बिन्दा के अतिरिक्त अन्य वन्दियों से नहीं के बराबर बोलता था। पूछने पर मालूम हुआ था कि उसे चार वर्ष की कैद हुई थी जिसमें एक वर्ष बीत चुका था।

बिन्दा की घनिष्ठता उससे बढ़ती गई। वह देश-विदेश की अनोखी और नानाप्रकार की बातें बताने लगा। बिन्दा सुनता और आश्चर्यचकित उसे निहारा करता। धीरे-धीरे दो-मास समाप्त होगये। अब दोनों की गुपचुप बातें होने लगीं और किसी नई योजना को कार्यान्वित करने का उपाय सोचा जाने लगा। उस घिनौने व्यक्ति का वास्तविक रूप बिन्दा को विदित हो गया था। वह जो दिखलाई पड़ रहा था उससे बहुत भिन्न था। यह बनावटी सूरत थी। बिन्दा पूर्णरूप से उसका शिष्य बन गया।

उपाय निकल आया। सब ठीक होगया। उपयुक्त दिन की प्रतीक्षा होने लगी। वह दिन आगया और दोनों रात के अंधकार में, सिपाही की आँखों में धूल झोंकते हुए जेल की दीवार के पार होगये। लगभग चार बजे जब ड्यूटी बदली तो बैरक में दो कैदी कम थे। पहली घंटी बोली। जेल में खलबली फैल गई। दौड़-धूप होने लगी। जेल का कोना-कोना छान डाला गया। जेलर महोदय का यह सन्देह कि अभी वे बाहर नहीं निकल पाये होंगे—मिट गया। लंगड़े के विषय में सभी को आश्चर्य हो रहा था।

दैनिक पत्रों द्वारा जब लखनपुर में बिन्दा के जेल से भाग निकलने की सूचना फैली तो बहुतों को विश्वास नहीं हुआ पर उमेश द्वारा पुष्टि हो जाने पर लोगों का भ्रम तो जाता रहा, परन्तु आश्चर्य की सीमा का उल्लंघन होजाने के कारण बिन्दा हफ्तों चर्चा का विषय बना रहा। जवान, बूढ़े, औरत, मर्द सभी की ज़बान पर बिन्दा का ज़िक्र था। रधिया सबकी सुनती और सोचती। वह औरों की भाँति स्वयं किसी प्रकार अटकलबाज़ी नहीं लगा पा रही थी। पर उसका मन बार-बार कह रहा था कि यदि बिन्दा जेल के बाहर है तो कभी-न-कभी उससे मिलने अवश्य आएगा।

मास-दो मास बीत गए। बिन्दा की स्मृति प्रायः गाँव वालों के मस्तिष्क से विस्मृत हो चुकी थी। परन्तु रधिया अब भी रात की नीरवता में बिन्दा की कल्पनाओं में खो जाया करती थी यद्यपि उसके आने के सम्बन्ध में मन की दृढ़ता पहले जैसी नहीं थी। कभी-कभी उसके मन में यह भी

सन्देह उठता कि सम्भव है भागने वाला कोई दूसरा बिन्दा हो। कारण, जेल से बाहर रहने पर बिन्दा उससे मिलने न आए—असम्भव है। उसका प्यार स्वार्थरहित और सच्चा है और ऐसा ही बिन्दा का। रधिया की कल्पनाएँ पलती रहीं। जब तक साँस, तब तक आस वाली बात थी। 'लगी' की यही विचित्रता है।

गोधूलि की बेला समाप्त हो चुकी थी। गाँव के बाहर, खेतों के ऊपर धुएँ की पतली लम्बी लकीर फैल गई थी। खेलते हुए बच्चों का कोहराम शान्त हो चला था। दीया-बाती होने लगी थी। किन्हीं घरों में भोजन पक चुका था और किन्हीं में थोड़ा-बहुत शेष था। नादों में अन्तिम बार चोकर-भूसी डालकर शेष बचे हुए चारे को चट कर जाने की लालच जानवरों को दी जाने लगी थी। रधिया अभी सब नादों में भूसी नहीं मिला पाई थी कि उसकी माँ चिल्लाती हुई अन्दर से बोली, "थोड़े गोइढा तो दे जाना।"

वह शेष नादों में चोकर डालकर पीछे डीह पर लगे हुए गोहरौर से गोहरा लेने चली गई। इस समय इधर पूर्णतः निर्जनता का आधिपत्य स्थापित था।

झुकी हुई रधिया अभी कण्डे निकाल ही रही थी कि किसी के पैरों की आहट मिली। उसने गर्दन उठाकर देखा। उसे आगन्तुक अजनबी प्रतीत हुआ। वह खड़ी होगई। वह और समीप आया। रधिया डरी। वह साहबों जैसा टोप और कपड़े पहने हुए था। वह भागने को हुई कि आगन्तुक ने दौड़कर उसका हाथ पकड़ लिया और एक हाथ से उसके मुँह को दबाते हुए बोला, "मैं बिन्दा हूँ, रधिया, बिन्दा।"

रधिया का शरीर काँपने लगा था। उसने हिम्मत करके आँख उठाई। उसे विश्वास नहीं हुआ था। कैसे होता? घुटनों तक धोती बाँधने वाला इस वेश-भूषा में। बिन्दा ने हैट उतार दी। "अब भी पहचान में नहीं आया राधो?" पुनः बिन्दा बोला।

रधिया उसी प्रकार टकटकी बाँधे देखती रह गई और क्षणभर में नेत्रों से आँसू बह निकले।

"जाओ, कण्डे रखकर भिखारीबाबा के पास आओ। मैं वहीं चल रहा हूँ।" वह उधर को मुड़ गया।

रधिया किंकर्तव्यविमूढ़-सी खड़ी की खड़ी रह गई। वह स्वप्नलोक में थी या भूलोक में समझ नहीं पा रही थी। अंग-अंग प्रसन्नता से नाचने लगा था। बिन्दा के आँखों से ओझल हो जाने पर उसे अपना ध्यान आया। उसने झटपट खाँची में कण्डे भरे और लाकर आँगन में पटकती हुई "अभी आई" कहकर तेज़ी से बाहर निकली और भिखारीबाबा वाले बरगद की ओर चल पड़ी।

बिन्दा वहाँ खड़ा प्रतीक्षा कर रहा था। रधिया ने और आगे सीवान में चलने को कहा। दोनों गाँव से काफी दूर बाहर निकलकर एक चिकने डाँड़ पर आमने-सामने बैठ गए। रधिया बिल्कुल सटकर बैठी और उसे निहारती हुई लगी उसके कपड़ों को टो-टो कर अनुमान लगाने। बिन्दा चुपचाप मुस्कराता रहा। रधिया ने उसके कन्धे में लटकती हुई उस छोटी वस्तु के विषय में पूछा, "यह क्या है?"

"पिस्तौल। अंग्रेज़ों को मारने के लिए।"

"पिस्तौल! बाप रे!! तुम लोगों को मारने भी लगे हो?"

"लोगों को नहीं। अंग्रेज़ों को। जब वह हमें मारते हैं तो हम उन्हें नहीं मार सकते?"

"और कहीं फिर पकड़ लिये गए तो?"

"तो क्या हुआ? भगतसिंह की भाँति फाँसी पर चढ़...।"

रधिया ने उसके मुँह पर हाथ रख दिया, "फाँसी चढ़ें अंग्रेज़। तुम क्यों चढ़ने लगे? तुम रहते कहाँ हो?"

"कोई ठिकाना नहीं। बलिया, बनारस, आज़मगढ़, जौनपुर, बकसर—कहीं भी रह सकते हैं। किसी एक स्थान पर निश्चित रूप से रहना नहीं होता।"

"पर इतने दिन कहाँ रहे? जेल से भागने की खबर तो कागज़ में बहुत पहले छप गई थीं। हम सब दिन तुम्हारे आने की बाट जोहते रहते थे।"

"मुझे इसका अनुमान है, परन्तु कुछ ऐसी परेशानियाँ थीं कि मैं चाह कर भी आने में असमर्थ था।"

"झूठ।" उसने मुँह बनाया, "चाहने वाले के लिए भी कोई काम

कठिन होता है ? जो इतनी ऊँची दीवार फाँद सकता है वह रधिया से···।"

बिन्दा ने हँसते हुए उसके अधरों को चूम लिया। "मैं सच कहता हूँ राधो, ऐसी ही विवशता थी, अन्यथा···।"

"बस, बस, रहने दो। हम सफाई थोड़े माँगते हैं। तुम्हारी बातों पर भरोसा है। अब आज कहाँ रहोगे ?"

"ग़ाज़ीपुर।"

"आओगे कब ?"

"जब कहो।"

"रहने दो। ऐसे आज्ञाकारी नहीं हो।" वह क्षणभर रुकी, "पर इस तरह जीवन कब तक चलता रहेगा ?"

"जब तक जीवित हैं।"

"क्या तुम्हारा भेद खुल नहीं सकता ? पुलिसवाले तो तुम्हारी खोज कर रहे होंगे ?"

"अवश्य कर रहे होंगे पर अब मैं उनके चंगुल में नहीं आ सकता। क्या मुझे इन कपड़ों में कोई बिन्दा कह सकता है ?"

"कह तो नहीं सकता, लेकिन पता लगाने वाले भी तो उड़ती चिड़ियों के पर कतरा करते हैं। एक बात कहूँ बुरा तो नहीं मानोगे ?"

"बिल्कुल नहीं। कहो।"

"अगर तुम अंग्रेज़ों से माफी माँगलो तो वह तुम्हें छोड़ नहीं देंगे ?"

"नहीं। और यदि छोड़ भी देते तब भी मैं माफी माँगने नहीं जाता। अब इस जीवन में यह नहीं होने का। दूसरे के गुलाम होकर रहने से तो मर जाना अच्छा है। मेरे गुरु का यही कथन है। अगर तुम्हें उनकी कहानी बताऊँ तो रो उठोगी। उन्होंने देश के लिए स्त्री, बच्चे, सम्पत्ति सबका त्याग कर दिया है। मैंने उनकी सौगन्ध खाकर उन्हीं के मार्ग पर चलने की प्रतिज्ञा की है। मैं इससे विमुख नहीं हो सकता। यह महान पाप होगा।"

थोड़ी देर के लिए वहाँ निस्तब्धता छागई। रधिया सोचने लगी। सम्भवत: उसके भावी जीवन का कल्पित भवन ढह गया था। उसके सारे अरमानों पर पानी फिर गया था। बिन्दा में ऐसा परिवर्तन आ सकता है—उसे स्वप्न में भी आशा नहीं थी। उसके अन्तर में एक विचित्र प्रकार

की व्यथा होने लगी थी ।

बिन्दा रधिया के भावों को समझता हुआ बोला, "मैं तुम्हारे भावों को समझ रहा हूँ राधो, परन्तु भाग्य में जो बदा है वह होकर ही रहेगा। न मुझे अपराधी बनाकर जेल में बन्द किया गया होता न यह परिस्थितियाँ बनतीं। मैंने भी तो तुम्हें पाकर बड़ी-बड़ी कल्पना कर रखी थीं। लेकिन··· खैर, जो भगवान करते हैं सब ठीक ही करते हैं। अब मैं तुमसे इतना ही कह सकता हूँ कि यदि तुम्हें किसी अन्य व्यक्ति के साथ बँधने की इच्छा हो तो बिना संकोच के तुम ऐसा कर सकती हो। इसमें मुझे प्रसन्नता होगी। वैसे मेरा प्रेम जैसे पहले था वैसे जीवन के अन्त तक रहेगा इसे तुम ध्रुव···।"

"चुप रहो।" रधिया ने डाँटा, "हमें क्या करना है क्या नहीं इसे हम अधिक जानते हैं और समझते हैं। क्या जीवन भर छोड़ने-करने के सिवा और कोई काम नहीं है ? क्या हम तुम्हें जीवन भर अपने मन में नहीं रख सकते ? बड़े आये प्रेम जताने वाले। अब तुम्हारा कब आना होगा ?" उसने प्रसंग बदला।

"अगले बुध को। तुम मिलोगी ?"

"यहीं आना पर अधिक रात गये पर। तब कुछ देर तुम्हारे पास बैठ भी सकती हूँ। यह टैम ठीक नहीं है।"

"अच्छी बात है। अब तुम जाओ।" वह खड़ा हुआ, "मेरे विषय में तुम्हें बहुत सतर्कता बरतने की आवश्यकता होगी। मेरा मतलब समझ रही हो न ?"

"तुम से अधिक। हम बुद्धू नहीं हैं।"

३५

गोरों ने गोलियों के बल पर पुनः देश में शान्ति की स्थापना कर दी। यद्यपि हज़ारों मौत के घाट उतार दिये गए थे, लाखों जेल में ठूँस दिये गए थे, उन्हें बेघरबार कर दिया गया था, उनकी सम्पत्ति अपहरण कर ली गई थी, सैकड़ों गाँवों को लूटकर जलवा दिया गया था, भूख से तड़प-तड़पकर असहायों को मरने के लिए विवश कर दिया गया था, महँगाई में अत्यधिक वृद्धि करा कर स्वार्थों को उभाड़ दिया गया था तथा अन्य जितने भी ज़ोर-ज़ुल्म के साधन हो सकते थे सभी का उपयोग किया गया और व्यवस्था कायम की गई। आतंकित और पीड़ित जनता भीगी बिल्ली बन गई। सारा जोश ठंडा पड़ गया। मन्सूबे समाप्त हो गए। स्वतन्त्रता का स्वप्न धूमिल पड़ गया। फिर वही दिनचर्या आरम्भ हुई। काम-धाम प्रारम्भ हुए। बाज़ार हाट खुलने लगे और सब जगह पहले जैसा अमन-चैन फैल गया।

स्कूल और कालेज खुल गए। बाहर से लड़के आने लगे। उमेश के पास भी उसके भाई का पत्र आया जिसमें उसे इलाहाबाद जाने को कहा गया था, परन्तु उसे कृष्णमुरारीलाल के यहाँ न रहकर होस्टल में रहने को कहा गया था। उसके रहने से कृष्णमुरारीलाल को कुछ असुविधा होती है ऐसा उसके भैया ने लिखा था। उमेश के मस्तिष्क की उलझन बढ़ गई। वह बार-बार पत्र पढ़ता और निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न करता कि इस असुविधा के पीछे वास्तविकता क्या है? यदि जया वाली बात है तो क्या कृष्णमुरारीलाल ने भैया को सब कुछ लिख दिया? परन्तु कृष्णमुरारीलाल ऐसा नहीं लिख सकते। उन्हें अपनी इज़्ज़त का भी ख्याल होगा। समझदार व्यक्ति ऐसी गलती नहीं करते हैं। मस्तिष्क में दूसरा विचार उठा फिर तीसरा उठा और इस प्रकार न मालूम कितने विचार उठते मिटते रहे। वह घंटों इसी गुत्थी को सुलझाने में तल्लीन रहा। निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न करता रहा।

इलाहाबाद जाने की तैयारी होने लगी। शनिवार का दिन निश्चित हुआ। पश्चिम की यात्रा के लिए यही दिन उत्तम होता है। उसके पिताजी प्रत्येक कार्य साइत देखकर करते हैं। परसों शनिवार था। कल उमेश के नाम से एक लिफाफा आया। वह जया का पत्र था। लिखा था—

उमेशबाबू,

नमस्ते!

पत्र घर से लिख रही हूँ। आपके जाने के बाद जीजाजी और दीदी में गुप्त मन्त्रणा हुई और अचानक एक दिन पिताजी ने तार देकर मुझे घर बुला लिया। घर आकर पूछने से मालूम हुआ कि मेरी शादी की बातचीत चल रही है और इसी जाड़ों में हो भी जाएगी। मैंने इस पर आपत्ति की और विवाह करने से इन्कार किया। माताजी बिगड़ पड़ीं और उस रात वाली घटना का हवाला देते हुए मुझे बड़ी देर तक भला-बुरा कहती रहीं। मैं चुप रही। मुझे वास्तविकता समझ में आगई। मैं उस दिन रात भर रोती रही। भारतीय नारी जिसे पहले से ही अबला कह दिया गया है वह रोने के अतिरिक्त और कर ही क्या सकती है? आज विगत जीवन की सारी घड़ियाँ एक-एक करके आँखों के सामने सिनेमा की भाँति ओझल होती चली जा रही हैं। क्या-क्या अभिलाषाएँ और लालसाएँ थीं? कैसे सुन्दर संसार की कल्पना की गई थी? क्या-क्या सोचा गया था? परन्तु दुर्भाग्य ने सब पर पानी फेर दिया। अब जीवन में पुनः कभी मिल सकेंगे, इसकी भी आशा नहीं रह गई है और यदि आशा हो भी तो वह किस मतलब की? जब नीड़ न बन सका तो मिलना-न-मिलना एक जैसा ही तो है।

आप सम्भवतः अब इलाहाबाद आने वाले होंगे। अब आप जीजाजी के घर न जाइए। खूब मेहनत से पढ़िएगा जिससे यह वर्ष खराब न जाए। और अन्तिम विनती यह है कि मुझे सदैव के लिए भूल जाइएगा। यदि आपका जीवन दुखमय होगया तो मुझे बड़ी व्यथा पहुँचेगी। अन्त में आपसे सदा के लिए बिदा माँगती हुई ईश्वर से प्रार्थना करती हूँ कि आप जीवन में सदा उन्नति के पथ पर अग्रसर होते हुए फूलते-फलते रहें।

जया

कांग्रेस की राजनीति करना ही शेष रह गया था। उमेश के प्रभाव से धीरे-धीरे सन्तबक्स और हरनाथ तो खद्दरधारी बन ही चुके थे, आकाश ने भी जब-तब खद्दर पहनना आरम्भ कर दिया था।

मोटर का शौक और बढ़ा। कानपुर, लखनऊ और जब-तब मोटर से दिल्ली के भी चक्कर लगने लगे। पैट्रोल का माहवारी खर्चा सैकड़ों रुपयों का होने लगा और यह सारा खर्चा हरनाथ बर्दाश्त किया करता था।

हरनाथ में सारे गुण अच्छे थे किन्तु एक दुर्गुण बड़ा भयंकर था। इतने बड़े ताल्लुकेदार का पुत्र होने के बावजूद भी उसे और अधिक धनी कहलाने की विशेष चाव रहती थी और यह चाव धीरे-धीरे ज़्यादा बढ़ने लगी थी। अपनी मित्र-मण्डली छोड़कर वह कालेज अथवा अन्य सभा-सोसाइटियों में जहाँ भी लोगों से मिलता प्रयत्न इसी बात का करता कि उसे ही प्रधानता दी जाए। कालेज के सहपाठियों को योंही दस-बीस रुपए दे देना उसके लिए मामूली बात थी। कभी-कभी तो वह बातों में आकर सौ-दो सौ रुपए भी दे दिया करता था। हरनाथ की यह दरियादिली और नवाबों-जैसी फ़िज़ूल खर्ची उमेश को बहुत अखरती थी और जब-तब वह हरनाथ को मना भी करता था, परन्तु यह कहकर कि "पैसा खर्च करने के लिए बना है," हरनाथ उमेश की नसीहत को हवा में उड़ा देता। उमेश को चुप हो जाना पड़ता।

रात के ग्यारह बज गए थे। उमेश और आकाश अभी कम्पनी बाग में घास पर लेटे हुए बातें कर रहे थे। संध्या को हरनाथ और सन्तबक्स से अलग होने पर जब-तब ये दोनों बड़ी रात गए तक अतीत और कभी वर्तमान की बातें किया करते थे। आज इनकी चर्चा का विषय हरनाथ बन गया था। उमेश ने कहा, "क्यों आकाश, हरनाथ के पास इतना रुपया कहाँ से आने लगा है, कभी इस पर भी विचार किया है?"

"कई बार कह चुका हूँ। एक-दो बार यही सवाल मैं तुमसे भी पूछने वाला था लेकिन बातों के सिलसिले में भूल जाने के कारण वह दबा रह गया। इतना रुपया उसे घर से तो मिल नहीं सकता है?"

"बिल्कुल नहीं मिल सकता है। लास्ट इयर भी तो हम लोगों ने हरनाथ को देखा था, तब तो ऐसी नवाबी नहीं थी। यह तो इसी साल से

शुरू हुई है। मुझे इसकी बड़ी चिन्ता है। इस रहस्य की यदि जानकारी न हो सकी तो सम्भव है आगे चलकर कोई बवण्डर खड़ा हो जाए।"

आकांश सोचने लगा, "लेकिन यार," वह बोला, "यह भी तो समझ में नहीं आ रहा है कि इतना रुपया उसके पास आने कहाँ से लगा है?"

"यही मैं भी नहीं समझ पा रहा हूँ। पर यह तो निश्चित है कि रुपया किसी गलत रास्ते से ही आ रहा है। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।"

"ख़ैर, इससे तो मैं भी सहमत हूँ।"

"फिर?"

"फिर क्या? कल साफ़-साफ़ उससे पूछ लो, वरना बाद में कोई उल्टी-सीधी बात हो जाने पर दोषी हम लोगों को ही बनना पड़ेगा। लोग कहेंगे कि कैसे दोस्त थे जो उचित-अनुचित का ज्ञान न करा सके।"

"कल कालेज से सीधे उसके संग-संग कोठी पर चले चलेंगे। ठीक है?"

"ठीक है। चलो चलें अब।"

दोनों उठ पड़े।

दूसरे दिन हरनाथ के कमरे में चौगड्डा बैठा। जलपानआदि से निवृत होने पर हरनाथ ने पूछा, "अब बताओ, आज की यह विशेष मीटिंग किस अभिप्रायवश है?" उसने उमेश की ओर देखा।

"मीटिंग का अभिप्राय है एक बात की तुमसे जानकारी करना। कल बड़ी रात तक सोचने के उपरान्त जब हम और आकाश किसी निष्कर्ष पर न पहुँच सके तो निश्चय किया गया कि तुमसे ही पूछकर वास्तविकता की जानकारी की जाए। इधर कुछ समय से पानी की तरह जो तुमने रुपया बहाना आरम्भ किया है वह रुपया कहाँ से आता है? यह तो निश्चित है कि घरवाले तुम्हें इतना रुपया देने से रहे, फिर···।"

हरनाथ ठट्ठा मारकर हँस उठा, "बस! इतनी-सी बात के लिए ऐसी परेशानी? यह तो इत्तफाक की बात है कि जब-जब मैंने उसके विषय में तुम लोगों से बताने को सोचा तब-तब प्रसंगों के बदलने के फलस्वरूप मैं भूल जाता रहा।" वह उठा और अपने सोने वाले कमरे से एक सोने का कड़ा ले आया जिस पर जड़े हुए हीरे के छोटे-छोटे टुकड़े प्रकाश पड़ते ही

चमचमा उठे। उसने उस कड़े को सबके सामने रख दिया, "यह है वह ज़रिया जिससे आजकल मेरे पास रुपयों की बौछार हो रही है।"

एक-एक करके तीनों ने उस कड़े को देखा, "टू कास्टली[1]।" सन्तबक्स बोला।

"अभी तुम लोगों के दिमाग में घुसा न होगा।" हरनाथ ने समझाया, "मैंने गिरो-गाँठ का धन्धा आरम्भ कर दिया है। यह कड़ा एक ज़मींदार साहब की बीवी ने बन्धक में रखा है और सम्भवतः अब सदा के लिए रखा रह जाएगा।" हरनाथ ने सब झूठ बताया था।

मित्रों की शंका मिट गई। विश्वास हो गया। स्वाभाविक था। प्रत्यक्षम् किम् प्रमाणम् में कैसी मीनमेख ? दूसरी बात चल पड़ी। हँसी दिल्लगी होने लगी।

३६

मोटरबाज़ी और बढ़ गई। हरनाथ का हाथ और खुल गया। उसने रुपयों को ठीकरों से भी बत्तर समझा। अंधाधुंध खर्च होने लगा। नगर के अन्य रईसों के लड़के इस चौगड्डे के आगे पानी भरने लगे। नगर में जो 'क्रीम आफ दी सोसायटी' कहलाती है उसमें इन चारों की चर्चा बहुतायत से होने लगी। सिविललाइन्स में इनका रंग सबसे ऊपर चढ़ गया। ऐसी कोई ऐंग्लोइण्डियन लड़की होगी जो इन लोगों से मेल-जोल बढ़ाना न चाहती हो परन्तु इस तरह की तफरीहबाज़ी इन चारों में किसी को पसन्द नहीं थी विशेषकर हरनाथ तो कट्टर विरोधी था। कुछ ही दिनों बाद हरनाथ ने साढ़े छै हज़ार की एक दूसरी ब्यूक गाड़ी खरीदी। गाड़ी पुरानी होते हुए भी इलाहाबाद में अपना सानी नहीं रखती थी। यह किसी राजासाहब की

१. बहुत कीमती है।

गाड़ी थी जिन्होंने नई गाड़ी खरीदने के अभिप्राय से इसे बेच डाला था। अब तो शहर में और नक्शा गालिब हो गया। अब चारों मित्र सवेरे नौ बजे से लेकर रात के नौ बजे तक संग-संग रहते। उमेश को अब बिल्कुल फुर्सत रहती थी।

एक दिन कालेज में विविध सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन था। उमेश को भी गाना था। नगर के सभी प्रमुख गायक और वादक एकत्रित थे। नृत्य के लिए अलग-अलग स्कूलों की लड़कियाँ भी आमन्त्रित थीं। लगभग संध्या के सात बजे से कार्यक्रम आरम्भ हुआ। प्रबन्ध अच्छा होने से शोरगुल कम था। उमेश, हरनाथआदि भी प्रबन्ध करने वालों में थे। उमेश को बता दिया गया था कि उसे किसके बाद गाना है। अतः नम्बर आने के पाँच मिनट पहले वह स्टेज पर जा पहुँचा। उसका नाम घोषित हुआ। वह स्टेज पर आया। उसने एक भजन सुनाया। समाप्त होने पर "वन्स मोर, वन्स मोर" की आवाज़ें आईं और एक सिनेमा का गीत सुनाने को कहा गया। उसे सुनाना पड़ा। पर्दा बन्द हुआ। दूसरे गायक आए और इनके बाद नृत्य की घोषणा हुई, "अब आपके सामने कुमारी रंजना कला कत्थक नृत्य प्रस्तुत करेंगी। रंजना कला ने केवल अपने नाम तक ही कला को सीमित न रखकर उसे साकार रूप भी दिया है और वह रूप आप अभी उनके नृत्य में देखेंगे जो सौन्दर्य और आनन्द से ओत-प्रोत होगा। आप महिला विद्यालय में सैकण्ड इयर की छात्रा हैं।"

वाद्यों की स्वर लहरियाँ वातावरण में फैलीं। तबलावादक ने टुकड़ा लगाते हुए सम पर थाप मारी। पर्दा खट से हट गया। स्टेज के मध्य में काले चमकदार वस्त्रों तथा नये प्रकार के अलंकारों से अलंकृत गौरवर्ण वाली अठारहवर्षीय बाला ने दर्शकों की आँखों में क्षणभर के लिए चकाचौंध उत्पन्न कर दिया। उसके हाथों में भाव उठे, बड़ी-बड़ी कजरारी आँखों में थिरकन आई, शरीर में हिलन हुई और फिर वह झम से एक पैर पर चक्कर लगाती हुई नाच उठी।

रंजना स्टेज पर बिजली की भाँति लपलप करती हुई इस प्रकार नृत्य को साकार करने लगी कि सारा हाल तालियों की तड़तड़ाहट से गूँज उठा। सभी के मुँह से 'बहुत सुन्दर,' 'बहुत अच्छे' 'वाह' के शब्द निकलने

लगे। रंजना कला के नृत्य ने सब पर सम्मोहन डाल दिया था।

तबले की गति बढ़ी। पैर भी बढ़े। घुंघरुओं में अधिक कम्पन आया। फिर क्या था? वादक बोल सुनाता और रंजना उसे मूर्तिमान कर देती और इस प्रकार लगभग आधे घंटे उपरान्त सम पर सम्पूर्ण वाद्यों के स्वरों को थामते हुए नृत्य समाप्त कर दिया गया। पर्दा बन्द हो गया। दर्शक तालियाँ पीटते रहे। 'वन्स मोर' चिल्लाते रहे। विशेषकर विद्यार्थियोंवाला समुदाय तो शान्त होने का नाम नहीं लेना चाहता था। आश्वासन दिया गया कि आधे घण्टे के बाद वह पुनः सबके आग्रह को पूरा करेंगी। अभी वह थक गई हैं। हाल में शान्ति का वातावरण आया।

स्टेज के समीप दीवार के सहारे हरनाथ, सन्तबक्स और आकाश खड़े थे। रंजना कला के नृत्य ने हरनाथ को बड़ा प्रभावित किया था। वह अब भी तारीफ़ के पुल बाँध रहा था, "वाह कमाल का नृत्य दिखलाया। बहुत सुन्दर। इतने नृत्य देखे पर यह सफाई अभी तक नहीं मिली। क्या लोच है इस लड़की में! क्यों आकाश?"

"बस यही तो इसमें विशेषता है और खासकर जिस अन्दाज़ से वह गर्दन हिला रही थी वह तो सुपर्ब है। बीयान्ड ऐप्रीसियेशन।"

"क्या कहना है प्यारे," हरनाथ जैसे उछल पड़ा, "तुमने तो मेरे मुँह की बात छीन ली। लेकिन यार, अभी तक इसे और किसी फन्कशन में नहीं देखा हम लोगों ने। क्या हर जगह नहीं जाती है?"

"कुछ ऐसा ही जान पड़ता है वरना कहीं-न कहीं तो देखा ही होता। उमेश को आने दो तो पूछते हैं। उससे पूरी इन्फारमेशन मिल जाएगी।"

पटवर्धन जी ने गाना आरम्भ कर दिया था। दो-चार मिनट सुनने के उपरान्त हरनाथ ने दोनों को बाहर चलने का संकेत किया। सन्तबक्स ने पूछा, "क्यों?"

"बाहर तो चलो पहले।" हरनाथ ने उसे धक्का दिया। तीनों बाहर आये।

आकाश ने सन्तबक्स की ओर देखते हुए मुस्कराकर कहा, "अभी तक तुम दो थे, लेकिन अब ऐसा मालूम पड़ रहा है कि तुम्हें अकेले ही रह जाना पड़ेगा। ब्रह्मचारीजी की नीयत डोल गई है। देख नहीं रहे हो दस-पाँच

मिनट रुकना मुश्किल हो रहा है। रंजना जी के विषय में पूरी जानकारी किए चैन नहीं है।" उसने हरनाथ से कहा, "उमेश को बुला लाऊँ या वहीं चलोगे ? इसी बहाने दुबारा दर्शन-लाभ का अवसर भी प्राप्त हो जाएगा।" वह हँसने लगा।

हरनाथ ने आकाश की पीठ पर घूसा मारा, "ससुरे ! इसके अतिरिक्त तुम लोगों के दिमाग में और भी कोई बात रहती है ? जैसी भी बात हो सब वही मतलब। सालो, मरोगे तो बदन में कीड़े पड़ेंगे कीड़े।"

आकाश हँसने लगा। तब तक उधर से उमेश आता हुआ दिखलाई पड़ गया, "लो, वह भी आ गया।" सन्तबक्स ने बताया।

हरनाथ के कहने के पूर्व ही आकाश, उमेश से बोल उठा, "अरे भाई, हरनाथसाहब को कलाजी से मिलवा दो। बड़े बेताब हो रहे हैं।"

"क्या ?"

"यही जो मैं कह रहा हूँ। इसमें आश्चर्य करने की क्या बात है। उन्होंने गर्दन हिलाकर ऐसी सम्मोहिनी डाली कि ब्रह्मचारीजी फ्लैट हो गये। एक क्षण...।"

हरनाथ ने उसका हाथ पकड़कर उमेठ दिया, "और कुछ कहो ?"

आकाश गिड़गिड़ाने लगा, "मैंने अपने शब्द वापस लिए। ऐसी धृष्टता फिर नहीं होगी।"

हरनाथ ने हाथ छोड दिया। फिर चारों संग-संग स्टेज के पीछे गये जहाँ अलग-अलग कलाकारों की बैठी हुई टोली एक-दूसरे को भला-बुरा कहने में व्यस्त थी। लड़कियों का जत्था एक तरफ था और वहीं रंजना भी दूसरे नृत्य के लिए अपने को सजा रही थी। उसका सिर उठा और आँखें हरनाथ की आँखों से जा टकराईं। हरनाथ मारे शर्म के पानी-पानी होगया। रंजना क्षण भर तक उसे देखती रही तदुपरान्त पुनः अपने काम में व्यस्त होगई। उमेश और आकाश को अवसर मिल गया। वे दोनों हरनाथ को घिसने लगे। हरनाथ को मौन होकर सब सुनना पड़ा। कारण, दोनों पकड़ के बाहर थे।

× × ×

कई दिनों की बात है। एक दिन संध्या को लगभग पाँच-छै बजे हरनाथ

की माँ पड़ोस से आई महिलाओं से बैठी बातें कर रही थीं। उन्हीं में से एक युवती ने पूछा, "चाचीजी," उसका सम्बोधन हरनाथ की माँ को था, "हरनाथ भाईसाहब अभी कॉलेज से नहीं आये क्या ?"

"आज तो उनके यहाँ छुट्टी थी। अगर कहीं गये न होंगे तो अपने कमरे में पढ़ते होंगे। क्यों ?"

"उनसे एक बात पूछनी थी।"

"तो देखो शायद कमरे में हो।"

युवती खट से उठी और घूमकर सीढ़ियाँ चढ़ती हुई हरनाथ के कमरे के सामने आ खड़ी हुई। हरनाथ कपड़े बदल चुका था और घड़ी बाँधता हुआ कमरे से निकलने ही वाला था कि पैरों की आहट पाकर ठिठका। उसकी दृष्टि सामने गई तो वहीं रुक गई। रंजना कला यहाँ पर! वह भौचक्का-सा रह गया। परन्तु शर्म के कारण तुरन्त पलकें नीची हो गईं। वह चाह कर भी रंजना की ओर देखने में असमर्थ था। रंजना ने हाथ जोड़ते हुए नमस्ते किया, "सम्भवतः आपने मुझे पहिचाना नहीं ?" उसने पूछा।

"नहीं, पहिचाना कैसे नहीं ? कायस्थ पाठशाला में तो केवल आपके ही नृत्य की चर्चा थी।" हरनाथ की बोली में घबड़ाहट थी, "कहिए, कैसे आना हुआ ?" जब तक बहुत घनिष्ठता न हो महिलाओं से बातचीत करने में पुरुषजाति को घबड़ाहट होती ही है, लेकिन ऐसी ही घबड़ाहट महिलाओं को भी होती होगी, इसे मैं साधिकार नहीं कह सकता।

"खद्दर की टोपी लगाए जो उस दिन आपके संग में थे, जिन्होंने गाया भी था···क्या···नाम···।"

"उमेश।"

"हाँ, हाँ उमेश। आपके साथी हैं न ?"

"जी हाँ।"

"अभी चार-छै दिन हुए किसी मीटिंग में उन्होंने एक कविता पढ़ी थी जिसकी ट्यूनिंग[1] बहुत ही अच्छी है। मेरे कॉलेज की लड़कियों ने सुना है, परन्तु कविता किसी को याद नहीं। पूछने पर पता लगा कि वह आपके

[1] ट्यूनिंग = ध्वनि

घनिष्ठ मित्रों में से हैं। तो क्या आप उनसे वह कविता लिखवाने का कष्ट करेंगे ? मैं कई दिनों से सोच रही हूँ परन्तु माँ को इधर अवकाश न होने के कारण आना न हो सका था।'' उसने हरनाथ की ओर देखा।

हरनाथ सिर झुकाये बोला, ''इसमें कष्ट करने की क्या बात है ? लिखवा लूँगा।''

''तो कल उम्मीद करूँ ? इसी बहाने आपका मेरे यहाँ आना भी हो जाएगा अन्यथा वैसे आप आने से रहे ?''

हरनाथ बड़े चक्कर में था। रंजना उसके घर कई बार आचुकी है यह अनोखी बात है। शिष्टता के रूप में हरनाथ ने उत्तर दिया, ''आने की क्या बात है ? वह भी तो अपना ही घर है। अवश्य आऊँगा। वैसे कविता तो आज ही लिखवा लूँगा।''

''माँ ने कितनी बार चाचीजी से आपके न आने की शिकायत भी की है लेकिन...।'

हरनाथ ने बीच में टोकते हुए बात बनाई, ''वह गलती मेरी है उनकी नहीं। उन्होंने मुझसे कहा था मगर इधर कालेज की राजनीति में फँसे होने के कारण मैं न आसका। दो-एक दिनों में अवश्य आऊँगा। मैं बड़ा लज्जित हूँ।''

रंजना ने हाथ जोड़े, ''कविता लिखवा लीजिएगा। नमस्ते।''

''नमस्ते।''

वह चली गई। हरनाथ कुर्सी पर बैठ गया। वह रंजना के विषय में सोच भी रहा था और अपनी बातों पर हँस भी रहा था। विशेष हँसी उसे अपने उस वाक्य 'वह भी तो अपना ही घर है'—पर बहुत आ रही थी। क्योंकि न तो उसे उसका घर मालूम था और न अपने उसके घर के सम्बन्ध का अनुमान था, उसने जो कुछ कहा था केवल अपनी अनभिज्ञता छिपाने के अभिप्राय से कहा था। खैर, जो भी हो आज जैसी प्रसन्नता उसे कभी नहीं अनुभव हुई थी। वह सिविललाइन्स नहीं गया, बैठा रहा। जब सब औरतें चली गई तो वह नीचे आया और अपनी अम्मा से रंजना और उसके परिवार के सम्बन्ध में पूछने लगा। उसकी अम्मा ने बताया कि कहने के लिए रंजना का परिवार बहुत दूर के सम्बन्धियों के सम्बन्धियों में होता है।

रंजना के पिता किसी सरकारी दफ्तर में काम करते हैं और चार-पाँच मास हुए जब लखनऊ से बदलकर आए हैं और सम्भवत: कोठी के पास में ही कहीं मकान भी ले रखा है।

हरनाथ कुछ सोचता हुआ बाहर निकला।

३७

गुरु गुड़ रहे और चेला चीनी हो गये वाली कहावत अब बिन्दा के लिए चरितार्थ हो गई थी। जिस लँगड़े ने बिन्दा को जेल से निकाला था वह ऐसी पार्टी का प्रधान था, जिसके सदस्य देश के कोने-कोने में छिपेतौर से अंग्रेज़ी हुकूमत के विरुद्ध हर तरह का काम कर रहे थे। बिन्दा ने उसी प्रधान से ट्रेनिंग ली थी, परन्तु थोड़े ही समय में उसकी प्रगति ने ऐसा हंगामा उठाया कि बिन्दा, बिन्दापांडे के नाम से सबकी ज़बान पर रटे जाने लगे। गाँव-गाँव और घर-घर में बिन्दापांडे की चर्चा होने लगी। रोज़ सुनने में आता—कहीं पुलिस इन्स्पेक्टरसाहब उड़ा दिये गए तो कहीं किसी गाँव का ज़ालिम ज़मींदार मार डाला गया तो किसी पुलिस के दलाल के हाथ-पैर तोड़ डाले गए तो कहीं कलक्टरसाहब की मोटर पर गोलियाँ चलाई गई। तात्पर्य यह कि जो कुछ भी हो रहा था उन सबके साथ बिन्दा-पांडे का ही नाम जुड़ा होता था। बिन्दापांडे के आतंक ने पुलिसवालों की सारी हैकड़ी मिट्टी में मिला रखी थी। हर तरह की कोशिश करने पर भी बिन्दापांडे उनके हाथ में अभी तक नहीं आ सका था और जैसी स्थिति थी उसके अनुसार यही अनुमान लग रहा था कि उसे पकड़ना बाघ के मुँह में हाथ डालना है। लखनऊ सरकार की चिन्ता बढ़ गई थी। गवर्नर महोदय के पास नित्य गवर्नर जनरल के डाँट-डपट वाले पत्र आने लगे थे। गवर्नर के आदेशानुसार प्रबन्ध में उलट-फेर किया गया। पुलिस की संख्या बढ़ाई

गई और शीघ्र-से-शीघ्र बिन्दापांडे को बन्दी बनाने का हुक्म हुआ।

आश्चर्य की बात यह है कि जब देश-व्यापी आन्दोलन को कुचला जा सकता था तो क्या एक साधारण व्यक्ति को बन्दी नहीं बनाया जा सकता, परन्तु क्या कहा जाए? वास्तविकता यही थी कि बिन्दापांडे वन्दी नहीं हो पा रहा था जबकि उसका कार्य-क्षेत्र केवल वही पूर्वी इलाका था। कुछ मास और बीत गये। बिन्दापांडे गिरफ्तार नहीं हुआ। सरकार ने दूसरी नीति अपनाई। पकड़ने वाले को एक हज़ार, पाँच हज़ार फिर दस हज़ार रुपयों का पुरस्कार घोषित किया गया। बिन्दापांडे अब भी बन्दी नहीं बनाया जा सका। उसके कार्यों में और तेज़ी आ गई थी। ज़मींदारों और देशद्रोही तत्वों की कँपकँपी बढ़ गई। मार से तो भूत भागता है। उन लोगों ने बदर्जे मज़बूरी अपनी हरकतों में परिवर्तन लाना आरम्भ किया। किसान मन-ही-मन बिन्दापांडे की रक्षा की ईश्वर से विनती करने लगे। देशभक्त फूले नहीं समा रहे थे। अखवारों में बिन्दापांडे की वीरता की खबरें खूब छपने लगीं। पांडे ने एक अजीब सनसनी पैदा कर दी थी।

एक दिन की घटना है। बिन्दापांडे चमारों के एक पुरवा में गया हुआ था। सुनने में आया था कि जिस मुंशीजी की वह ज़मींदारी थी वह उन बेचारों को बहुत परेशान किया करते थे। मुंशीजी भी पक्के मुंशी थे। उन्हें पता नहीं किस प्रकार बिन्दापांडे के आने की भनक लग गई, उन्होंने तत्काल पुलिस को सूचना दी। आनन-फानन में पुलिस की लारी आ धमकी। गाँव वाले भौंचक्के रह गये। क्षणभर के लिए बिन्दा भी चिन्तित हो उठा। कारण, उसे स्वप्न में भी ऐसी आशा नहीं थी। परन्तु उसने अपने को सँभाला। जिन चार-छै व्यक्तियों से बैठा घर में बातें कर रहा था, उन्हें बाहर जाने के लिए कहा और ढाढ़स बँधाया कि उन्हें घबड़ाने की आवश्यकता नहीं है। बिन्दापांडे को पकड़ने वाला अभी जन्मा नहीं है। उसने झटपट कपड़े उतारे। नंगा हो गया और पिछवाड़े जहाँ पुरवा के सारे सूअर बजबजाते खोमार में एक-दूसरे के ऊपर लेटे हुए थे—स्वयं उनके बीच में धीरे से घुसकर सूअर बन गया। केवल नाक और आँखों को छोड़कर सम्पूर्ण शरीर कीचड़मय हो गया। कपड़े कीचड़ में धँसा दिये थे।

पुलिस ने पुरवा को घेर लिया और फिर एक-एक घर की तलाशी होने लगी। एक-एक घर और घर की एक-एक कोठरी छान डाली गई परन्तु बिन्दा न मिला। पुनः ढूँढाई हुई और सतर्कतापूर्वक हुई। बिन्दापांडे फिर भी नहीं मिला। लोगों से पूछा-जाँचा गया, उन्हें धमकाया गया और मुंशीजी के संकेत पर दो-चार की कस-कसकर मरम्मत भी हुई। परन्तु सब बेकार रहा। वे भला क्यों बताते? विवश होकर पुलिसवालों को लौटना पड़ा। चलते समय इन्स्पेक्टरसाहब ने मुंशीजी को भी डाँट बतलाई और हिदायत दी कि भविष्य में सोच-समझकर सूचना दिया करें। मुंशीजी अपनी ग़लती पर गिड़गिड़ाते रहे। लारी लौट गई।

गाँववालों के लिए बिन्दापांडे का इस प्रकार अन्तर्ध्यान हो जाना आश्चर्य तो था ही परन्तु महान आश्चर्य तब हुआ था जब कई दिनों बाद कुछ विशेष व्यक्तियों से मालूम हुआ कि वह खोमार में नंगा पड़ा रहा था।

उस दिन रात ढल जाने के बाद बिन्दापांडे खोमार से निकला। जिसे जगाना चाहिए, उसे जगाया, स्नान किया। उसीके कपड़े पहिने और कुछ समय तक बातें करने के उपरान्त प्रस्थान किया। वह सीधे मुंशीजी के घर पहुँचा। मुंशीजी बाहर सहन में खर्राटे भर रहे थे। उसने मुंशीजी को जगाया। मुंशीजी उठे किन्तु सामने पिस्तौल तना देखकर पुनः खाट पर गिर पड़े। बिन्दा ने कान पकड़कर उठाया और चार-छै हाथ मारे, "यह तुम्हारे लिए चेतावनी है," वह बोला, "तुम मुझे पहचान रहे हो? मेरा नाम बिन्दापांडे है। अगर भविष्य में अपने को सुधारोगे नहीं तो जान हाथ से चली जाएगी।"

मुंशीजी की घिग्घी बँध गई थी। उन्होंने हाथ जोड़े, कान पकड़े और रुआँसे शब्दों में बोले, "अपनी गलती के लिए माफी चाहता हूँ पांडेजी। दुबारा ऐसी···।"

"यह सब तुम्हारे ऊपर है। मैंने इस बार छोड़ दिया है।" वह चला गया।

"नेकी और पूछ-पूछ। स्त्री-पुरुष के मिलन में जिस स्वतन्त्रता की आवश्यकता होती है; उसकी तो साध अभी पूरी ही नहीं हुई।"

रधिया ने आँखें बन्द कर लीं, "चलो हटो।"

३८

परीक्षा के दिन समीप आये। सिविललाइन्स की चहल-पहल में कमी आगई। सिनेमाओं में भीड़ कम होने लगी। लड़के पढ़ाई में जुट पड़े। बहुत तफ़रीह हो चुकी थी। अब उन्हें पढ़ना चाहिए अन्यथा साल खराब होने की आशंका थी। चारों मित्रों ने भी पढ़ाई आरम्भ करदी, परन्तु अभी उसमें वहुत गम्भीरता नहीं आई थी। तफ़रीह अब भी चल रही थी। विशेषकर उधर कुछ दिनों से स्केटिंग का एक नया शौक उभर आया था। घूमने से छुट्टी मिलती तो रात के सन्नाटे में सड़कों पर स्केटिंग का रियाज़ शुरू हो जाता। विशेषकर उमेश को रियाज़ की बड़ी धुन लग गई थी। हाँ, सन्तबक्स अवश्य किसी-न-किसी बहाने इन लोगों के बीच से निकल भागता और अपनी पढ़ाई किया करता था।

"खैर, इम्तहान शुरू हुआ और जैसे-तैसे यारों ने उससे फुर्सत ली। अब पूर्ण स्वतन्त्रता थी। उमेश को हरनाथ ने रोक लिया और उसके भइया के पास पत्र लिख दिया कि वह पन्द्रह-वीस दिनों बाद चला जाएगा। पुनः मोटरवाज़ी आरम्भ हुई। एक दिन हरनाथ ने कानपुर होते हुए लखनऊ चलने का कार्यक्रम बनाया। सवेरे होस्टल में सब एकत्र हुए। दो-एक लड़के और भी थे। पहले सिविललाइन्स में डटकर जलपान हुआ और फिर मोटर शहर छोड़ती हुई ग्रान्ट ट्रंक रोड पर उड़ चली। हरनाथ स्वयं मोटर चला रहा था। फतेहपुर आया। थोड़ी देर रुककर शर्बत-लस्सी का आनन्द लिया गया तदुपरान्त यात्रा आरम्भ हुई। दोपहरी का

सन्नाटा था। सड़क सुनसान थी। हरनाथ ने कार की रफ्तार बढ़ाई। मजा आने लगा। गाड़ी साठ, सत्तर और पचहत्तर मील की चाल से उड़ने लगी।

दूर बैलगाड़ियों की आती हुई कतार दिखलाई पड़ी। हरनाथ ने रफ्तार कम की पर बहुत विशेष नहीं। कारण, मोटर के पास होने में किसी प्रकार की रुकावट की आशंका नहीं प्रतीत हो रही थी। बैलगाड़ियाँ समीप आईं। अचानक गाड़ीवानों ने क्या सोचकर बैलों को दाहिनी पट्टी की ओर मोड़ दिया। हरनाथ ने ब्रेक लगाया और शीघ्रता से मोटर घुमाई। कार मुड़ी। तब तक पुनः गाड़ीवानों ने बाईं ओर मोड़ दिया। हरनाथ के हाथ-पैर ढीले पड़गए, परन्तु बचाव के लिए उसे भी कार घुमानी ही थी। उसने स्टेरिंग घुमाई नहीं कि मालूम पड़ा कि कार उलट-कर सड़क के नीचे चली जाएगी। सब चिल्ला पड़े। आँखें सबकी बन्द हो गईं। हरनाथ की सतर्कता और धैर्य ने कमाल कर दिया। जान बच गई। कार नीचे उतरी हुई खेतों में जाकर खड़ी होगई। हरनाथ पसीने से तरबतर होगया और बड़ी देर तक उसका शरीर काँपता रहा। लगभग पौन घण्टा रुकने के उपरान्त तब कहीं यह पार्टी कानपुर को चल सकी थी।

लगभग साढ़े पाँच बजे ये लोग कानपुर पहुँच गए। उमेश के यहाँ नाश्ता-पानी हुआ और फिर सिनेमा देखने चले गए। लौटकर आने पर भोजन हुआ और लखनऊ को चल पड़े। उमेश के भइया से बहाना किया गया कि लखनऊ में एक मित्र के विवाह में सम्मिलित होना आवश्यक है। मोटर जब कानपुर के गंगापुल को पार करती हुई आगे बढ़ी तो उसकी आगेवाली दोनों बत्तियाँ खराब होगईं। बड़ी झुंझलाहट आई। सब हरनाथ को कोसने लगे कि पता नहीं किस नसुड्डी का मुँह देखकर उसने आज का दिन निश्चित किया था। खैर, चलना तो था ही। हरनाथ जैसे-तैसे चलाता हुआ आगे बढ़ता रहा और डेढ़ बजे के लगभग उसने लखनऊ स्टेशन पर कार लाकर खड़ी करदी।

"यहाँ आने का तुक ? मेरे घर चलो न ?" आकाश ने कहा। सन्तबक्स से बोला, "आओ ज़रा पाँच मिनट के लिए प्लेटफार्म पर चलना है।"

रात सुहानी थी। चाँद आकाश में चमक रहा था। भिखारीबाबा के बरगद से चाँदनी छन-छनकर मानों नीचे बिछी काली चादर पर सफ़ेद रंग भर रही थी—छींटनुमा बना रही थी। हवा में गुदगुदी थी। बड़ा अच्छा लग रहा था। रात अधिक बीत चुकी थी। रधिया बरगद के सहारे लेटी अपने प्रिय की प्रतीक्षा कर रही थी। दूर चाँदनी में कोई आकृति झलकी। रधिया ने कछनी लगाई और बरगद पर चढ़ गई। बिन्दा आया, साइकिल खड़ी की और इधर-उधर देखता हुआ बैठ गया। सोचा, आरही होगी। चार-छै मिनट बीते, बिन्दा फिर उठकर टहलने लगा। उसने सोचा, सम्भव है वह भी डाँड़ पर बैठी हो, परन्तु पुनः विचार आया—अकेले वहाँ नहीं बैठ सकती। वह टहलता रहा। तब तक धम से कूदने की आवाज़ हुई। बिन्दा का हाथ पिस्तौल पर पहुँच गया। रधिया हँस पड़ी, "डर गए न ? क्या बताएँ, हम मर्द नहीं हुए वरना चुटकी बजाकर तुम्हें पकड़ लेते।" वह समीप आगई।

बिन्दा ने उसके कपोलों को थपथपाया, "इसे तो तुम अब भी कर सकती हो। मर्द बनने की क्या आवश्यकता है ? बैठो।"

दोनों बैठ गए। रधिया ने पूछा, "तुम्हारी खोमारवाली कहानी की गाँव में बड़ी चर्चा है। तुम तो अपने कामों से अमर होगए। गाँव मिट जाएगा पर तुम्हारा नाम नहीं मिट सकता। उस दिन की पूरी कहानी तो बताओ। मेरे जैसा भाग और किसका होगा ? दुनिया में जिसका डंका पिटा हुआ हो वह मेरा कहलाता है।"

बिन्दा उसकी ओर देखने लगा। वह चुप था।

"मेरी ओर क्या देखने लगे ?"

"कुछ नहीं।"

"कुछ तो बताओ न !"

बिन्दा ने धीरे से उसे अपनी जाँघ पर लिटा लिया और कहानी बतलाने लगा। रधिया बड़ी तन्मयता के साथ सुनती रही। कहानी समाप्त होने पर वह बोली, "तुमने पुलिसवालों को अच्छा बुद्धू बनाया।"

"समय की बात है, बुद्धि काम कर गई अन्यथा अब तक हम कहाँ होते क्या मालूम ? पर यह तो निश्चित है राधो कि अब मैं बहुत दिनों

तक अपने को पुलिसवालों से बचा नहीं सकता। इन लोगों ने जनता के साथ बड़ा कठोर व्यवहार करना आरम्भ कर दिया है। कोई कब तक और कहाँ तक सहन कर सकता है ? अपनी जान सबको प्यारी होती है।"

"फिर···?"

"फिर यही कि मेरे लिए तुम क्यों अपना जीवन नष्ट कर रही हो ? मैं जो कुछ भी कर रहा हूँ यह समझकर करता हूँ कि एक-न-एक दिन फाँसी-डामिल होनी ही है पर···।"

"और हम", रधिया बीच में बोल उठी, "यह समझकर साथ लगे हुए हैं कि किसी की फाँसी-डामिल के बाद अपनी भी फाँसी-डामिल हो जाएगी। अब वह पहले वाली रधिया नहीं रह गई है। जब तुम देश के लिए जान दे सकते हो तो क्या हम तुम्हारे लिए जान नहीं दे सकते ? आगे ऐसी बात हमसे मत कहना।" उसने करवट बदल ली।

"लेकिन इस हठ में कोई तुक नहीं है।"

"तुक तो तुम्हें छोड़कर तीसरे से ब्याह करने में है क्यों ? चलो तुम्हारी बात हम मान लेते हैं पर हमारी सौगन्ध खाकर कहना कि क्या ऐसा करने से तुम्हारे मन को चोट नहीं पहुँचेगी ?" रधिया ने नब्ज पकड़ ली।

बिन्दा को सोचना पड़ गया। रधिया के कथन में सत्यता थी। वह उत्तर देने में विवश था।

"अब बोलते क्यों नहीं ? चुप क्यों होगए ?"

बिन्दा को अपनी हार स्वीकार करनी पड़ी। वह झूठी सौगन्ध नहीं खा सकता था। रधिया के बिलगाव से उसे अवश्य पीड़ा पहुंचेगी। रधिया करवट बदलकर हँसन लगी।

"अब मैं," बिन्दा बोला, "एक-डेढ़ मास बाद इधर आसकूँगा।"

"क्यों ?"

"दिल्ली जाना है। गुरूजी का सन्देश आया है।"

"कब जारहे हो ?"

"सम्भवतः परसों चला जाऊँगा।"

"हम भी तुम्हारे साथ चलें ?"

उसने आकाश की ओर देखा, "अभी आये।" वह सन्तबक्स का हाथ पकड़ता हुआ चला गया।

पता नहीं हरनाथ ने सन्तवक्स को क्या पढ़ाया कि जब दस मिनट बाद उसने आकर बतलाया कि वह सन्तबक्स के साथ हरिद्वार जा रहा है तो सब आश्चर्य से एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे। उमेश ने तनिक ध्यान से दोनों की सूरतें देखीं और हँसकर बोला, "पगलाहट का संकेत तो नहीं मिल रहा है फिर यह हरिद्वार जाने वाला सोंग कैसा ?" उमेश ने समझा था कि हरनाथ हँसी कर रहा है।

"वास्तव में उमेश," सन्तवक्स ने बात की पुष्टि की, "हम दोनों हरिद्वार जा रहे हैं। तुम लोग अब जहाँ चाहो जा सकते हो। कार को चाहे अपने पास होस्टल में रखना या कोठी पर पहुँचा देना।"

"दिमाग सिड़ी तो नहीं हो गया है ?"

"सिड़ी ही समझ लो। लेकिन अब हम लोग इलाहाबाद नहीं जा रहे हैं।" हरनाथ की आवाज़ में गंभीरता थी।

उमेश ने उसका हाथ पकड़ लिया "चलो बैठो। बेवकूफी न उछाला करो।"

"नहीं," हरनाथ ने हाथ छुड़ा लिया, "हम दोनों सचमुच हरिद्वार जा रहे हैं और पाँच-सात दिनों में लौटेंगे।"

"लेकिन अचानक यह प्रोग्राम तुमने बना कैसे लिया ?" आकाश बोला, "जाना है तो इलाहाबाद से भी जा सकते हो। घरवालों को खबर होनी चाहिए न ?"

"तुम लोग खबर कर देना। अब मेरा और सन्तबक्स का प्रोग्राम निश्चित होचुका है। बदल नहीं सकता।"

उमेश ने सन्तबक्स की तरफ देखा, "तुम कब से झक्की बन गये सन्तबक्स? हरनाथ जा रहें हैं तो जाने दो। इन्हें तो संन्यासी बनना है। आओ चलो। ऐसी गलती भूलकर भी न करना वरना अब्बाजान खाल उधेड़ कर रख देंगे।" उमेश ने एक को फोड़ने का प्रयास किया।

हरनाथ ने सन्तवक्स का हाथ पकड़ा "चलो चलें टिकट खरीदें। ये साले बौड़म हैं।" वह सन्तबक्स को घसीटता हुआ चला गया।

"जाने दो। तुम्हारे रोकने से वह रुक नहीं सकता।" आकाश ने कहा, "उसकी झक में जो आजाएगा उसे करके ही छोड़ेगा, लेकिन ताज्जुब है कि उसने सन्तबक्स को कैसे झक्की बना दिया।"

हरनाथ और सन्तबक्स के आखों से ओझल होजाने पर ये सब मोटर में बैठे और हर तरह से सोचने विचारने के उपरान्त अन्त में यही निश्चय किया गया कि अब बिना लखनऊ रुके तत्काल इलाहबाद को प्रस्थान कर देना चाहिए।

पैट्रोल और मोबिलआयल भरवाया गया और पार्टी इलाहबाद को लौट पड़ी। मोटर आकाश चला रहा था। रास्ते में उमेश और आकाश बड़ी गम्भीरतापूर्वक सोचने लगे कि हरनाथ के अनायास हरिद्वार जाने का प्रयोजन क्या है और वह भी सन्तबक्स के साथ। यदि घूमने का इरादा था तो वह घर से पूछकर जा सकता था, परन्तु उसने ऐसा क्यों किया? क्या इसमें कोई रहस्य है, किन्तु इसमें रहस्य हो क्या सकता है? सब प्रकार से सोचने के उपरान्त भी कोई तथ्य पल्ले नहीं पड़ रहा था। दोनों की चिन्ता बढ़ रही थी। अकस्मात कारबरेटर में पेट्रोल फँसने लगा। वार्तालाप की शृखंला टूटी, "नई मुसीबत आने वाली है।" आकाश ने कहा, "पैट्रोल फँसने लगा है।"

"स्पीड बढ़ाओ वरना रूक गई तो आफत आजायेगी।"

आकाश ने रफ्तार बढ़ाई, परन्तु चाँद डूब जाने के कारण अँधेरे ने जो भंयकर रूप धारण कर लिया था, उसमें वह बिना बत्तियों के कहाँ तक साहस कर सकता था? गाड़ी कुछ दूर तक चली। पुनः पैट्रोल रुकने लगा और अधिक रुकने लगा। रफ्तार धीमी होने लगी और अन्त में धीमी होते होते यह स्थिति आगई कि गाड़ी धचके देने लगी। संयोगवश उसी धचके के कारण कारबरेटर में फट-फट की आवाज़ हुई और फँसाव साफ होगया। पैट्रोल सुचारु रूप से आने लगा। रफ्तार बढ़ गई। जान में जान आई। आकाश ने एक्सीलेटर दबाते हुए चाल अधिक बढ़ा दी। चार-छै मील पास होगये। निश्चिन्तता आई। पुनः हरनाथवाली समस्या पर वार्तालाप आरम्भ हुआ परन्तु तत्काल क्रम तोड़ना पड़ा। पहलीवाली बीमारी ने कार को दुबारा आ दबोचा और ऐसा आ दबोचा कि आकाश के सारे प्रयत्न

निष्फल सिद्ध हुए। गाड़ी एक स्थान पर आकर रुक गई। जँगल की रात साँय-साँय कर रही थी। भयानकता बढ़ गई थी "अब?" आकाश ने पूछा।

उमेश रिक्तचित्त नीचे उतरा और पीछे बैठे अन्य सहपाठियों को उतारता हुआ बोला, "धक्का लगाते हैं। तुम स्टॉट करो शायद जोर पड़ने से कचड़ा साफ होजाय। दूसरा उपाय क्या है?"

धक्के लगने लगे। मोटर स्टार्ट होती, सौ-पचास कदम आगे बढ़ती फिर रुक जाती। पुनः धक्के लगते, पुनः स्टार्ट होती और पुनः कुछ चलकर रुक जाती। मील-डेढ़ मील तक यह प्रयास चलता रहा और अन्त में सब थक कर बैठ गये। कहाँ तक धक्का लगाया जाता? वे हताश होगये परन्तु मरता क्या नहीं करता वाली स्थिति में तो अन्तिम साँस तक प्रयास चलता रहता है। थोड़ी देर सुसताने के उपरान्त पुनः हिम्मत बाँधी गई और धक्का लगने लगा। वे पसीने से लथपथ होगये किन्तु मोटर चल न सकी। शक्ति का अन्त होगया, साहस छूट गया और सब हाथ पर हाथ धरकर बैठ गये। भाग्य पर छोड़ दिया गया। उन्हें बड़ी तकलीफ थी। सब मौन थे।

लगभग पौने घन्टे के उपरान्त उमेश ने अन्दर की बत्ती जलाकर घड़ी में समय देखा। चार बज रहा था। वह बोला, "चलो यार, एक बार और तकदीर आजमाई जाय। शायद भगवान हम लोगों की सुनलें अन्यथा बैठना तो है ही।"

"बज क्या रहा है?" एक लड़के ने पूछा।

"चार। आओ फिर उठो। देर करने से क्या फायदा?"

सब हरनाथ को गाली देते हुए बाहर निकले।

"इस बार, आकाश, मैं स्टेरिंग पर बैठूँगा तुम धक्का लगाओ।" उमेश अन्दर आकर बैठ गया।

धक्का लगा। उमेश ने स्टार्ट किया। गाड़ी चल पड़ी। वह चिल्लाया "बैठो बैठो।" सब उछल कर बैठ गये। कार बढ़ गई। प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। उमेश की वाहवाही होने लगी और आकाश को मज़ाक में घिसा जाने लगा।

दस बजे उमेश की गाड़ी इलाहबाद शहर में दाखिल हुई। अन्य लड़कों को उतारते हुए दोनों सन्तबक्स के घर गये। उसके पिता को सूचना दी।

उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ और कारण जानना चाहा। दोनों ने अनभिज्ञता प्रकट की। उन्हें किसी प्रकार की जानकारी नहीं थी। सन्तबक्स के पिता क्रोध में उठकर टहलने लगे, फिर अन्दर चले गये। दोनों राम-राम करते भागे और हरनाथ की कोठी पर आये। बड़े दादा से समाचार बताया। उन्होंने भी कारण जानना चाहा। यहाँ भी अनभिज्ञता प्रकट की गई। बड़े दादा ने गर्दन हिलाई और तनिक ऊँचे स्वर में बोले, "आजकल के लड़कों में यही तो खराबी है। जहाँ पैसा पैदा करने लगे फिर तो कैसे माँ-बाप और किस की चिन्ता। यह बदतमीजी अच्छी नहीं। खैर, कब तक आने को कहा ?" अपने घर में हरनाथ ने बता रखा था कि वह गिरो-गाँठ के साथ-साथ फौज में सामान-सप्लाई का भी धंधा करता है।

"सम्भवत: सात-आठ दिनों बाद।" उमेश बोला

"हूँ।"

दोनों खड़े हो गये। "मोटर गैरिज में रखवा लीजियेगा।" दोनों चले गये।

× × ×

सात दिन के स्थान पर दस दिन बीत गये। हरनाथ और सन्तबक्स नहीं आये। घरवालों की चिन्ता बढ़ी। एक-एक करके तीन-चार दिन और गुज़र गये। किसी प्रकार की सूचना तक न मिली। उमेश और आकाश की आफत आगई। सन्तबक्स और हरनाथ के घर रोज़ बुलाहट होने लगी। उनके मस्तिष्क में सन्देह उत्पन्न होगया था। उनका अनुमान था कि इन दोनों को जानकारी है, परन्तु किसी कारणवश बतलाना नहीं चाहते हैं। विशेषकर उमेश पर हरनाथ के बड़े दादा को पूरा सन्देह था। उनके मतानुसार हरनाथ बिना उमेश की राय के कोई काम नहीं करता। उमेश सब सुनता हुआ मौन था। यद्यपि वह अपने स्वभाव के कारण इस तरह की बातों के सुनने का अभ्यासी नहीं था, परन्तु विवशता यही थी कि सुनने के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं था। चारों में मित्रता ऐसी थी कि इस प्रकार का सन्देह करना अस्वाभाविक या असंगत नहीं कहा जा सकता था।

अकस्मात एक दिन आकाश के पास ग्वालियर से उसके एक सम्बंधी का

पत्र आया जिसमें यह भी लिखा था कि सन्तबक्स और हरनाथ यहीं हैं, परन्तु बिना तुम लोगों के आए वे जाने को तैयार नहीं। दौड़ता हुआ आकाश उमेश के पास आया और फिर दोनों बड़े दादा के पास गये। उन्हें पत्र दिखाया और कहा कि किसी नौकर को साथ कर दें क्योंकि वे दोनों शाम-वाली गाड़ी से ग्वालियर जा रहे हैं। बड़े दादा ने एक नौकर साथ कर दिया। शामवाली गाड़ी से तीनों ग्वालियर के लिए रवाना होगये और दूसरे दिन रात में सन्तबक्स और हरनाथ को लिए इलाहाबाद आगये। यद्यपि रास्तेभर हरनाथ और सन्तबक्स को उमेश फटकारता रहा और यह जानने का प्रयत्न करता रहा कि इस प्रकार घर न लौटने का विचार किस प्रयोजनवश किया गया था, परन्तु दोनों अन्त तक यही कहते रहे, "किसी प्रयोजनवश नहीं।"

दो-चार दिनों बाद फिर उसी प्रकार सैर-सपाटे शुरू होगये। सिविल-लाइन्स में जमघट लगने लगी। दूसरे-तीसरे जमुना में नौका-विहार का आनन्द लिया जाने लगा। खुशी का आलम दुबारा लौट आया। हरनाथ रुपयों को पानी की भाँति बहाने लगा। कुछ दिन और रुकने के उपरान्त उमेश ने कानपुर जाने के लिए कहा, परन्तु हरनाथ ने उसे जाने नहीं दिया। उसके भइया के पास एक और पत्र लिख दिया गया। वह रुक गया।

हरनाथ के परिवार से घनिष्ठ सम्बंध रखने वाले किसी व्यक्ति के यहाँ लड़की की शादी थी जिसमें उमेश और आकाश भी निमंत्रित थे। विवाह के दिन हरनाथ के संग-संग उमेश और आकाश ने लड़की के लिए उपहार खरीदे और तय हुआ कि साढ़े छै बजे तक वे कोठी पर आकर हरनाथ के साथ शादी में चलेंगे। हरनाथ ने हामी भरी और लौट गया। सात बजे तक उमेश और आकाश हरनाथ की कोठी पर पहुँचे। मालूम हुआ कि हरनाथ अन्दर हैं। दोनों बैठ गये।

कोठी के अन्दर एक दूसरी स्थिति उठी हुई थी। हरनाथ की अम्मा और उसकी भाभी कपड़े पहिने बड़ी बेसब्री से हरनाथ की प्रतीक्षा कर रही थीं। उन्हें विवाह में जाने के लिए देर हो रही थी। परन्तु विवशता यह थी कि आभूषणों की तिजोरी की ताली हरनाथ के पास थी और हरनाथ का कहीं पता नहीं था। वह पाँच मिनट में आने को कहकर बाहर जो गया कि

पौन घंटा होने को आया परन्तु लौटकर नहीं आया। हरनाथ की अम्मा की उलझन बढ़ी। उन्होंने लौंडी को बाहर भेजकर पता करने को कहा। लौंडी ने दरवाज़े पर तैनात सिपाही से लेकर अन्य सभी नौकरों से पूछा। सबने यही बताया कि अभी अन्दर से आये कहाँ हैं। उमेशबाबू और आकाशबाबू भी तो कब से उनकी प्रतीक्षा में बैठे हुए हैं। लौंडी लौट गई।

उमेश और आकाश ने भेदभरी दृष्टि से एक-दूसरे को देखा और फुस-फुसाते हुए बातें करने लगे। उन्हें सन्देह हुआ कि हरनाथ फिर तो कहीं नहीं चला गया। आधे घंटे तक और प्रतीक्षा करने के उपरान्त भी जब हरनाथ नहीं आया तो दोनों उठकर बाहर आये और नानाप्रकार की बातों पर सोचते हुए घरको चल पड़े। उन लोगों ने विवाह में जाना ठीक न समझा।

एक वर्ष पूर्व हरनाथ के पिता की मृत्यु के उपरान्त हरनाथ की अम्मा ने आभूषणों की तिजोरी की ताली हरनाथ को रखने के लिए दे दी थी। हरनाथ की अम्मा हरनाथ को बहुत प्यार करती थीं। इस तिजोरी में लगभग डेढ़ लाख के पुराने और नये आभूषण थे, जो विशेष अवसरों पर ही धारण किये जाते थे। अतः इसे खोलने की आवश्यकता भी इन्हीं विशेष अवसरों पर हुआ करती थी। आज संध्या समय हरनाथ की अम्मा ने जब अमुक-अमुक गहने निकालने को कहा था तो एकबारगी हरनाथ का चेहरा फक पड़ गया था, किन्तु तत्काल उसने अपने को संभाला और ताली लाने को कहकर अपने कमरे में आया। वह कुर्सी पर बैठ गया। उसे रुलाई आने लगी थी। बीते हुए जीवन के सुखद क्षण चिन्तित हो आये, परन्तु अब उन पर सोचने से क्या लाभ ? अब तो उसके लिए केवल एक ही मार्ग था—जीवन का अन्त कर देना। वह उठा। तिजोरी की ताली मेज़ पर रखी और कोठी में पिछली ओर बनी खिड़की से चुपचाप बाहर निकल गया। लम्बे-लम्बे पैर रखता वह सड़क पर आया, ताँगा किया और जमुनापुल चलने को कहा।

जिस तेज़ी से ताँगा जा रहा था उसी तेज़ी से उसके मस्तिष्क में विचारों का भी परिवर्तन हो रहा था। मानो शीघ्र किसी निष्कर्ष पर पहुँचना था। निष्कर्ष नहीं निकल पाया और पुल आगया। ताँगा खड़ा हो

गया, परन्तु सवारी को उतरता हुआ न देखकर ताँगेवाले ने पूछा, "उस पार चलूँ सरकार ?"

हरनाथ चौंका, "नहीं।" वह ताँगे से उतर पड़ा और ताँगेवाले को एक रुपया का नोट थमाता हुआ पुल की ओर चल पड़ा।

पुल के मध्य में पहुँचकर हरनाथ रेलिंग के सहारे खड़ा होगया। आने-जाने वाले आ-जा रहे थे। वह एकान्त की प्रतीक्षा करने लगा। सम्भवतः उसके विचारों में जो दृढ़ता थी वह कमज़ोर पड़ने लगी थी। एकान्त हो गया। दूर तक दोनों तरफ कोई आता हुआ नहीं दिखलाई पड़ रहा था। हरनाथ ने आँखें बन्द कीं और रेलिंग से झुकता हुआ जमुना में गिर पड़ने की कोशिश की, परन्तु गिरा नहीं। मन में भय आगया। जान प्यारी लगने लगी। उसने सोचा—मरने से कहीं भाग चलना उत्तम होगा। परन्तु दूसरे विचार ने खण्डन किया—कब तक भागते रहना सम्भव हो सकेगा ? कब तक खानाबदोशों की भाँति जीवन व्यतीत किया जा सकेगा ? मरना ही बेहतर है। उसने पुनः साहस किया। परन्तु इस बार भी वह न गिर सका। वह पीछे हटता हुआ शहर की ओर मुड़ चला। आगे आकर रिक्शा किया और स्टेशन को चल पड़ा।

× × ×

हरनाथ के कमरे में ताली मिली। तिजोरी खोली गई। हरनाथ की अम्मा मुँह में उँगली दबाकर रह गई। उनकी आँखों के सामने अँधेरा छा गया। एक प्रकार से कहने के लिए तिजोरी में कुछ भी नहीं था। लगभग तीस हज़ारवाला हीरे का हार भी नहीं था। उन्होंने बहू से हरनाथ के बड़े दादा को बुलवाने के लिए कहा। बड़े दादा आये और अन्दर जाकर देखा तो पैर के नीचे से ज़मीन खिसक गई। लगभग एक लाख पर पानी फिरा हुआ था। "हरनाथ कहाँ है ?" उन्होंने पूछा।

"पता नहीं। शाम से ग़ायब है। यह ताली उनके कमरे में मेज़ पर मिली है।" उनकी पत्नी ने बतलाया।

उन्हें क्रोध आगया था, "घरके ही गहने गिरो रखे जा रहे थे। नालायक ने घर फूंक दिया।" उनके दाँत किटकिटाये, "हरामज़ा···।" वह बड़बड़ाते हुए बाहर निकले। ड्राइवर को मोटर निकालने के लिए कहा

और सीधे होस्टल जा पहुँचे।

होस्टल में उमेश नहीं मिला। वह आकाश के घर गये। आकाश भी नहीं मिला। वह सिविललाइन्स आये और दोनों को ढूंढने लगे। कॉफी-हाउस में दोनों से भेंट होगई। कॉफी-हाउस से बाहर निकलते ही बड़े दादा ने पूछा, "हरनाथ कहाँ है?"

"पता नहीं। हम अभी कोठी से आरहे हैं। वहाँ मालूम हुआ था कि वह बड़ी देर से कहीं बाहर गया हुआ है।" उमेश ने बड़े दादा को ध्यान से देखा।

"ताज्जुब है। खैर, आइये स्टेशन पर देखें। कहीं उन्होंने फिर न भागने की तैयारी कर ली हो।" उन्होंने कुछ सोचकर अभी और बताना ठीक न समझा।

दोनों मोटर में बैठ गये। पहले बड़े स्टेशन पर देखा गया। वहाँ हरनाथ नहीं मिला। तब प्रयाग स्टेशन पहुँचे। वहाँ भी हरनाथ नहीं मिला जबकि एक कोने में छिपी हुई हरनाथ की आँखें इन सबको देख रही थीं। निराशमन फिर ये रामबाग आये। लेकिन यहाँ हरनाथ कहाँ था? "अब?" उमेश ने पूछा।

"अब क्या? जब आना होगा तो आजाएगा।" बड़े दादा गम्भीर थे। वह कार में आकर बैठ गये। "चलो, रामनाथ।" उनका सम्बोधन ड्राइवर को था।

आकाश ने रिक्शा किया और दोनों इस नई घटना की जटिलता पर सोचने लगे। अभी तिजोरीवाली बात मालूम होने को थी।

दूसरे दिन बड़े दादा पुनः होस्टल आये। उमेश को साथ लिया और आकाश के घर जा पहुँचे। उनकी भावभंगिमा बतला रही थी कि वह क्रोध में हैं। उन्होंने आकाश के पिता से सारी बातें बतलाईं और अन्त में यह भी कहा कि यह सब-कुछ उमेश और आकाश की जानकारी में होता रहा है। इन्हीं लोगों ने हरनाथ को बिगाड़ा है। विशेषकर इसमें उमेश-साहब का हाथ अधिक है।'

आकाश के पिता भी बड़े दादा के पक्ष में बोले। बोलते क्यों नहीं। बदनामी का सारा श्रेय उमेश के मत्थे जो मढ़ा जारहा था। वह चतुर थे।

उन्होंने सोचा सम्भव है यह घटना भयंकर रूप धारण कर ले, उस समय वह अपने लड़के को बचा तो सकेंगे।

बड़े दादा के आक्षेप से उमेश को तो वेदना पहुँची ही थी, परन्तु आकाश के पिता ने भी बिना सोचे-समझे बड़े दादा का समर्थन किया तो उसका खून खौल उठा। फिर भी उसने अपने को सँभाला। वह सिर लटकाये बैठा रहा।

बड़े दादा पुनः बोले, "खैर, उमेशबाबू, जो हुआ सो हुआ। पर यह तो बताइये कि ज़ेवरात गिरवी किसके यहाँ रखे गए हैं ? उन्हें छुड़ाया तो जाए।"

"हमें नहीं मालूम है बड़े दादा। हरनाथ तो कहा करते थे कि वह स्वयं गिरवी-गाँठ का काम करते हैं और एक दिन इसकी पुष्टि के लिए उन्होंने एक सोने का कड़ा भी दिखलाया था। फिर आप ही सोचें...।"

"देखिये उमेशबाबू, मैं बच्चा नहीं हूँ। मेरे बाल धूप में सफेद नहीं हुए हैं। आपको सब कुछ मालूम है और हरचीज़ आपकी जानकारी में होती रही है। असलियत को छिपाने से बात बिगड़ेगी, बनेगी नहीं। इसे आप समझ रहे हैं ?"

उमेश अब अपने को न रोक सका फिर भी वह संयत शब्दों में बोला, "बड़े दादा, बात बनने-बिगड़ने की मैं चिन्ता तो करता नहीं पर हाँ, जो आपको क्षति हुई है उसके लिए बड़ा दुःख है। और मैं ईश्वर की शपथ खाकर कह सकता हूँ कि इस विषय में मुझे रत्तीभर भी जानकारी नहीं है।"

बड़े दादा ने आकाश के पिता को देखा "सुन लिया आपने ?"

आकाश के पिता बोले, "भई उमेश, यह तो बिल्कुल ग़ैरमुमकिन है कि दिन-रात संग-संग रहने पर भी तुम्हें कुछ इल्म न हो। मैं कहता हूँ उसका नाम बताने में तुम्हारा क्या नुकसान है ?"

"तो आप आकाश से क्यों नहीं पूछ लेते ? क्या मेरे मुँह से ही सुनना आवश्यक है ? बता दो आकाश। तुम्हें नाम तो मालूम है।" उमेश का क्रोध उमड़ उठा था ?

आकाश के पिता बगलें झाँकने लगे। तब तक बड़े दादा बोल उठे,

"रहने दीजिये चन्द्रासाहब ! अब और कोई रास्ता अपनाना पड़ेगा। जहाँ डेढ़ लाख गया वहाँ दस-पाँच हज़ार और सही।" वह खड़े हो गये।

उमेश ने भी वैसा ही उत्तर दिया, "यह आवश्यक है। इसे आप ज़रूर कीजिएगा।" वह उठा और भुनभुनाता हुआ बँगले के बाहर चला गया।

कुछ समय तक अकेलेमें आकाश के पिता से बातें करने के उपरान्त बड़े दादा चले गये।

दो-चार दिन और बीते। सुनने में आने लगा कि बड़े दादा ने पुलिस-वालों से कहकर उमेश को पकड़वाने का प्रबन्ध करा दिया है। एक के मुँह से यह भी सुनने में आया कि वह किसी प्रकार उमेश को अपनी कोठी में बन्द कर अच्छी तरह पिटाई कराना चाहते हैं। किसी ने यह भी बताया कि वह उसके विरुद्ध मुकदमा दायर करने वाले हैं। तात्पर्य यह कि नानाप्रकार की अफवाहें सुनने में आने लगीं, परन्तु उमेश भयरहित उसी प्रकार स्वच्छन्दतापूर्वक घूम रहा था। इसी बीच रिज़ल्ट निकला। उमेश और हरनाथ फेल थे जिसकी उम्मीद उन्हें पहले से थी, पर सन्तबक्स के साथ आकाश भी पास होगया—यह महान आश्चर्य था। सन्तबक्स को छोड़कर इन तीनों का फेल होना निश्चित था।

परीक्षा-फल निकलने के दूसरे दिन उमेश और आकाश के बीच बड़ी देर तक बातें होती रहीं। आकाश ने उमेश को सलाह दी कि वह दो-एक दिन के भीतर कानपुर चला जाए। इलाहाबाद में अब रहने की कोई तुक नहीं है। उमेश इस सलाह से सहमत था। उसने दूसरे दिन जाने का निश्चय कर लिया। स्टेशन पर दोनों मित्र आँखों में आँसू भरेहुए एक-दूसरे से अलग हुए।

जिस दिन हरनाथ के भागने की सूचना मिली थी उसके दूसरे ही दिन सन्तबक्स किसी आवश्यक काम का बहाना बताकर अपनी स्टेट चला गया था।

× × ×

बल्देव, हरनाथ के यहाँ नौकर था और हरनाथ उसी के द्वारा गहने गिरवी रखवाता था। बल्देव को ऐसा सुनहला अवसर कहाँ मिलने को

था। उसने भी बहतीगंगा में हाथ धोया। जो गहना वह एक हज़ार में गिरवी रखता उसमें हरनाथ को केवल सात सौ ही रुपये मिलते। इस प्रकार उसने हज़ारों की रकम चीर दी और जिस दिन हरनाथ गायब हुआ था, उसके दूसरे दिन वह भी भाग निकला था। उसे अब नौकरी की क्या आवश्यकता थी ?

बल्देव, हरनाथ का खास नौकर बन गया था, यह सबको विदित था और हरनाथ के सारे कार्य उसीके द्वारा होते होंगे यह सन्देह उसके अनायास कोठी से लापता होने के कारण उत्पन्न हो उठा। बड़े दादा ने पुलिस का सहयोग लिया और एक दिन उन्होंने उसके गाँव पर धावा बोल दिया। दुर्भाग्यवश वह घर पर ही था, पकड़ लिया गया। फिर उसके घर की तलाशी ली गई। लगभग दस-बारह हज़ार के आभूषण बरामद हुए। नकद रुपया नहीं मिला। दारोगाजी ने उसे कोठी पर लाकर खूब मरम्मत की। उसने कबूल किया और जिन-जिन लोगों के यहाँ गहने गिरवी रखे हुए थे, उनका नाम और पता बतलाया।

३९

उमेश के भइया ने समझ लिया कि इलाहाबाद में रहने पर उमेश की पढ़ाई नहीं हो सकती। इसलिए उन्होंने उसे इलाहाबाद जाने की अनुमति नहीं दी। कॉलेज खुलने पर उसका नाम डी० ए० वी० कॉलेज में लिखा गया।

महीने-दो महीने तो उमेश की तबीयत बिल्कुल नहीं लगी। कारण, इलाहाबाद और यहाँ के वातावरण में ज़मीन-आसमान का अन्तर था। वहाँ विद्यार्थियों की चहल-पहल, उनकी एकता, सिविललाइन्स जैसे रमणीक स्थान में शाम की जमघट, विश्वविद्यालय की अनुपम छटा, नित्य

नये-नये हंगामे और इन सबके ऊपर उसका नगर में फैला हुआ यश, उसका व्यक्तित्व, यह सब कानपुर में कहाँ थे ? कानपुर शहर भी उसे बिल्कुल नापसन्द था। नापसन्द क्यों होता ? यह तो मिलों का नगर है जहाँ रात-दिन कोयला मिश्रित धुआँ सिर पर छाया रहता है। खाओ तो कोयला और थूको तो कोयला। हर तरफ वीभत्स गन्दगी का साम्राज्य, परन्तु विवशता में सब कुछ बर्दाश्त कर लिया जाता है। धीरे-धीरे इलाहाबाद की स्मृतियाँ धूमिल पड़ती गईं और उमेश यहाँ के वातावरण में घुलने-मिलने लगा।

यद्यपि राजनीति का चसका अभी छूटा नहीं था किन्तु उसमें बहुत कमी आगई थी। वह किसी भी कार्य में सक्रिय रूप से भाग नहीं लेता था। वह इस वर्ष पढ़ाई के प्रति अधिक जागरूक था। प्रारम्भ से ही उसने परिश्रम करना शुरू कर दिया था। उसके भइया भी यही चाहते थे। धीरे-धीरे समय बीतने लगा। कई मास उपरान्त एक दिन संध्या को जब वह घूमकर लौटा तो कमरे में सन्तबक्स को देखकर उछल पड़ा। प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। "कब आये ?" उसने पूछा।

"लगभग आधा घंटा हुआ। लखनऊ आया था, सोचा तुमसे भी मिलता चलूँ।"

"नहाओगे ?"

"नहीं।"

"तो खाना लगवाऊँ ?"

"हाँ। मैं अभी बारह बजे वाली गाड़ी से इलाहाबाद लौट जाऊँगा।"

"वाह। इतनी जल्दी।"

"ज़रूरी काम है। बताऊँगा। पहले खाना खिलवाओ।"

भोजनोपरान्त सन्तबक्स ने बताया, "मैं फरदर स्टडी के लिए लन्दन जारहा हूँ। उसी के सम्बन्ध में लखनऊ आया था और इसी जल्दी में मुझे लौटना भी पड़ रहा है वरना एक-दो दिन रुक जाता।"

"लन्दन कब तक चले जाओगे ?"

"जहाँ तक आशा है अगले मास के अन्त तक। चलो स्टेशन चलें। वहीं बातचीत भी होगी। बहुतसी नई-नई घटनाएँ बतानी हैं।"

सड़क पर आकर उमेश ने रिक्शा किया और उसे स्टेशन चलने को कहा। रिक्शा चलने पर उसने कहा, "पहले हरनाथ के समाचार बतलाओ। लौटकर आये या नहीं ?"

"आगये।"

"अपने आप ?"

"अपने आप ही समझो। वैसे कहते थे कि उसके विलगाव में अम्मा की चिन्ताजनक दशा को समाचार-पत्रों में पढ़कर वह अपने को न रोक सके और उन्हें घर लौट आने के लिए विवश होजाना पड़ा।"

"और गहनों के विषय में…।"

"तुम्हें नहीं मालूम ? उसमें सारा हाथ बल्देव का था। उसीके द्वारा हरनाथ सब कुछ कराते थे।" सन्तबक्स ने विस्तारपूर्वक सारी बातें बताईं।

स्टेशन आगया। टिकट खरीदा गया और प्लेटफार्म के एक कोने वाले बेंच पर दोनों आकर बैठे। सन्तबक्स ने वार्ता आरम्भ की, "हरनाथ को बड़े दादा ने देहरादून पढ़ने के लिए भेज दिया है।"

"ठीक किया है। उन्हें घर से अलग रखने में ही कल्याण है। और आकाशसाहब के क्या रंग-ढंग हैं ?"

सन्तबक्श हँस पड़ा, "अरे, उनके बारे में तो तुम्हें बताया ही नहीं। उन्होंने भी बड़ा ऊँचा काम दिखलाया।"

"क्या ?"

"भाई एक ऐंग्लोइण्डियन लड़की को लेकर भाग गये और अब तक उनके विषय में न तो घरवालों को कोई सूचना है और न किसी अन्य व्यक्ति को।"

"शाबाश। पट्ठे ने ऊँचा हाथ मारा लेकिन वह लड़की कौन…।"

"वही जो बारनेट होटल में थी—लम्बी-सी पतली-दुबली।"

"समझा। ससुरा गिरा भी तो कहाँ जाकर ?"

"उसके पीछे तो बड़े-बड़े हंगामे होगये यार। खूब गुल खिले।" फिर सन्तबक्स एक-एक घटना को बताता रहा।

इस कहानी के समाप्त होने पर इलाहाबाद की अन्य चर्चाएँ चलने लगीं। तदुपरान्त सन्तबक्स ने उमेश के रंग-ढंग पूछे और इस प्रकार रात के

पौने बारह बज गये। प्लेटफार्म पर भीड़ बढ़ने लगी। ठीक समय पर गाड़ी आई। सन्तवक्स बैठ गया। "अब ?" उमेश ने पूछा।

"जाते समय तुम्हें सूचित करूँगा। मिलना ज़रूर।"

"अवश्य। लन्दन से पत्र भेजते रहना।"

सन्तवक्स ने गर्दन हिलाई। थोड़ी देर में गाड़ी ने सीटी दी। दोनों ने हाथ मिलाए। गाड़ी छक-छक करती हुई चल पड़ी।

कई दिनों तक उमेश की आँखों के सामने इलाहबाद और उसके मित्र नाचते रहे। फिर वह पढ़ाई में जुट पड़ा और खूब मेहनत की। समय बीतता गया और परीक्षा समीप आगई। उमेश ने पढ़ने में दिन-रात एक कर दिया। परीक्षा प्रारम्भ हुई और राम-राम करके समाप्त भी होगई। उमेश के सभी पर्चे अच्छे हुए थे। छुट्टियों में उसके भइया ने उसे गाँव भेज दिया।

जब परीक्षाफल निकला तो उमेश का नाम द्वितीय श्रेणी में था। कालेज खुलने पर वह कानपुर चला आया।

× × ×

इलाहाबाद विश्वविद्यालय खुलने पर बहुत-सी नई मूरतें देखने को मिलीं, जिनमें कुछ बेमिसाल भी थीं। हर लड़के की ज़बान पर उन्हीं का नाम था और उन्हीं की बात-चीत थी। रंजना कला भी उन्हीं में एक थी। उसका रूप-रंग, चाल-ढाल, नाज़-नखरा, हाव-भाव सभी चीज़ें कलेजे को चीरकर दो टुकड़े करने वाली थीं। जिधर से निकल जाती लड़के आहें भरकर रह जाते। कोई अपने को रोकने में असमर्थ पाकर गा उठता, "धीरे से आना बगियन में रे भँवरा, धीरे से आना बगियन में।" आगे कोई बलियाटिक मनचला भी अपनी दरख्वास्त लगा देता, "गोरी अब आइलवा तोहरो जमनवा हमके निराश मत करिह।" रंजना सब सुनती और गर्व का अनुभव करती बलखाती, इठलाती निकल जाती।

जुलाई का महीना समाप्त हुआ। अगस्त आया। हरनाथ को देहरादून न भेजकर उसके बड़े दादा ने उसका नाम म्योर कालेज में लिखवा दिया। देहरादून से हरनाथ की बड़ी शिकायतें आई थीं। वहाँ हरनाथ ने अपने बल का दुरुपयोग किया था। वह कालेज के छटेहुए लड़कों का नेता बन

गया था और आये दिन मारपीट किया करता था। कई बार तो चैलेंज देकर मारपीट हुई थी जिसमें हाकियों के अतिरिक्त चाकू भी चले थे। दो-एक बार हरनाथ के भी चाकू लगा था, परन्तु सौभाग्यवश अधिक चोट नहीं आई थी। फलस्वरूप बड़े दादा ने यह सोचकर कि वहाँ हरनाथ कोई भयंकर काण्ड न कर बैठे, उसे अपनी आँखों के सामने रखना ही उचित समझा, परन्तु उसे कड़ी चेतावनी दीगई कि यदि अब भी वह अपने को सुधारने का प्रयत्न न करेगा तो उसे घर से निकाल दिया जाएगा।

बड़े दादा की सख्ती, पैसों का अभाव, पिछली बदनामी, पुराने मित्रों का बिलगाव और इनके अतिरिक्त कुछ स्वय के विषय में सोचने-समझने की प्रवृति उसके जीवन में परिवर्तन का अंकुर उपजाने लगी। उसने नियमितरूप से कालेज आना-जाना और पढ़ना आरम्भ कर दिया। यद्यपि उसका व्यवितत्व और इलाहाबाद के उँगलियों पर गिने जाने वाले रईसों के परिवार का लड़का होने के कारण उसकी हाँ में हाँ मिलानेवाले इस कालेज में भी दस-पाँच लड़के होगये थे, परन्तु अब वह अपने को कायदे के विद्यार्थियों में सिद्ध करने की चेष्टा में लग गया था। उच्छृंखलता से चिढ़ उत्पन्न होगई थी। म्योर कालेज में वह भले लड़कों में गिना जाने लगा।

म्योर कालेज, विश्वविद्यालय का विज्ञान विभाग है। शहर की तरफ से आने पर जहाँ कम्पनी बाग समाप्त होता है, वहीं सड़क के उस पार से म्योर कालेज की चहारदीवारी शुरू होती है, जो काफी घेरे में खिंची हुई है। म्योर कालेज से आधा फलाँग आगे चलने पर विश्वविद्यालय है। शहर से विश्वविद्यालय को जाने वाले छात्र और छात्राएँ म्योर कालेज से ही होकर आया-जाया करती हैं। यह शार्ट-कट है अर्थात् तिरछा है।

इधर कई दिनों से पानी न बरसने के कारण गर्मी और धूप की तपन इतनी अधिक बढ़ गई थी कि बरसात में भी ग्रीष्मऋतु जैसा आभास होने लगा था। पर आज दोपहर से आकाश में बगुले के पर की भाँति चमकते हुए पर्वताकार श्वेत तथा बीच-बीच में कुछ कालिमा लिए मटमैले बादलों के आवागमन से समय में बड़ा लुभावनापन आगया था। कभी धूप, कभी छाया, ठंडी-ठंडी बहती हवा और ऊँचे मेघों के बीच लुकते-छिपते चीलों

का मँडराना, उस लुभावनेपन की अधिक वृद्धि करने में समर्थ होरहे थे। लगभग तीन का समय होगा। हरनाथ मैदान में एक इमली के पेड़ के नीचे बैठा अपने विगत जीवन पर सोचता हुआ पश्चाताप कर रहा था। उसे अपने किये हुए कामों पर घोर दुःख हो रहा था। चिन्ता की लड़ियाँ अभी टूटी भी नहीं थीं कि घंटा बोलने की आवाज़ कानों में पड़ी। वह कपड़े झाड़ता हुआ खड़ा होगया और सिर लटकाये क्लास की ओर चल पड़ा।

सामने से आते हुए किसी रिक्शे की घंटी घनघनाई। हरनाथ बिना सिर उठाए किनारे को दब गया। रिक्शे के बगल से निकलते ही सवारी बोल उठी, "रोको रिक्शेवाले, रोको।"

"रिक्शेवाले ने ब्रेक लगा दिया। सवारी कूदकर नीचे आई और उसने पुकारा, "हरनाथ भाईसाहब," आवाज़ मीठी थी।

हरनाथ ने चौंकते हुए मुड़कर देखा। रंजना कला हाथ जोड़े खड़ी थी। हरनाथ हाथ जोड़ता हुआ समीप आगया।

"आप यहाँ ?" रंजना ने पूछा।

"यहीं ऐडमीशन करा लिया है।"

"कबसे ?"

"चार अगस्त से ?"

"चार अगस्त से !"

"जी हाँ, चार अगस्त से।"

"चलिये, झूठ बोलते हैं। मैं तो नित्य उधर से ही आती-जाती हूँ। आप मुझे कभी नहीं दिखाई पड़े ?"

"क्या कहा जाए ? वैसे रेगूलर तो मैं भी आता रहा हूँ। आप अच्छी तरह तो हैं ?"

रंजना ने गर्दन हिलाई।

"आपका फोर्थ इयर होगा ?" हरनाथ ने पूछा।

"नहीं ! थर्ड इयर।"

"क्यों ?"

"पिछले वर्ष बीमार पड़ गई थी। इम्तहान नहीं दिया था।"

क्षणभर के लिए मौनता आई। हरनाथ सम्भवतः सोचने लगा कि

उसे अब क्या पूछना चाहिए ? तब तक पुन: रंजना बोल पड़ी, "आपको देहरादून से आये इतने दिन होगए फिर भी मेरे यहाँ आने का कष्ट नहीं किया ? क्यों करने लगे ? बड़े लोग अगर छोटे व्यक्तियों के पास आने-जाने लगें तो फिर बड़प्पन कैसे कायम रह सकेगा ?"

"अब तो आप मुझे लज्जित करने लगीं ?"

"लज्जित नहीं वास्तविकता बता रही हूँ। पिछले वर्ष भी तो आपने कविता नौकर के हाथ भिजवा दी थी। इसके लिए आपके पास कौनसा उत्तर है ? बोलिए।"

हरनाथ सिर खुजलाने लगा, "बात असल यह थी⋯"वह सोचने लगा। आगे क्या कहे समझ नहीं पा रहा था।

रंजना खिलखिला पड़ी, "बात असल यह थी, बोलिये बोलिये। कोई भी बहाना कर दीजिए। यह तो आप लोगों के लिए बाएँ हाथ की चीज़ है।" वह पुन: हँसने लगी।

हरनाथ ने सिर झुका लिया।

"अच्छा, अब किस दिन आरहे हैं ? वैसे इस बात से आप निश्चिन्त रहें कि खातिरदारी के लिए आपका स्पेशल अरेंज्मेण्ट किया जाएगा। आपको यह बिल्कुल अनुभव न हो सकेगा कि आप किसी घुरहू-कतवारु के घर में बैठे हुए हैं। बोलिये, किस दिन आ रहे हैं ?" वह मुस्कराई।

"सब कुछ कह लिया या अभी शेष है ?" हरनाथ के भी होंठों पर मुस्कराहट फैल गई।

रंजना ने बड़े अनोखे ढंग से आँखें नचाईं और खिलखिला उठी। हरनाथ उसे देखता रह गया। कोई चीज़ उसके दिल में विंध गई। मन में कोई कह उठा—बड़ा आकर्षण है इस लड़की में। हज़ार-दो हज़ार में एक है। उसने आँखें नीची करलीं।

"बताइये, कब आरहे हैं ? कल, परसों, नरसों⋯।"

"दिन निश्चित नहीं करूँगा, किन्तु दो-एक दिन में आऊँगा अवश्य।"

"अवश्य ?"

"जीहाँ।"

"मेरी सौगन्ध खाइए।"

"हाँ, आपकी सौगन्ध खाकर कहता हूँ।" हरनाथ ने तनिक लजाते हुए शीघ्रता से कह दिया।

"अब जारही हूँ। नमस्ते।"

"नमस्ते।"

"रंजना मुड़ गई, परन्तु तुरन्त लौट पड़ी। आपका घण्टा कब से शुरू होता है?"

"ग्यारह से।"

"और समाप्त?"

"साढ़े चार बजे। क्यों?"

"योंही पूछ लिया। यदि किसी कारणवश मेरे यहाँ आपका आना न होसका तो कभी मिलकर कारण की जानकारी तो कर लूँगी।" वह मुस्कराई।

"नमस्ते।"

हरनाथ ने रोका, "और कहीं मेरे आने पर आप न मिल सकीं तो मैं आपसे पूछने कहाँ आऊँगा?"

"दूसरे दिन मेरे घर पर। नमस्ते।"

हरनाथ ने हाथ जोड़ लिए।

रंजना रिक्शे पर जाकर बैठ गई। हरनाथ भी मुड़ पड़ा, परन्तु जब तक रिक्शा दिखलाई पड़ता रहा वह गर्दन मोड़-मोड़कर उसे देखता रहा, लेकिन जिस अभिप्राय से देखता रहा वह पूरा न हो सका। रंजना की गर्दन एक बार भी उसे देखने के लिए नहीं मुड़ी थी।

रंजना सोचती चली जारही थी—हरनाथसाहब कितने लजाधुर हैं।

४०

हरनाथ के जीवन में एक फिर नया मोड़ आया। लड़की और प्रेम, जिन दो शब्दों से घृणा थी, जिनकी चर्चामात्र से वह नाक-भौंह सिकोड़ने लगता था तथा आये दिन उमेश और आकाश की फज़ीहत किया करता था, उसी हरनाथ को आज रात भर रंजना के सपने दिखते रहे। कभी वह उसकी सुन्दरता और उसके उभरे हुए अवयवों के आकर्षण पर विचार करता तो कभी उसके भावपूर्ण नृत्य के निमित्त रूपों को सोचता तो कभी उसके हावभाव, आँखों की चंचलता, विशेष प्रकार से हँसने और मुस्कराने की आदत तथा बड़े अनूठे ढंग से निर्भीक होकर सब-कुछ कह डालने की कला पर सोचने लगता। सोचते-सोचते उसने रात समाप्त कर दी। सम्पूर्ण शरीर में विशेष प्रकार की एक सिहरन व्याप्त होगई थी, जिसका अनुभव पहले कभी नहीं किया था। उसे बड़ा अच्छा लग रहा था। सवेरा हुआ। कुछ आँख झपकी। ख्वाबों की दुनिया बसने लगी जिसमें रंजना ही दिख रही थी। देर होने के कारण नौकर ने जगाया। स्वप्न बिखर गया। "काफी धूप चढ़ गई है मालिक।" नौकर ने पानी का गिलास सामने कर दिया।

हरनाथ आँखें मलता हुआ उठ बैठा।

ग्यारह बजने में जब दस मिनट शेष रहते थे तब हरनाथ कालेज आया करता था, परन्तु आज वह साढ़े दस बजे ही आ पहुँचा और उसी इमली के नीचे टहलता हुआ रंजना के रिक्शे की प्रतीक्षा करने लगा। बहुत से रिक्शे निकल गए और अन्त में घंटा भी बोल गया, परन्तु रंजना का रिक्शा नहीं आया। "सम्भवतः वह दस बजे जाती हो।" हरनाथ सोचता हुआ क्लास की ओर चल पड़ा।

हरनाथ का कलवाला घंटा आज भी खाली था। सप्ताह में दो दिन खाली रहता है—मंगल और बुध। इमली के पेड़ के नीचे पुनः प्रतीक्षा होने लगी। कलवाला समय हो आया। दूर से रंजना का रिक्शा आता हुआ दिखलाई पड़ा। हरनाथ ने झट से मुँह दूसरी तरफ कर लिया। उसे यह चीज़

व्यक्त करने में लज्जा आरही थी कि वह रंजना की प्रतीक्षा में यहाँ खड़ा है। रिक्शा कंकड़ीली सड़क पर सर्रर्र-सर्रर्रSSS करता हुआ तेज़ी से निकल गया। रुका नहीं। हरनाथ को दुःख हुआ। वह समझता था कि रंजना उसे देखकर निश्चय ही रिक्शा रोकेगी और उससे बातें करेगी। उसने दूर जाते हुए रिक्शे को देखा। रंजना की पीठ दिखलाई पड़ रही थी। वह देखता रहा और तब तक देखता रहा जब तक रिक्शा फाटक से निकलकर सड़क पर नहीं पहुँच गया। उसके हृदय की कचोट बढ़ गई। कम-से-कम और कुछ नहीं तो एक बार मुड़कर देख ही लिया होता। उसका मन उदास हो आया। कल जितनी प्रसन्नता थी आज उतनी ही व्यथा फैल गई थी। अब कल वह रंजना के घर नहीं जाएगा। उसने सवेरेवाला विचार बदल दिया। वह क्लास की ओर चल पड़ा। घंटा बजने ही वाला था।

दूसरे दिन हरनाथ साढ़े दस बजे नहीं आया और साथ ही उसने यह भी निश्चय किया कि वह इमली के पेड़ के नीचे रंजना की प्रतीक्षा भी नहीं करेगा, परन्तु ज्यों-ज्यों आगमन का समय समीप आता गया हरनाथ के मस्तिष्क में तर्कों का अखाड़ा बढ़ता गया और अन्त में यह निर्णय करना पड़ा कि उसे आज भी प्रतीक्षा में खड़ा होना चाहिए। न खड़े होने का क्या तुक था ? हरनाथ ठीक समय पर इमली के पेड़ के नीचे आगया। आज पहली बार उसने दर्जा गोल किया था। प्रतीक्षा होने लगी। आने वाला समय निकल गया। रंजना का रिक्शा नहीं आया। घंटा बज गया। वह क्लास की ओर खिन्नचित्त लौट पड़ा। यह अनुमान लगाते हुए कि आज उसका आना क्यों नहीं हुआ। तब तक सामने किसी रिक्शे की घंटी सुनाई पड़ी। उसने सिर उठाकर देखा—सामने रंजना का रिक्शा चला आरहा था। वह बड़ी सजी-धजी और आकर्षक दिख रही थी। कल की भाँति आज हरनाथ ने देखी-अनदेखी नहीं की। वह उसी की ओर टकटकी लगाए देखता हुआ चलता रहा। रंजना का रिक्शा समीप आया। वह मुस्कराई और उसने हाथ जोड़ते हुए नमस्ते किया। प्रत्युत्तर में हरनाथ ने भी हाथ जोड़ दिए। रिक्शा रुका नहीं। उसी प्रकार सर्रर्र-सर्रर्रSS करता हुआ निकल गया। हरनाथ क्लास में चला गया।

क्लास में क्या पढ़ाया गया हरनाथ को विदित नहीं। वह रंजना के संसार

में खोया हुआ था। उसके अस्तित्व को, उसके रहस्य को और उसकी बुनियाद को समझ लेने की चेष्टा कर रहा था। सुन्दरता का आगार लिए नवयौवना के सम्पर्क में आने का उसका यह पहला अवसर था। उसके लिए तो बड़ी आफत थी। प्रयत्न करने पर भी निष्कर्ष नहीं निकाल पाता था। रंजना देखकर मुस्करा सकती है, नमस्ते कर सकती है तो क्या रुककर बातें नहीं कर सकती? परसों तो उसने स्वयं रुककर बातें की थीं फिर कल अथवा आज रुकने में कौन सी परेशानी थी? मन ने प्रतिवाद किया। दूसरा तर्क आया जो रंजना के पक्ष में था। पुनः बात कटी और मनोवैज्ञानिकता की दुहाई दीगई और इस प्रकार घंटा समाप्त होगया और पहेली उलझी की उलझी ही रही।

संध्या को स्नान के उपरान्त नाश्ता हुआ और कपड़े बदलकर हरनाथ निकला सिविललाइन्स के लिए, किन्तु अनायास उसके पैर रंजना के मकान की ओर मुड़ गए। वह चले अथवा न चले की दुविधा में मन को भरमाता बढ़ता रहा और रंजना का घर आगया। पैर ठिठके। मन ने लौटने को कहा, किन्तु पुनः इच्छाओं ने आगे को ढकेल दिया। वह सीढ़ियाँ चढ़ता हुआ अन्दर मकान में दाखिल होगया। पहले नौकर मिला, "सब लोग हैं?" हरनाथ ने पूछा।

"जी हाँ। आ ··।"

"कहो, हरनाथ आये हुए हैं।"

नौकर अन्दर चला गया।

क्षणभर में रंजना दौड़ती हुई बाहर आई, "नमस्ते।" अन्दर चलिये। आपको भी कहलाने की आवश्यकता होती है? आइये।"

हरनाथ उसके पीछे-पीछे अन्दर आया। आँगन में रंजना की माँ खड़ी थी। हरनाथ ने नमस्ते किया। उन्होंने आशीर्वाद दिया और उसके गाल पर प्यार की थपकी देते हुए बोली, "इतने समीप होने पर भी तुम लोगों को आने में उलझन होती है? कभी-कभी तो आजाया करो बेटे। चलो, ऊपर बैठो।"

हरनाथ रंजना के पीछे-पीछे ऊपर आया, "यह मेरा", रंजना बोली, "कमरा है।"

हरनाथ ने सोफे पर बैठते हुए चारों ओर नज़र दौड़ाई—कलात्मक ढंग के दरवाज़ों पर झूलते हुए पर्दे, दीवारों पर चित्र, एक कोने में बनावटी मृगछौने की जोड़ी, दूसरे कोने में कालीन बिछी छोटी चौकी पर तबला; हारमोनियम, सितार और घुँघरुओं के कई गुच्छे, आकर्षक टेबिल-लैम्प पर विशेष कलात्मक ढंग का शेड, जो बरबस आगन्तुकों की आँखों को आकृष्ट करने में समर्थ था आदि कमरे में जितनी भी वस्तुएँ थीं वे निस्संकोच रूप से कह रही थीं कि इन सबमें किसी कलाकार का हाथ लगा हुआ है। इधर से उसकी दृष्टि हटी तो रंजना पर आकर रुक गई। वह बोला, "कलाकारों की बात ही निराली है। स्वर्ग के रूप का अनुमान और वास्तविक आनन्द का अनुभव तो इन्हीं के समीप बैठकर किया जा सकता है।"

"और झूठी प्रशंसा का आनन्द आप जैसे व्यक्तियों से प्राप्त हो सकता है, इसे भी साथ-साथ कहिये न ?" वह मुस्कराई, "बैठिये। अभी आती हूँ।" वह मुड़ी।

"क्यों ?"

वह हँस पड़ी, "क्यों क्या ? नीचे न जाऊँ ? आपके लिए नाश्ते का प्रबन्ध करना होगा।"

"मैं नाश्ता करके आरहा हूँ। कोई तकल्लुफ़ नहीं।"

"यह मुझे मालूम है। ख़ैर, पानी पीने में तो कोई आपत्ति न होगी ? वही पी लीजिएगा। अभी लेकर आई।" वह नीचे चली गई।

हरनाथ कल्पनाओं के संसार में खो गया।

मिनट-दो मिनट बाद ही किसी के आने की आहट मिली। हरनाथ ने देखा। सम्भवतः रंजना के पिता आरहे थे। हरनाथ ने हाथ जोड़े। आगन्तुक सिर हिलाता हुआ आकर बैठ गया। वह रंजना के पिता थे। बातें होने लगीं। तब तक उनकी पत्नी भी आगई और उनके पीछे रंजना भी। विभिन्न पहलुओं पर बातों का क्रम बढ़ने लगा। नानाप्रकार की चर्चाएँ चलती रहीं। इसी बीच नौकर नमकीन और मिठाइयों की तश्तरियाँ ले आया। फिर चाय आई। बातचीत चलती रही। जलपान होता रहा। नौकर ने आकर रंजना के पिता को बतलाया कि उन्हें कोई बाहर बुला

आदत भी तो अच्छी है। रिक्शा रुकता ही नहीं। हवा की भाँति उड़ता हुआ निकल जाता है।" हरनाथ ने बड़ी हिम्मत करके यह बात कही थी।

रंजना ने बनावटी अचरज प्रकट किया, "कब ? आज तो मैंने आपसे नमस्ते भी की थी।"

"मैं कल के विषय में कह रहा हूँ।"

"कल ! कल भी आप वहाँ थे ?" उसने तनिक सोचने की मुद्रा बनाई, "ठीक है। मैं कोई मैगज़ीन देखती जारही हूँगी। इसी कारण उधर ध्यान नहीं गया अन्यथा इतनी धृष्टता कैसे कर सकती हूँ ?"

हरनाथ को रंजना का कथन सत्य लगा। उसने सोचा वह ठीक कह रही है। उसने देखा न होगा। हरनाथ का हृदय गद्गद हो आया और उसके मुँह से निकल पड़ा, "मैं तो कल ही आने वाला था रंजनाजी, पर...।" उसे आगे कहने में संकोच का अनुभव हुआ।

"परन्तु भ्रमवश कुछ का कुछ समझ लेने के कारण आना न हो सका। यही न ?"

हरनाथ उसे देखने लगा। बोला नहीं।

"आपका मन बड़ा शक्की है। इसे सुधारने की चेष्टा कीजिये वरना जीवन की यह लम्बी यात्रा बड़ी मुश्किल से तय हो सकेगी। बिना सोचे-समझे इस प्रकार की धारणा नहीं बनानी चाहिए। इससे दूसरों का कितना अहित हो सकता है—यह सोचनेवाली बात है।"

रंजना के भावार्थ को हरनाथ समझ गया। उसके अंग-अंग गुदगुदा उठे। वह बोला, "भविष्य में ऐसी गलती नहीं होने पाएगी।" वह हँसने लगा।

रंजना ने मुँह बनाकर सिर मटकाया, "आप तो बड़े आज्ञाकारी निकले। भगवान करे आपकी सद्बुद्धि सदैव ऐसी ही बनी रहे।"

"आप सितार भी बजाती हैं ?"

"योंही थोड़ी बहुत।"

"तो फिर कुछ सुनाइए।"

"अभी बहुत नहीं आता है।"

"जितना आता है वही सही। उठिये। नृत्य देखने का अवसर तो मिलने

से रहा। आइए।"

"मैंने कहा न, मुझे बहुत नहीं आता। अभी सीख रही हूँ। जब कुछ सीख लूंगी तब सुन लीजिएगा।" वह नखरे करने लगी।

"जो आता है वही सुनाइए। आपको मेरी सौगन्ध।"

रंजना हँसी, "आपको यह भी आता है?"

हरनाथ लजा गया, परन्तु झेंप ज़ाहिर न होने पाए इस कारण उसने तुरन्त उत्तर दिया, "अभी दो-एक दिन पहले सीखा है।" उसने रंजना पर चोट कस दी।

"तब मैं आपको सितार अवश्य सुनाऊँगी। सम्भव है इसे भी आप सीख लें। वह उठी और चौकी पर बैठकर सितार के तारों को मिलाने लगी।

रंजना सितार भी अच्छा बजा लेती है। उसने कई गज़लें और राग सुनाए। इसी बीच नौकर भोजन के लिए कहने आया। रंजना ने सितार बन्द कर दिया और उठ खड़ी हुई। कमरे से बाहर निकलती हुई वह बोली, "परसों क्रिश्चियन कालेज में कोई फंक्शन है। उसमें मुझे भी नृत्य करना है। आप आइएगा।"

"तो क्या कल मुलाकात नहीं होगी?" हरनाथ के मुँह से अनायास निकल पड़ा।

"कल किसलिए?" रंजना जानकर अनजान बन रही थी।

"योंही।" हरनाथ चक्कर में पड़ गया, "किसी कारणवश नहीं।"

रंजना मन-ही-मन प्रसन्न होती हुई सीढ़ियाँ उतरने लगी। पीछे-पीछे हरनाथ था।

४१

अधिकतर देखा गया है कि चरित्र-सम्बन्धी कठोर साधना करने वाले व्यक्ति जब अपने पथ से विचलित होते हैं तो उनके भीतर काम की प्रवृत्ति बड़ी बलवती हो उठती है। वे इतने लालायित और आतुर हो उठते हैं कि उन्हें संसार में और कुछ दिखता ही नहीं। खाना-सोना हराम हो जाता है। हर तरफ से मन उचट कर एक स्थान पर केन्द्रित हो जाता है। चलते-फिरते, उठते-बैठते, मन केवल उसी संसार में विचरण करता रहता है। अजीब हालत हो जाती है। ठीक ऐसे ही लक्षण अब हरनाथ में दिखलाई पड़ने लगे थे। यद्यपि अक्खड़ और ऐंठू स्वभाव के कारण प्रत्यक्षरूप से आतुरता का वह रूप उसमें दिखना सम्भव नहीं था, परन्तु अन्तर में विकलता का प्राबल्य अनिवार्य तो था ही।

कल की बात का स्मरण रखते हुए भी हरनाथ आज पुनः पीरियड छोड़कर इमली के नीचे रंजना के रिक्शे की प्रतीक्षा करने लगा। हरनाथ इमली के सहारे लेटा हुआ योंही किसी पुस्तक के पन्ने उलट रहा था, परन्तु नेत्र क्षण-क्षण में सामने देख लिया करते थे। कुछ समय उपरान्त रंजना का रिक्शा दिखलाई पड़ा। हरनाथ चाहकर भी अपनी दृष्टि ऊपर न उठा सका। चोर की दाढ़ी में तिनकावाली स्थिति होगई थी। मन में कोई कोसने लगा था कि उसे आज यहाँ नहीं बैठना चाहिए था। रंजना उसके विषय में क्या सोचेगी? उसका सिर और झुक गया। ग्लानि से हृदय भर आया।

रिक्शा आया और दस कदम आगे जाकर रुक गया। रंजना उतर पड़ी। रिक्शेवाले को पैसे देकर विदा कर दिया। हरनाथ के कान इस समय आँखों का भी काम कर रहे थे। उसे सब कुछ मालूम पड़ रहा था और इसी कारण उसने अपनी बनावटी तन्मयता में तनिक और वृद्धि कर ली थी। हरनाथ के कानों में आवाज़ पड़ी, "नमस्ते।"

हरनाथ झूठ-मूठ चौंका, "आप। नमस्ते, नमस्ते।" वह झटपट खड़ा

हो गया, "आज पैदल…।"

"क्या करूँ ? रिक्शे पर चलने से लोगों को शिकायत का मौका मिल जाता है, इसलिए युनिवर्सिटी से म्योर कालेज तक पैदल आने का ही अब फैसला कर लिया है।" रंजना हरनाथ के बनावटीपन को भली-भाँति समझ रही थी।

"आप तो मुझे लज्जित कर रही हैं।"

"बैठिए। यह पीरियड आपका वेकेन्ट (खाली) रहता है क्या ?" दोनों घास पर आमने-सामने बैठ गए।

"हफ्ते में दो दिन, मंगल और बुध।"

"और आज ?"

"आज…तो…," हरनाथ ने गलती महसूस की, "मास्टरसाहब गैरहाज़िर हैं।" वह झूठ बोल गया।

"तब तो भाग्य ने आज अच्छा साथ दिया अन्यथा आज भेंट नहीं हो पाती। मास्टरसाहब ख़ूब गैरहाज़िर हुए।" रंजना सब समझ रही थी।

हरनाथ ने सोचा बड़ी शरीर लड़की है। कहने में तो चूकती ही नहीं। वह झेंपता हुआ झेंप मिटाने के अभिप्राय से बोला, "अच्छा न होता तो आप जैसों से भेंट कैसे होती ? यह साधारण बात नहीं है। हमने पूर्वजन्म में बड़ी भयंकर तपस्या की होगी।" हरनाथ उसे निहारने लगा।

रंजना खिलखिला पड़ी, "बातें भी आप अच्छी गढ़ लेते हैं। गुणी व्यक्तियों के गुण धीरे-धीरे ही प्रकाश में आते हैं।" उसने सामने देखा, "सम्भवतः आपके मित्रगण आरहे हैं।" उसका संकेत उधर से आते हुए कुछ लड़कों के लिए था।

हरनाथ ने उधर देखकर गर्दन मोड़ ली, "वे मेरे मित्र नहीं हैं।"

तब तक घंटा टन-टन करके बोल उठा, "आपका क्लास होगा।"

"ना"

"क्यों ? खाली है ?"

"नहीं। खाली नहीं है पर जाऊँगा नहीं। क्लास तो रोज़ होता है और होता रहेगा लेकिन आपके पास बैठकर इस प्रकार की बातें करने का कब अवसर प्राप्त हो सकेगा ?" हरनाथ ने खुलकर अपने को व्यक्त करने का

प्रयास आरम्भ कर दिया।

"मैं नहीं समझती थी कि आपकी दृष्टि में मेरी इतनी इम्पार्टेन्स है अन्यथा मैं तो नित्य बैठ सकती हूँ। खैर, अब अगली बार से ऐसा ही किया करूँगी।" वह खिसके हुए आंचल को ठीक करती हुई खड़ी होगई।

"यह क्या ?" हरनाथ अचम्भे से उसकी ओर देखता रह गया। "बैठिये न।"

"अब आप क्लास में जाइये। नमस्ते।" वह मुस्कराती हुई मुड़ गई। हरनाथ भी खड़ा होगया, "एक बात सुनिये।"

वह रुक गई, "कहिये।'

"कल क्रिश्चियन कालेज में आप कब तक आएँगी ?"

"सात बजे तक।"

हरनाथ ने हाथ जोड़े। रंजना अधरों पर मुस्कान बिखेरती हुई बढ़ गई।

× × ×

विद्यार्थियों और निमन्त्रित व्यक्तियों से क्रिश्चियन कालेज का हॉल खचाखच भरा हुआ था। रंजना के माता-पिता भी आये हुए थे। और उन्हीं के बगल में हरनाथ भी बैठा हुआ था। कई कार्यक्रम होचुके थे। अब रंजना कला का नाम घोषित हुआ। हॉल में तालियाँ गूँज उठीं। पर्दा हटा। दर्शकों की आँखें गड़ गई। हरनाथ कहीं का न रहा। इतनी सुन्दर है रंजना! सुन्दरता भी लज्जित होरही थी। उसकी पलकें जम गईं। सम्भवतः रंजना की छवि उसके दोनों पलकों के बीच आकर अटक गई थी। तबले पर थाप पड़ी। आरकेस्ट्रा बजने लगा। नृत्य आरम्भ होगया। हॉल में सन्नाटा छागया। मंत्रमुग्ध सब टकटकी बांधे रंजना के कलात्मक-नृत्य को, उसके हाव-भाव को और उसके रूपरंग में व्याप्त मादकता को देख रहे थे—अनुभव कर रहे थे। सब खो गये थे। नृत्य में प्रगति होती गई। उसमें निखार आता गया। तालियों पर तालियाँ बजती गईं। रंजना ने कमाल कर दिखाया। अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच कर नाच समाप्त होगया। पर्दा बन्द होगया। सब चिल्ला उठे, "वन्स मोर, वन्स मोर"। तालियाँ जो बज रहीं थीं सो अलग। रंजना के माता-पिता की छाती दूनी होगई थी। गर्व

से गर्दन में वक्रता आगई थी। दोनों आपस में कुछ बातें करने लगे थे।

स्टेज से आवाज़ आई, "कुमारी रंजना कला का नृत्य", कहने वाला तनिक रुका। हाल में भी खामोशी आई। दर्शकों ने समझा कि पुनः रंजना स्टेज पर आरही है, परन्तु सुनाई पड़ा, "पुनः होगा किन्तु कुछ प्रतीक्षा करने के उपरान्त। प्रतीक्षा में अधिक आनन्द है। मैं......।"

पुनः 'वन्स मोर, वन्स मोर' का शोर होने लगा।

"कृपया शान्त रहने का कष्ट करें। कुमारी रंजना कला इतना थक गई हैं कि वह तत्काल नृत्य करने में असमर्थ हैं। उन्हें थोड़ा अवकाश दें। वह स्वयं आपको नृत्य दिखाने के लिए उत्सुक हैं। अभी उनके कई नृत्य होने को हैं।"

हॉल का वातावरण वदला। शान्ति की स्थापना हुई। दूसरे कार्यक्रम चलने लगे।

आधे घंटे उपरान्त रंजना के पिता ने हरनाथ से पूछा, "क्या तुम अपनी कार से आये हो?"

"जी हाँ। कोई आवश्यकता है?"

"ड्राइवर तो होगा?"

"जी नहीं। मैं स्वयं लाया हूँ। आपको...।"

"नहीं, नहीं। हम लोग रिक्शे से चले जाएँगे। अगर तुम रुक सको तो रंजना को लेते आना।"

"अच्छी वात है। आप लोग जा रहे हैं?"

रंजना के पिता ने 'हाँ' कहा।

"फिर चलिए आप लोगों को छोड़े आता हूँ।" वह खड़ा होगया।

"नहीं। हम लोग रिक्शे से चले जाएँगे। तुम बैठो।" दोनों प्राणी उठकर चल दिये। हरनाथ बैठ गया।

कार्यक्रम चलता रहा। लगभग बीस-पच्चीस मिनट बाद हरनाथ उठा और उधर से घूमकर स्टेज के पीछे जा पहुँचा। उसके मस्तिष्क ने उसके सामने कोई नई योजना रख दी थी।

रंजना, कलाकारों के बीच बैठी वातें कर रही थी, परन्तु जैसे ही उसने हरनाथ को देखा, वह उठकर उसके पास आगई और समीप पड़ी

हुई कुर्सी को खींचती हुई बोली, "वैठिये।"

"आप बैठिये। मैं दूसरी उठाये लाता हूँ।" वह दूसरी उठा लाया और बैठ गया। "बधाई है।" वह वोला।

"काहे की वधाई? मेरे नाच की?"

"नहीं सवकी।"

"सवकी से क्या मतलव? मैं समझी नहीं।"

"मतलव, जितनी वस्तुएँ आपको ईश्वर से प्राप्त हुई हैं।"

रंजना समझ गई। फिर भी उसने पूछा, "जैसे?"

"जैसे क्या? सभी कुछ तो है आपके पास। क्या-क्या गिनाऊँ?" हरनाथ कहने में हिचकिचा गया था।

रंजना ने आँखें तरेरीं, "नज़र लगा रहे हैं? अगर लग गई तो फिर ऐसी वाहवाही सुनने को नहीं मिलेगी।" वह हँसने लगी, "आप देर से क्यों आये? मैं यहाँ साढ़े छै बजे ही आगई थी।"

"कार बिगड़ गई थी। उसी को ठीक कराने में देर होगई वरना मैं भी साढ़े छै तक आगया होता।"

"आप तो पापा के बगल में बैठे थे? क्या वे लोग गये?"

"हाँ। और आपकी ज़िम्मेदारी मेरे ऊपर छोड़ गये हैं।"

रंजना ने मुँह बनाया, "ओहो, फिर तो मैं आपके संरक्षण में आगई।"

"बिल्कुल। मुझसे ऐसा ही कहा गया है।" वह हँसने लगा। क्षणभर रुकने के उपरान्त उसने पूछा, "क्या दूसरा नृत्य भी करने का विचार है?"

"क्या न करूँ?"

"नहीं, वैसे ही मैंने पूछा।" हरनाथ जो कहना चाह रहा था उसे कहने का साहस नहीं हो रहा था।

रंजना भाँप गई कि हरनाथ लज्जावश अपनी वात कह नहीं पा रहा है। उसने उसे बढ़ावा दिया, "क्या घर चलने का विचार है?"

हरनाथ को कुछ बल मिला। फिर भी वह सिर झुकाए वोला, "सोचा था आपको जमुना पार घुमा लाता। चाँदनी होने के कारण आज मौसम भी अच्छा है। क्या चलियेगा?"

"चलने में कोई आपत्ति नहीं है। चल सकती हूँ, लेकिन अगर न जाऊँ

तो क्या आपको बुरा लगेगा ?"

"नहीं। और किसी दिन चले चलेंगे। आपके लिए यहाँ दुबारा नाचना भी तो आवश्यक है ?" हरनाथ का चेहरा उतर आया था।

रंजना हरनाथ के चेहरे को देखकर मुस्करा उठी, "क्या टाइम है आपका घड़ी में ?"

"पौने नौ।"

"चलिए आप मोटर निकालकर इधर लाइए। मैं इन लोगों से कहकर आती हूँ।" वह खड़ी होगई। हरनाथ बाहर चला गया।

रंजना ने पेट में दर्द का बहाना बताकर नाचने से असमर्थता प्रकट की और कपड़े बदलकर बाहर आई। हरनाथ ने कार समीप लगा रखी थी। वह बैठ गई। कार भर्र-भर्र करती हुई कालेज से बाहर निकल गई।

यमुनापुल पर जब कार पहुँची तो हरनाथ ने मौनता भंग की, आपका यह उपकार मैं जीवन-भर नहीं भूलूँगा।"

"कौन-सा उपकार ?" रंजना को आश्चर्य हुआ।

"मेरे साथ आने का।"

"उफ ! आप भी कमाल के आदमी हैं। आपके साथ आने में मैंने कोई-उपकार कर दिया ? ऐसी ही बातों से लड़कियों का दिमाग़ खराब हो गया है। लड़कियों में सुरखाब के पर नहीं लगे होते।"

"लेकिन ज़माने ने तो हमेशा ऐसा ही समझा है।"

"और आपने भी उसी को समझने का प्रयत्न किया है ?"

"विवशता है। ज़माने से अलग तो रह नहीं सकता।" हरनाथ को कहने के लिए इससे उत्तम अवसर फिर नहीं मिलने को था।

"तब तो मेरी बन आई। अब सातों ख़ून मेरे लिए क्षम्य हैं।" वह हँसने लगी।

हरनाथ के मुँह से कोई शब्द निकलता-निकलता रुक गया। अभी वह रंजना को भली-भाँति नहीं समझ सका था और यदि समझ भी सका था तो भय के कारण साहस नहीं कर पा रहा था। फिरभी उसने दबी ज़बान से कहा, "इसमें भी क्या अब कोई शक की गुंजाइश है ?"

"तब तो मुझे आपका कृतज्ञ होना पड़ गया। ख़ैर, आपजैसों का

कृतज्ञ होना सौभाग्य की बात है। सबको यह नसीब थोड़े होता है?" उसने गर्दन मोड़कर हरनाथ को देखा।

हरनाथ ने भी देखा और पुन: सामने देखने लगा। मोटर एग्रीकल्चर कालेज छोड़ती हुई काफी आगे निकल गई थी। देहाती वातावरण आगया था। चाँदनी की चमक अधिक निखर आई थी। आँखों को भली लग रही थी। प्राकृतिक सौन्दर्य में अलौकिक सम्मोहन है। भले-बुरे, जड़-चेतन सभी उसके वशीभूत हो जाते हैं। रंजना ने कहा, 'ज़रा एक किनारे गाड़ी रोकिए। थोड़ी देर नेचुरल ब्यूटी देखी जाए।"

हरनाथ की मनचाही बात होगई। उसने सड़क के किनारे मोटर खड़ी कर दी। दोनों बाहर निकले। रंजना ने प्रस्ताव रखा, "चलिये थोड़ी दूर तक टहल आवें।"

"चलिए।" दोनों चलने लगे।

रंजना इधर-उधर निहारती आनन्द-विभोर होने लगी। वह किन्हीं कल्पनाओं में विचरण करने लगी। थोड़ी देर बाद अचानक उसका ध्यान बटा "अरे," उसने हरनाथ की ओर देखा "आपने तो बिल्कुल खामोशी अख्तियार कर ली है।"

"नहीं तो, बोलना उपयुक्त नहीं समझा इसलिए चुप था। आज का मौसम बड़ा सुहावना है।" हरनाथ के शब्दों में भारीपन था।

रंजना समझ गई कि उसके इस व्यवहार से हरनाथ को व्यथा पहुँची है। परन्तु इस व्यवहार का कारण वही है, इसे वह कैसे बताये? वह बोली, "मौसम तो ऐसा सुहावना है कि तबीयत होती है कि आपके संग चलती ही रहूँ। चलिएगा मेरे साथ?"

हरनाथ ने रंजना को तनिक ध्यान से देखने का प्रयत्न किया। संभवतः वह उसकी बातों की वास्तविकता और अवास्तविकता का अनुमान लगा रहा था।

"आपको विश्वास नहीं हो रहा है न? मैं सत्य कह रही हूँ। चलिएगा?"

"चलिए।"

"और आपकी मोटर और घरवाले?"

"जहाँ है वहीं रहेंगे।"

रंजना हँसने लगी, "बड़े त्यागी हैं। मेरे लिए तो आप सर्वस्व न्यौछावर करने को तुले बैठे हैं।"

"फिर भी दुःख है कि उसका महत्व नहीं आँका जा रहा है।" हरनाथ उसे देखने लगा।

रंजना ने मुँह वनाया और मुड़ती हुई दौड़ पड़ी। धीरे से उसके मुँह से निकला, "बिल्कुल अनाड़ी···।"

हरनाथ को अब पूरी तरह समझ में आगया कि रंजना भी उससे प्रेम करती है। उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। वह भी पैर बढ़ाता हुआ कार के पास आ पहुँचा।

रंज़ना ने कहा, "चलिए अब चलें। दस बज रहा होगा।" और वह दरवाज़ा खोलकर अन्दर जा बैठी।

हरनाथ भी बैठा और कार लौट पड़ी, "एक बात कहूँ आपसे?" हरनाथ ने पूछा।

"कहिए।"

"क्या आप मुझसे प्रेम करती हैं?"

रंजना चुप रही। उत्तर नहीं दिया।

हरनाथ बिल्कुल बौड़म था। इसे भी क्या सरकवाना होता है? परन्तु बौड़म तो बौड़म। उसने पुनः पूछा "बोलिए न। चुप क्यों होगईं?"

"क्या बोलूँ? यह भी क्या बताया जाता है?" वह चुप होगई।

हरनाथ ने हाथ बढ़ाकर उसका हाथ पकड़ लिया। रंजना ने तुरन्त हाथ खींच लिया, "गाड़ी संभाल कर चलाइए। एक्सीडेण्ट होते देर नहीं लगती।"

हरनाथ ठहाका मारकर हँस पड़ा और थोड़ी देर तक हँसता रहा। पुल आगया और फिर शहर।

× × ×

इमली के पेड़ के नीचे नित्य हरनाथ प्रतीक्षा करने लगा। निश्चित समय पर रंजना का रिक्शा आता। दोनों एक दूसरे को देखते, नमस्ते करते और अलग हो जाते। केवल मंगल और वुध को दोनों की प्यारभरी बातें

होतीं। रंजना हरनाथ की पढ़ाई के विषय में बहुत सख्त थी। वह उसे गैरहाज़िर देखना नहीं चाहती थी। हरनाथ भी चुप था। यद्यपि इच्छाएँ अब इतने से संतुष्ट नहीं हो रही थीं; उनकी लालसा बढ़ गई थी परन्तु किया क्या जाए? साधन अभी उपलब्ध नहीं थे।

विश्वविद्यालय में कोई छुट्टी थी। हरनाथ बहुत दिनों से उमेश से मिलने की सोच रहा था। उसने बड़े दादा से अनुमति ली और कानपुर चल पड़ा। घर पर ही उमेश मिल गया। दोनों मित्र एक-दूसरे के गले से चिपट गए। वर्षों बाद दोनों ने एक-दूसरे को देखा था। यद्यपि हरनाथ उसी रात को लौटने वाला था, किन्तु वह लौट न सका। वर्षों की बातें कहीं एक रात में समाप्त हो सकती थीं? दोनों ने अपनी-अपनी सुनाई पर हरनाथ ने रंजना वाले रोमान्स का ज़िक्र नहीं किया।

शीघ्र किसी छुट्टी में आने का आश्वासन देता हुआ हरनाथ दूसरे दिन इलाहाबाद लौट आया। आकाश के विषय में पूछने पर उसने बताया था कि अभी तक उसका कुछ पता नहीं चल सका है।

४२

विन्दापांडे दिल्ली से लौट आया था और पुनः अपने काम में जुट पड़ा था। सरगरमी अधिक आगई थी। जनता उसको हर तरह का सहयोग दे रही थी और यही कारण था कि सरकार की ओर से इतनी सख्ती होने के बाद भी पुलिस अभी तक उसे पकड़ नहीं सकी थी। तमाम तबादले हुए, नई तैनाती हुई। ऊपर नीचे हर तरफ परिवर्तन किया गया, परन्तु फिर भी हुआ कुछ नहीं। रोज़ सूचना आती—आज विन्दापांडे यहाँ देखा गया, वहाँ देखा गया, फलाने गाँव के ज़मींदार को चेतावनी दी गई, अमुक गाँव के ठाकुरसाहब के गुर्गे की मरम्मत की गई आदि-आदि।

सिपाही, थानेदार, एस. पी. और एस. एस. पी. सब दौड़ते। न दिन को दिन समझते और न रात को रात। कभी भोजन मिला तो पानी नहीं और कभी पानी मिला तो भोजन नहीं, फिर भी बिन्दापांडे उनके हाथ नहीं लगता। कब आया, कब चला गया, किधर चला गया, कैसे चला गया, यह रहस्य का रहस्य ही बना रह जाता। बिन्दापांडे देवकीनन्दनजी खत्री के उपन्यास 'चन्द्रकान्ता' का कोई अय्यार हो गया था।

रधिया से बिन्दापांडे की भेंट होती रहती। हफ्तों दौड़-धूप और अथक परिश्रम के उपरान्त जब वह अपने में थकान का अनुभव करता तब वह कोई अवसर निकालकर रधिया से मिलने चला आता। उस घण्टे-दो घण्टे के मिलन के उपरान्त ही उसे अनुभव होता कि उसके भीतर पुनः शक्ति और पहले जैसी स्फूर्ति आगई है। वह जब-तब उस बात को रधिया से भी कह दिया करता था। रधिया मुँह बनाकर उसकी मुँहदेखी प्रशंसा पर प्यारभरी झिड़कियाँ देती और उसे झूठा कहती थी, किन्तु मन-ही-मन उसे उस प्रशंसा पर बड़े गर्व का अनुभव होता था। वह अपने को महान सौभाग्यशालिनी समझती। उसने जैसा सच्चा प्रेम दिया था वैसा पाया भी था। वह नित्य भगवान से प्रार्थना करती कि कोई ऐसा अवसर आ जाए जिससे वह अपने बिन्दा पर स्वयं को बलिदान कर सके।

संसार के चलते हुए व्यापार में उलट-फेर कौन करता है और असम्भव को सम्भव और सम्भव को असम्भव करने वाली कौनसी शक्ति है—अभी तक पता नहीं लग सका है। यद्यपि इसे खोज निकालने की चेष्टा आदिकाल से होती चली आ रही है और अब भी हो रही है, परन्तु अभी तक सर्वसम्मति से कोई निर्णय नहीं किया जा सका है। न किया जाए, इसके लिए विशेष चिन्ता नहीं है किन्तु यह चिन्ता का विषय अवश्य है कि जिससे देश, समाज और मानवता का हित हो रहा हो, जो सर्वप्रिय और सबके कल्याणार्थ सब कुछ कर रहा हो उसके कार्यों में बाधा पहुँचाकर क्यों उसकी इतिश्री कर दी जाती है? बिन्दा जनता-जनार्दन का सेवक था, तन-मन-धन से सेवक था। सेवा के निमित्त ही अपने जीवन की बाज़ी लगा दी थी। अपने समस्त सुखों और स्वार्थों की आहुति दे दी थी। फिर भी एक दिन उसी के एक विश्वासपात्र व्यक्ति ने उसे पकड़वा दिया। वह जिसके काम के लिए जिसके

घर आया हुआ था, उसने पुलिस को पहले से सूचना दे रखी थी। गुप्तरूप से पुलिस ने वहाँ घेरा डाल दिया था। बिन्दा अपने निश्चित समय पर आया। बातचीत होने लगी और मुश्किल से आधा घण्टा भी नहीं बीता होगा कि मकान घेर लिया गया और निश्चिन्त बैठा हुआ बिन्दापांडे पकड़ लिया गया। बिन्दा हक्का-बक्का देखता रह गया। वह कुछ भी नहीं समझ सका। पुलिस-वालों को भय था कि शायद बिन्दा के पास पिस्तौल हो, अतः उसे पकड़ते ही उसकी मुश्कें कस दी गईं और तलाशी ली गई।

बिन्दा मुस्कराया, "अमा यार, अगर वह टिपटिपऊवा होता तो तुम लोग हमें पकड़ पाते !" उसने अपने साथी को घूरा, "गद्दार ! इतना बड़ा विश्वासघात तूने किया। हराम...।" वह दाँत पीसता हुआ घर से बाहर निकला।

अखबारवाले चिल्ला रहे थे, "बिन्दापांडे गिरफ्तार, उसके साथी ने उसके साथ विश्वासघात किया...।" तहलका मच गया। गरीब रो पड़ा और अमीर हँस पड़ा। लखनपुर में समाचार फैला। हमदर्द दुख के सागर में डूब गए और बेदर्द खुशियों के गुलछर्रे उड़ाने लगे।

रधिया अपनी खटोली पर पड़ी रातभर आँसू बहाती रही।

× × ×

युद्ध समाप्त हो गया था। इस बार भी विश्वव्यापी युद्ध में अंग्रेज़ ही विजयी रहे। दुश्मन रौंद डाले गए, खूब मनमानी की गई। अपने-पराये का सम्बन्ध भली प्रकार निभाया गया। जर्मनी को दो टुकड़ों में बाँटकर अपना-अपना हिस्सा ले लिया गया।

लन्दन में चुनाव हुआ, चर्चिल सरकार धड़ाम होगई। मज़दूर पार्टी शक्ति में आई। एटली महोदय प्रधान मन्त्री बने। फिर क्या था ? परिवर्तन का नया रूप देखने को मिला। उन्होंने दूसरी नीति का पालन किया। युद्ध के स्थान पर मित्रता की भावना फैली। भारत के साथ विशेष रूप से सहृदयता दिखलाई गई। नेता छोड़े गए, उनसे सुलह की बातचीत होने लगी। गवर्नरजनरल लार्ड माउण्टवेटन ने सरकार का प्रतिनिधित्व किया और अन्तरिम सरकार की घोषणा हुई। पंडित जवाहरलाल नेहरू प्रधान-मन्त्री हुए और शीघ्र १५ अगस्त, १९४७ को भारत के चप्पे-चप्पे से यह

आवाज़ सुनने को मिली—स्वतन्त्रता हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है और हम स्वतन्त्र हैं। युगों से भारत माता की जकड़ी हुई ज़ंजीरों को तोड़ने के लिए जिन नर-नारियों ने हँसते हुए प्राणों की बलि देदी थी, उनकी लालसा पूरी हुई, उनकी आत्माएँ सन्तुष्ट हुईं। देश के एक कोने से दूसरे कोने तक नवीन चेतना की एक नवीन लहर दौड़ गई।

उमेश के जीवन से बहुत-सी चीज़ों ने विदाई लेली थी। कविता समाप्त होगई थी, संगीत समाप्त हो गया था और राजनीति का चक्कर भी एक प्रकार से समाप्त ही होता जा रहा था। कहने के लिए अब तक छोटे-मोटे कार्यों में सम्मिलित हो जाने वाली प्रवृत्ति ही रह गई थी। बिल्कुल जीवन बदल गया था। पढ़ना तथा संध्या समय थोड़ी देर के लिए इधर-उधर टहलकर पुनः पढ़ते हुए सो जाना—यही दिनचर्या रह गई थी। कहाँ इलाहाबादवाला जीवन और कहाँ अब कानपुर का जीवन? आकाश-पाताल का अन्तर आगया था। परिवर्तनशील जगत में परिवर्तन होते रहना आश्चर्य की बात नहीं है। हाँ, एक चीज़ उमेश में अवश्य नई अंकुरित होने लगी थी और वह थी कहानी लिखने की उत्सुकता। उसकी पहली कहानी जो कालेज मैगज़ीन में छपी थी, उसकी बड़ी प्रशंसा हुई थी।

देश स्वतन्त्र हो गया था, देशवासी स्वतन्त्र हो गये थे, अपनी सरकार बन गई थी, अपना राज हो गया था, कल्पना साकार हो गई थी। त्रसित, दलित और असहाय जनता आपे में नहीं थी। कैसे रहती? उसीके तो सारे कष्टों का निवारण होना था। उसे भी सुख का अनुभव करना था। जीवन में हँसी-खुशी भी होती है इसका अनुमान लगाना था। और इसीलिए तो उसने अपने को, अपने लाड़लों को, अपनी लाड़लियों को, बहुओं को, पत्नियों को, भाइयों और भतीजों को उत्सर्ग किया था, परन्तु दुर्भाग्य को क्या कहा जाए? कुछ ही समय बाद ऐसे लक्षण दिखलाई पड़ने लगे कि उसकी सम्पूर्ण आशाओं पर तुषारपात हो गया। जिन नेताओं ने अपने जीवन को जीवन न समझकर भाई, स्त्री, पुत्र, माता-पिता सबकी ममता से परे रहकर, पत्थर का हृदय बनाकर तथा सारे सुखों की तिलांजलि देकर आज़ादी के लिए लड़ाई लड़ी थी, वे सत्ता ग्रहण करते ही कुछ-का-कुछ बनने लगे। उनकी मनोवृति बदलने लगी। वे अपने को स्वामी और देशवासियों

को सेवक समझने लगे। उनके तौर-तरीके बदल गये। बातचीत बदल गई। रहन-सहन बदल गया। शायद उन्हें भी अंग्रेज़ों की भांति अधिकार का नशा चढ़ने लगा। सोचा गया था और, होने लगा और।

स्वतंत्रता-संग्राम के महान सेनानी नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की जन्म-तिथि आई। स्वतन्त्र देश में स्वतन्त्र नागरिक की हैसियत से उनकी जयंती मनाने का प्रथम अवसर था। कानपुर में बड़े धूमधाम से तैयारी होने लगी। छोटे-बड़े, पढ़े-अनपढ़े, धनी-निर्धन सभी की दृष्टि में वह महान और पूज्यनीय थे और इसी कारण सभी इस शुभ अवसर पर अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए लालायित थे। पर पता नहीं क्यों नगर के कांग्रेसियों को जो अब अपने को अन्य नागरिकों से भिन्न समझने लगे थे— इस जयंती का विरोध करने लगे। विशेषकर शहर कांग्रेस कमेटी का अध्यक्ष इसका घोर विरोधी था।

नानाप्रकार की अफवाहें फैलने लगीं और ज्यों-ज्यों तिथि समीप आती गई यह अफवाहें आतंक को बढ़ाती ही गईं। सुनने में बड़ी उल्टी-सीधी बातें आ रही थीं, पर जनता ने भी जैसे कमर कस ही ली हो। जब वह अंग्रेज़ों का सामना कर सकती थी तो इन कांग्रेसियों में क्या रखा था। उसने भी सोच लिया कि परिणाम चाहे जो हो पर सुभाषबाबू की जयंती बड़े ज़ोर-शोर से मनाई जाएगी।

२३ जनवरी को वह पुण्य-तिथि आई, जुलूस निकला। जुलूस का नेतृत्व प्रसिद्ध नेता श्री विशम्भरदयाल त्रिपाठी कर रहे थे जो किसी समय सुभाषबाबू के दाहिने हाथ रह चुके थे। फूलबाग में सभा होने वाली थी, परन्तु कलक्टर के अदेशानुसार फूलबाग के फाटक बन्द कर दिये गए थे और उसके चारों ओर घुड़सवारपुलिस तैनात होगई थी। फिर भी त्रिपाठी जी ने दहाड़ते हुए कहा था कि चाहे जीवन की पूर्णाहुति आज क्यों न करनी पड़े पर मीटिंग फूलबाग के मैदान में ही होगी। जुलूस के संग चलती हुई जनता ने इसका हृदय से स्वागत किया। जुलूस बढ़ता रहा।

सारे फसाद की जड़ था शहर कांग्रेस कमेटी का अध्यक्ष और उसीके कहने पर कलक्टर ने रोक-थाम भी की थी अन्यथा इसकी कोई आवश्यकता नहीं थी। क्या सुभाषबाबू की जयन्ती मनाना गुनाह अथवा जुर्म था या

जयन्ती मनाने से नगर की शान्ति और व्यवस्था में किसी प्रकार का अन्तर आने वाला था ? मगर नहीं, बेचारे कलक्टर को तो कांग्रेस-अध्यक्ष के इशारे पर चलना था। अगर न चलता तो उसकी नौकरी खतरे में न पड़ जाती। उसकी तनज़्ज़ुली न हो जाती। अब तो यही कांग्रेसी देश के स्वामी थे। इन्हीं की हुकूमत थी। पानी में रहकर मगर से बैर करना कहाँ की बुद्धिमानी थी। कलक्टर का सोचना ठीक था।

खैर, नगर के विभिन्न मार्गों से होता हुआ जुलूस विरहना रोड पर आया और फिर वह फूलबाग की ओर बढ़ चला। अध्यक्ष का क्रोध भड़का, उसकी इतनी तौहीन ! वह बौखला उठा। उसने कलक्टर से कहा कि वह गोली चलाकर जुलूस को तितर-बितर कर दे। कलक्टर बड़ी दुविधा में पड़ गया। आखिर था तो वह भी इन्सान। निरीह जनता पर गोली चलाने का तुक ? परन्तु ज़बर्दस्त का ठेंगा सिर पर होता है। अन्त में उसे अध्यक्ष महोदय के आदेश का पालन करना ही पड़ा। गोली चलाने की आज्ञा होगई। फूलवाग चौराहे के समीप पहुँचते ही गोलियाँ चलने लगीं। जुलूस तितर-बितर हो गया, परन्तु त्रिपाठीजी और उनके पीछे कुछ उत्साही व्यक्ति जिनमें एक उमेश भी था—आगे बढ़ते रहे और अन्त में फूलबाग के अन्दर प्रवेश कर गये। इसके पूर्व कि त्रिपाठीजी कुछ कहें उन्हें उनकी टोलीसहित गिरफ्तार कर लिया गया और सब पुलिसलारी में बिठलाकर जेल भेज दिये गए।

हज़ारों व्यक्तियों का समूह सड़क की पटरियों पर खड़ा यह अनोखा नाटक देख रहा था और देश के भविष्य को सोच-सोचकर दुःखी हो रहा था।

लगभग साठ-सत्तर व्यक्ति गिरफ्तार किये गए थे जिनमें आधे से अधिक दूसरे दिन ही छोड़ दिये गए थे। उमेश ने अपने भैया के पास समाचार भिजवा दिया था कि वह किसी भी शर्त पर बाहर आने को तैयार न होगा। इसलिए उसकी रिहाई की कोशिश न की जाए। वह सज़ा काटकर ही बाहर आएगा। उमेश के भैया को विवश होकर चुप हो जाना पड़ा।

दो दिन वीते, चार दिन वीते और सप्ताह भी समाप्त होगया। कोई सुनवाई नहीं जब कि त्रिपाठीजीजैसा व्यक्ति जेल में था। लगभग डेढ़

सप्ताह बाद जेलमंत्री के वैयक्तिक सचिव आये और घण्टों त्रिपाठीजी से बातचीत करते रहे, उन्हें बड़ा खेद था। खैर, तुरन्त कलक्टर के विरुद्ध उचित कार्यवाही और रिहाई का आश्वासन देकर चले गए, परन्तु उनके पास यही एक काम तो था नहीं। पूरे प्रान्त की जिम्मेदारी थी। और भी अहम मसले थे। लगभग एक सप्ताह और समाप्त होगया, लेकिन रिहाई का परवाना नहीं आया।

दो दिन और बीते तब कहीं परवाना आया। सब छोड़ दिये गए। बहुत एहसान किया गया। उमेश ने उसीदिन से खादी-वस्त्र धारण करना वन्द करदिया।

४३

बिन्दापांडे पर कत्ल, डाके, राहज़नी, चोरी आदि-आदि के सौ-दो सौ मुकदमे आयद किये थे और वर्षों मुकदमा चलता रहा था। तारीख के दिनों कचहरी में हज़ारों की भीड़ इकट्ठी होती थी। बड़ी सनसनी रहा करती थी। सभी को उत्सुकता रहा करती थी। मुकदमा चलता रहता। पुलिस ने कोई कसर उठा न रखी, परन्तु कहीं कोई सबूत हो तो? न तो बिन्दापांडे कभी कत्ल करते हुए पकड़ा गया और न चोरी-डाके डालता हुआ। केवल मुँह के कहने से तो कुछ हो नहीं सकता था। कोर्ट के लिए प्रामाणिक प्रमाण की आवश्यकता होती है। पूरी तरह से प्रयत्न करने पर भी पुलिस असफल रही। बिन्दापांडे के वकील ने बिन्दा को छुड़ा लिया—बेदाग छुड़ा लिया। पुलिस के पक्ष से कुछ भी साबित न हो सका।

प्रसन्नता की लहर फैल गई। बिन्दापांडे की जयजयकार होने लगी। बनारस में एक बहुत बड़ी सभा हुई, जिसमें लाखों की संख्या में लोग उसे देखने आए। हफ्तों नगर में उसका स्वागत सत्कार होता रहा। अब वह

गाँववाला गँवार बिन्दा, नेता बिन्दापांडे हो गया था। यहाँ से फ़ुरसत मिलने पर बिन्दा गाँव लखनपुर आया। आने की सूचना पहले से दे रखी थी। सैंकड़ों किसान स्टेशन पर उसे लेने आए थे। उनमें बिन्दा के ससुर भी थे। बिन्दा ने गाड़ी से उतरते हुए अपने ससुर के पैर छुए। वृद्ध गले से चिपटा कर रोने लगा।

लखनपुर में एक अनोखा वातावरण फैला हुआ था। दरवाज़े पर दस-बीस लोग बिन्दा को घेरे बैठे हुए थे। दो-चार आ रहे थे और दो-चार जा रहे थे। बड़ी मुश्किल से बिन्दा को नहाने और खाने की फ़ुर्सत मिली तदुपरान्त फिर वही जमघट। यद्यपि स्टेशन पर ही बिन्दा ने गाँव का कुशलक्षेम पूछते समय बड़ी चतुराई से रधिया के विषय में जानकारी प्राप्त कर ली थी और यह सुनकर हृदय को संतोष मिला था कि वह अच्छी तरह है। परन्तु दिनभर का समय बीत जाने पर भी जब रधिया उधर से आती-जाती दिखलाई नहीं पड़ी तो उसे चिन्ता होने लगी। कारण क्या है, वह समझ नहीं पा रहा था। जैसे-तैसे संध्या हुई। जमघट में कमी आई। तब भी पाँच-सात बैठे ही थे। भोजन का समय आया। बिन्दा ने सबको जाने के लिए कहा।

रात के सन्नाटे में बिन्दा भिखारीबाबा वाले बरगद के नीचे बैठा रधिया की प्रतीक्षा करने लगा। उसे विश्वास था कि रधिया उससे मिलने यहाँ अवश्य आएगी। काफी समय बीत गया। रधिया नहीं आई। बिन्दा बैठा रहा। उसने निर्णय कर रखा था कि जब तक रधिया नहीं आएगी वह यहाँ से उठ नहीं सकता। थोड़ी देर बाद सामने आम के बाग में पत्तियाँ खड़खड़ाईं। बिन्दा ध्यानपूर्वक देखने लगा। किसी की आकृति हिलती नज़र आई। कुछ समीप आने पर वह आकृति वस्त्रों से ढकी हुई किसी स्त्री की प्रतीत हुई। बिन्दा का मन खिल उठा। रधिया के अतिरिक्त और कौन हो सकता था? आकृति और समीप आई। वह रधिया ही थी। वह उठकर खड़ा होगया और धीरे-धीरे उधर को बढ़ा। दोनों एक दूसरे के समीप आ गए। बिन्दा ने बढ़कर उसे अंक में भर लिया। रधिया उसके सीने से चिपटकर सिसकने लगी। यह ख़ुशी की रुलाई थी।

कुछ समय उपरान्त जब दोनों बैठकर एक-दूसरे को निहारने लगे तो

बिन्दा के नेत्रों से टप-टप करके आँसू गिर पड़े। रधिया बिन्दा के शोक में सूखकर काँटा होगई थी। बिन्दा बोला, "तुमने मेरे लिए बहुत दुख उठाए।"

"तभी तो आज यह सुख देखने को मिला है।" उसने अपने आँचल से बिन्दा की आँखें पोंछी, "छिः, इसमें रोने की क्या बात है? दुख में तन्दरुस्ती बिगड़ जाती है और सुख में बन जाती है। देखना, अब महीनेभर में फूल कर कुप्पा हो जाऊँगी।" वह तनिक मुस्कराई, "सुना, आज दिनभर तुम्हें दम मारने की फुर्सत नहीं मिली?"

बिन्दा ने सिर हिलाया।

"तो अब मैं भी तुम्हें घण्टे-दो घण्टे दम मारने की फुरसत नहीं दूँगी। जबसे पकड़े गये हो और आज तक की सारी कहानी सुनूँगी और एक-एक करके सुनूँगी। चलो सुनाओ।"

बिन्दा ने दूसरी बात चलाई, "मैं कल तुम्हारे बाबू से मिलकर विवाह की बात चलाऊँगा। ठीक है?"

जैसे लड़कियों को कहना चाहिए उसी प्रकार उसने भी कह दिया, "अभी जल्दी क्या है, फिर बात कर लेना।"

"नहीं, जल्दी है। अब इस प्रकार मिलना-जुलना ठीक नहीं है। तुम्हें भी अब बहुत डरने की आवश्यकता नहीं। लोग इस विवाह का विरोध तो करेंगे ही।"

"इसकी चिन्ता हमें नहीं है।"

बिन्दा ने उसके कपोलों को थपथपाया, "बड़ा साहस आगया है? अच्छा अब जाओ सोओ। मैं बहुत थका हूँ। उठो।" उसने रधिया का हाथ पकड़कर उठाया। कल दोपहर को तुम्हारे बाबू से बातें करने आऊँगा। तुम घर में ही रहना।"

"क्या अकेले में डरते हो?"

"हाँ। अब अकेले में डर लगने लगा है।" वह हँसने लगा।

रधिया जीभ बिराती हुई चली गई। उसने आज-जैसा उल्लास कभी नहीं अनुभव किया था। यहाँ तक कि उसे सुहागरात वाले दिन भी इस प्रकार के आनन्द का भास नहीं हुआ था। वह चुपके से आकर अपनी

खटोली पर लेट गई और स्वर्गिक कल्पनाओं का सुख लूटने लगी। थोड़े समय बाद कल्पनाएँ स्वप्न में परिवर्तित होगई और फिर वह बिन्दा के संग-संग विहार करती हुई किन-किन अनोखे और ऐश्वर्यपूर्ण स्थानों में विचरती रहीं, कहना कठिन है।

सवेरे लखनपुर गाँव में कुहराम मचा हुआ था। जो सुनता वही रधिया के घर दौड़ता हुआ चल देता। रधिया करवट लिए अपनी खटोली पर सोई थी, परन्तु प्राण-पेखेरू निकल गये थे। महान आश्चर्य था। जो देखता वही दाँतों तले उँगली दबाकर रह जाता।

बिन्दा तनिक देर तक सोता रहा था। वह उठा और लोटा लेकर चलने ही वाला था कि सामने से उसके ससुर आगये और उन्होंने दुखभरे शब्दों में रधिया के आकस्मिक मृत्यु की बात बतलाई। बिन्दा को जैसे अपने कानों पर विश्वास न हुआ हो, "क्या ?" उसने पूछा।

"वह सोती रही और उसकी आत्मा निकल गई।"

बिन्दा के नेत्रों के सामने अँधेरा छा गया। उसे ऐसा लगा कि वह गिर पड़ेगा। उसने अपने को सम्भाला और सिर पर हाथ फेरता हुआ बैठ गया।

कब कौन किससे छूट जाए कुछ कहा नहीं जा सकता।

× × ×

हरनाथ की बड़ी इच्छा होती कि वह रंजना के संग-संग चाँदनी रातों में हाथ-में-हाथ डाले घूमा करे। उसकी यह भी इच्छा होती कि वह जमुना पर तैरती हुई नौका में बैठा प्रेममदिरा का पान किया करे। कभी रंजना को मोटर में बिठलाकर घूमने की तबीयत होती तो कभी सिनेमा और रेस्ट्राँ में बैठकर खाने-खिलाने की। तात्पर्य यह कि वह अधिक-से-अधिक जवानी की उठती हुई उमंगों की पूर्ति के हेतु लालायित हो उठा था। लालायित होना स्वाभाविक था। रंजनाजैसी युवती का प्यार पाकर कौन युवक इन आनन्दों से वंचित रहना पसन्द करेगा और फिर जिसके पास सारे साधन हों। परन्तु दुर्भाग्य यह था कि हरनाथ कुछ भी नहीं कर पा रहा था। सचमुच का पुलाव पकाने के समय वह बगलें झाँकने लगता था। वह रंजना से खुलकर कुछ भी नहीं कह पाता था यद्यपि भेंट नित्य होती थी। मंगलवार और बुधवार को तो घंटों हँसी दिल्लगी भी हुआ करती थी।

रंजना उसे अधिक-से-अधिक बढ़ावा देकर आगे बढ़ने को प्रोत्साहित भी करती थी, किन्तु हरनाथ बिल्कुल घोंघा का घोंघा ही बना रहता। वह आजकल-आजकल करता रहा। परीक्षा के दिन आगये। पढ़ाई होने लगी। मामला खटाई में पड़ गया। कल्पना केवल कल्पना ही रह गई।

हरनाथ ने सोचा—परीक्षा समाप्त होने पर वह अपने अरमानों की पूर्ति करेगा। अब वह साहसी बनेगा और रंजना को भी साहसी बनायेगा। यदि रंजना हिचकेगी तो वह साफ-साफ कह देगा कि वह उसे जीवन-संगिनी बनाने के लिए कटिबद्ध हो चुका है। वह उसे अपने से अलग नहीं देख सकता है। वह उसकी है और उसी की होकर रहेगी। परीक्षा समाप्त हुई। तीसरे दिन हरनाथ रंजना के घर पहुँचा। परन्तु बातों के दौरान में जब यह बताया गया कि सब लोग दो-तीन दिन के अन्दर गाँव जा रहे हैं तो उसका मन बैठ गया। "आना कब तक होगा?" उसने पूछा।

"छुट्टियों बाद। पापा ने दो मास की छुट्टी ले ली है।" रंजना ने बताया।

"तब?"

रंजना मुस्कराई, "तब क्या?"

"आप से···।"

"छुट्टियों बाद ही भेंट हो सकेगी।"

"पत्र डालिएगा?"

"मुश्किल है। फिर भी प्रयत्न करूँगी।"

तब तक रंजना के पिता आगये। बातों का क्रम बदल गया। हरनाथ के दिल की दिल में ही रह गई।

अपने विद्यार्थी-जीवन में उमेश के भैया अर्थात् सहायबाबू फुटवाल के बड़े अच्छे खिलाड़ी थे। एक वार उन्हें मैच खेलने जाना पड़ा था। मैच बड़ा तनातनी का था। टिकट होने के बावजूद भी लोगों को खड़े होने की जगह नहीं थी। मैच आरम्भ हुआ। पटनावाली टीम हारने लगी। कई गोल हो गए। जब जीतने की कोई आशा नहीं रही तो खिलाड़ियों ने बदमाशी शुरू कर दी। फाउल पर फाउल होने लगे। सम्भवतः पटना के खिलाड़ियों ने तय कर लिया था कि आई हुई टीम का कोई खिलाड़ी कुशलपूर्वक घर न लौट सके। खेल चलता रहा। कई खिलाड़ियों को चोट आगई थी। पटनावाले बैककीपर ने बाल मारा। सहायबाबू हेड लगाने के लिए उछले। विरोधी खिलाड़ी ने उनके पैर में लंगड़ी मार दी। वह गिरे और दुर्भाग्यवश उनके चूतड़ के नीचे एक कंकड़ पड़ गया जिसके कारण उन्हें बड़ी चोट आई। वह जैसे-तैसे अन्त तक खेलते रहे।

लौटकर आने पर चोट ने फोड़े का रूप धारण कर लिया और इतना भयंकर रूप धारण किया कि वह खाट पर पड़ गए। दवा होने लगी। फोड़ा बढ़ता ही गया। आपरेशन पर आपरेशन हुए। उनकी दशा शोचनीय होगई। पिता ने पानी की भाँति रुपया बहाया। भगवान की कृपा से कुछ हालत सम्भली और लगभग डेढ़ वर्ष बाद उन्हें स्वास्थ्य लाभ हुआ। यद्यपि फोड़ा ठीक हो गया था, परन्तु वर्ष-दो वर्ष में जब-तब उभर आया करता था जो दो-चार दिनों की मरहम पट्टी में ठीक हो जाया करता था। यह उभरने वाला क्रम बराबर चलने लगा। और पुनः इस वर्ष भी वह उभर आया था।

उमेश, गर्मी की छुट्टी में गाँव चला गया था। सहायबाबू ने तार देकर उसे तत्काल बुला लिया। उमेश कानपुर आगया और उनकी सेवा-सुश्रूषा करने लगा। कोई चिन्ता की बात नहीं थी। परन्तु सहायबाबू ने डाक्टर

से यह अवश्य कहा था कि बार-बार की परेशानी से छुटकारा पाने के लिए इस बार उन्हें जमकर इलाज करना होगा। वह इस फोड़े से बहुत ऊब चुके हैं। डाक्टरसाहब ने उन्हें ऐसा ही आश्वासन दिया। इलाज चलता रहा किन्तु होनेवाली बात, फोड़ा घटने के स्थान पर बढ़ने लगा। कुछ दिनों बाद उन्हें ज्वर भी आने लगा। टट्टी की शिकायत अलग रहने लगी। दूसरे, तीसरे और चौथे डाक्टर को दिखलाया गया। रोग हाथ में आया। फोड़ा अच्छा होने लगा। बुखार उतर गया। पथ्य दिया जाने लगा। लगभग महीने-भर बाद वह खाट से उठकर कमरे और सहन में टहलने के योग्य हो सके। घर में फैली हुई उदासी दूर हुई।

होनहार प्रबल है। अनायास एक दिन पुनः उन्हें बुखार आगया। दवा आई। ठीक होगया। पुनः आगया। इस बार चार-छः दिनों तक रहा। पेट की शिकायत बढ़ गई। बुखार उतरने-चढ़ने लगा। खाना-पीना बन्द होगया। उन दिनों डॉक्टर मुकर्जी का बड़ा नाम था। सहायबाबू को भी उनपर विश्वास था। दवा उन्हींकी होने लगी। उनके कथनानुसार सहायबाबू को केवल पेट की शिकायत थी। उसे ही दूर करने की आवश्यकता थी। मुकर्जी महोदय पेट की दवा करते रहे। सयायबाबू की कमज़ोरी बढ़ती गई। बहुत बढ़ गई। इतनी बढ़ गई कि उनके लिए खाट पर उठना-बैठना मुश्किल होगया। परिवारवालों की चिन्ता बढ़ गई। दूसरे डॉक्टरों को दिखलाया गया। उन लोगों ने देखते ही सर्वप्रथम एक्स-रे की राय दी। तत्काल घर पर एक्स-रे कराया गया। सहायबाबू के फेफड़े में पानी आगया था। प्लूरिसी होगई थी।

सूई द्वारा पानी निकालने के अतिरिक्त और कोई रास्ता नहीं था, परन्तु डॉक्टरों को सन्देह था कि वह उतने कमज़ोर हो चुके थे कि शायद पानी निकालते ही हार्ट फेल हो जाने की सम्भावना थी। परन्तु विवशता थी। पानी निकालना अनिवार्य था। जबतक साँस तबतक आस वाली बात थी। पहले दिन पानी निकाला गया और दूसरे दिन पानी निकलते ही सहायबाबू कोलैप्स कर गए। जीवन-लीला समाप्त हो गई। परिवार पर पहाड़ टूट पड़ा। हाहाकार मच गया।

उमेश के जीवन में पुनः परिवर्तन आया। उसे पढ़ाई बन्द करनी पड़ी।

उसे दो बहिनों की शादी करनी थी। छोटे भाइयों को आगे पढ़ाना था। वह नौकरी की तलाश में दौड़ने लगा। यह है परिस्थितियों का चक्कर। गल्ला विभाग में कुछ इन्स्पेक्टरों की जगहें खाली हुई। उमेश ने दरख्वास्त दी और इधर-उधर सिफारिश के लिए दौड़ लगाने लगा, क्योंकि बिना सिफारिश के नौकरी मिल नहीं सकती थी। प्रभु की कृपा से उसका काम बन गया। उसे नौकरी मिल गई और पन्द्रह-बीस दिनों की ट्रेनिंग के उपरान्त उसे महोबा का मार्केटिंग इन्स्पेक्टर बनाकर भेज दिया गया।

सुख के बाद दुख और दुख के बाद सुख, यह है इस संसार का चक्कर। कहीं कोई बनकर बिगड़ गया है तो कहीं कोई बिगड़कर बन रहा है। कोई मर रहा है तो कोई जन्म रहा है। कोई रो रहा है, और कोई गा रहा है। हर चीज़ बदल रही है। स्थिरता कहीं नहीं है। कन्ट्रोल होने के कारण उन दिनों गल्ला-विभाग में रुपया पानी की भाँति बरस रहा था। बेहद घूस चल रही थी। एक इन्स्पेक्टर के लिए दो-चार साल में पचीस-पचास हज़ार रुपया कमाना मामूली बात थी। उमेश को इसकी जानकारी थी, परन्तु घूस लेना पाप समझकर वह इधर की ओर आकृष्ट नहीं हो रहा था। वह महोबा में बड़ी ईमानदारी से काम करने लगा, किन्तु 'काजल की कोठरी में कैसोहु सयानो जाए, एक लीक लागिहें पै एक लीक लागिहें' यथार्थ को वह असत्य कैसे सिद्ध कर सकता था ?

काम में सख्ती और ईमानदारी होने के कारण लोगों का बड़ा नुकसान होने लगा था। फलतः कानपुर में पता लगाकर उमेश पर इधर-उधर से दबाव डाले गये और रक़म की थैली पहले से दुगनी कर दी गई। उमेश ने सोचा-विचारा। कई रातें खराब कीं और अन्त में इसी निष्कर्ष पर पहुँचा कि जब हर तरफ़ लूट मची हुई है तो वह अकेला महात्मा गांधी बनकर कौन-सा तोप मार लेगा। जब अवसर मिला है तो घर की स्थिति क्यों न सुधारी जाए ? यह भी करना उतना ही आवश्यक है जितना घूस न लेना। उसने ईमानदारी ताख में रखी और घूस लेना आरम्भ किया। लक्ष्मी अपनी माया दिखलाने लगीं। रुपया बरसने लगा। सहायबाबू की मृत्यु से जो आपत्ति आई थी, वह वैसे ही गायब होगई जैसे गधे के सिर से सींग। उमेश के परिवार में नई चहल-पहल दौड़ गई। सुख-ही-सुख होगया।

रुपया वरसता रहा। वहनों की शादियाँ हुईं और बड़ी धूमधाम से हुईं। समाज में, गाँव-घर में पहले जैसी प्रतिष्ठा पुनः स्थापित होगई। अव उमेश के विवाह के लिए दौड़-धूप होने लगी, परन्तु जैसे वह पहले नाहीं किया करता था, वैसे अव भी उसने नाहीं कर दी।

वर्षों वाद पुनः हृदय के कोने में ख्यातिवान बनने की आकांक्षा जागृत हो उठी। उसके मस्तिष्क में आया—लक्ष्मी चलायमान है। आज है कल नहीं। इसका कोई भरोसा नहीं। उसे तो जीवन में कुछ ऐसा करना चाहिए, जिससे वह अमर हो सके। मरने के बाद उसे लोग याद करते रहें। यों मच्छरों की भाँति जन्म लेकर भुनभुनाते हुए मर जाने से क्या लाभ? उसके पास समय है। वह लिख सकता है और सम्भव है उसकी लेखनी उसे इस योग्य बना सके कि उसकी प्रतिष्ठा प्रेमचन्द और शरत् बाबू की भाँति प्रतिष्ठित हो जाए। उसने लिखना आरम्भ कर दिया। वह नित्य बड़ी रात गये तक अपनी लेखनी के साथ उलझने लगा।

जब लिखने वाली प्रकृति जागी तो लेखकों वाली मनोवृत्ति का भी जागृत होना स्वाभाविक था। अब वह जब-तब शाम का समय निकालकर नगर से लगी हुई पहाड़ियों पर चला जाता और घण्टों उनके शिखरों पर बैठकर प्रकृति के सुन्दरतम रूप को नेत्रों में उतारा करता। कभी-कभी भावनाओं के वशीभूत होकर वह गुनगुनाने भी लगता और इस गुनगुनाहट के बीच जो पंक्ति निकलती, वह तत्काल किसी कविता या नज़्म में परिवर्तित हो जाया करती थी। उमेश को प्रारम्भ से ही उर्दू शायरी के प्रति रुचि थी। धीरे-धीरे उमेश की लिखने वाली मनोवृत्ति बढ़ती गई और जिस दिन उसने डेढ़ सौ पृष्ठ लिखकर अपना प्रथम उपन्यास समाप्त किया, उस दिन उसे कौन सी निधि मिल गई थी कहना कठिन है। उसका मन फूला नहीं समा रहा था और जब वह अपने दफ्तर के किसी काम से कानपुर आया तो अपनी पाण्डुलिपि साथ लेता आया, तथा बड़े गर्व सहित अपने मित्रों एवं परिचितों को दिखलाता घूमता रहा। यद्यपि उसके उपन्यास में वहुत बचकानापन था जिसका अनुभव उसे वर्षों वाद हुआ था, परन्तु उस समय तो उसी पर उसे नाज़ था और यह स्वाभाविक भी था।

उसके उपरान्त तुरन्त उसने दूसरा उपन्यास लिखना आरम्भ कर

दिया। उसे तो लिखने का अब भूत सवार हो गया था। पर उसी बीच उसके तबादले का हुक्म आगया और वह महोबा से मौदहा चला आया। मौदहा में गल्ले की बहुत बड़ी मण्डी थी, इसलिए यहाँ का दफ्तर भी बड़ा था। यहाँ एक सीनियर इन्स्पेक्टर, एक इन्स्पेक्टर, एक असिस्टेण्ट इन्स्पेक्टर, कामदार, पल्लेदार और कई चपरासी थे। चौधरी भारतसिंह सीनियर इन्स्पेक्टर थे जो खाने-पीने में बड़े शौकीन थे। शीघ्र ही उमेश की उनसे पटने लगी और दोनों घुल-मिल गए। दफ्तर का स्थान बहुत बड़ा मकान था, जिसमें नीचे कार्यालय और ऊपर चौधरीसाहब रहा करते थे। चौधरी-साहब ने उमेश को भी अपने साथ रख लिया। उनकी बीवी अधिकतर देहात में रहती थी। उन्हें साथ-साथ चौधरीसाहब कम रखते थे और इस साथ न रखने की वजह उसकी कुरूपता थी जो बाद में चौधरीसाहब ने उमेश से बतलाई।

उमेश न तो किसी प्रकार की मादक वस्तुओं का सेवन करता था और न गोश्त, मछली खाता था। यहाँ तक कि पान खाना भी वह गुनाह समझता था, किन्तु 'सोसाइटी मेक्स ए मैन परफेक्ट' वाली कहावत असत्य तो है नहीं। नित्य संध्या समय जब चौधरीसाहब की बोतल खुलती तो वह उमेश को भी आमन्त्रित करते और घण्टों शराब की खूबियों पर उसे लेक्चर पिलाया करते। कभी-कभी नशा चढ़ने पर वह ज़बर्दस्ती करने पर आमादा हो जाते और बड़े रूखे शब्दों में कहने लगते, "अमा यार, बिना शराब पिये कोई बड़ा आदमी नहीं बन सकता है और फिर तुम्हारे लिए तो बहुत ही ज़रूरी है। किसी राइटर या पोइट का नाम बताओ जो पीता न हो? बिना पिये कलम में जान डालने वाली ताकत आ ही नहीं सकती है।"

उमेश मुस्कराता हुआ उनकी हाँ में हाँ मिलाकर बात को टाल देता, लेकिन यह टालमटोल बहुत दिनों तक नहीं चल सकी और एक दिन चौधरी-साहब ने उमेश को पिला ही दी। बाँध टूट गया, जब एक दिन पीली तो दूसरे दिन पीने में क्या आपत्ति? दूसरे दिन भी पी और फिर तीसरे, चौथे दिन भी पी। उमेश का चस्का बढ़ गया और धीरे-धीरे बढ़ता ही गया। दोनों की छनने लगी और नित्य संध्या के आते ही दोनों कह उठते, "साक़ी शराब पीने दे मस्जिद में बैठकर, या वह जगह बता दे खुदा हो जहाँ नहीं!"

जहाँ मय और मयखाना हो वहाँ महबूबा न हो, असम्भव है। उसकी कमी बर्दाश्त नहीं की जा सकती, उसका होना आवश्यक है। यह उमेश जानता था कि रात की निस्तब्धता बढ़ने पर चौधरीसाहब के पास कोई-न-कोई औरत आ जाया करती थी और इस तरह का प्रबन्ध करने वाला उनका चपरासी नन्दू था, जो वहीं का रहने वाला था। अतः एक रात जब शराब का दौर चल रहा था, तो मस्ती में झूमता हुआ उमेश बोला, "चौधरीसाहब, आपकी एक ज़्यादती अब मुझसे सही नहीं जा रही है।"

"ज़्यादती, कैसी ज़्यादती ?" चौधरीसाहब को आश्चर्य हुआ।

"अब इसे भी समझाना पड़ेगा। रात···।"

चौधरीसाहब ठट्टा मारकर हँस उठे, "समझ गया, जनाब बिल्कुल समझ गया। तुम तो रँगे स्यार निकले। कहाँ बिल्कुल साधु थे अब बिल्कुल स्वादू हो गए।" उन्होंने आवाज़ दी, "नन्दू।'

"जी सरकार।" नन्दू अन्दर आया।

"इन्स्पेक्टरसाहब के लिए भी इन्तज़ाम होना है। बहुत मुलायम चीज़ हो। बिल्कुल इनकी तरह। समझ गए।"

"जी।"

"हो जाएगा न ?"

"हो जाएगा, लेकिन सरकार कल से।"

"हाँ-हाँ, कल से। जाओ।"

वह चला गया।

चौधरीसाहब ने उमेश की तरफ देखा, "अगर जाटोंवाला टेस्ट करना हो तो वह आज रात में भी हो सकता है।" चौधरीसाहब जाट थे।

उमेश नाहीं करता हुआ हँसने लगा।

४५

रंजना ने अपने गाँव से हरनाथ को कोई पत्र नहीं भेजा था। हरनाथ की प्रतीक्षा निराशा में परिणित होगई थी और फिर बड़ी मुश्किलों से जैसे-तैसे छुट्टी काटी गई थी। विश्वविद्यालय खुला। रंजना सपरिवार आई और तत्काल नहा-धोकर विश्वविद्यालय पहुँची। उसे भी तो चैन नहीं था। घंटे-डेढ़ घंटे के भीतर प्रोफेसर और सहेलियों से मिलकर वह म्योर कालेज को लौट पड़ी। हरनाथ अब आगया होगा—ऐसा अनुमान उसने लगा लिया था।

उसने कालेज में हरनाथ को इधर-उधर ढूँढ़ा। पता न चला। तब उसने दो-एक लड़कों से पूछा। मालूम पड़ा उसका क्लास चल रहा है। वह लाइब्रेरी में चली गई और घंटा बजने तक पत्रिकाएँ उलटती रही। घंटा बजा। वह बाहर आई और बरामदे में एक ओर खड़ी होगई। हरनाथ कहकहे लगाता मित्रों के संग क्लास से निकला। तब तक उसके साथियों में किसी की नज़र रंजना पर पड़ गई। उसने हरनाथ के हाथ को दबाया, "अबे सामने देख सामने। तेरी इन्तज़ारी होरही है। खूब चूजा तुमने भी फाँसा है प्यारे।"

हरनाथ ने देखा और आगे बढ़ गया। अन्य लड़के तनिक शिष्टता बरतते हुए एक किनारे से निकल गए। रंजना ने हाथ जोड़े। हरनाथ ने भी नमस्ते किया, "कब आईं आप? मैं कल शाम को आपकी तरफ गया भी।" हरनाथ के नेत्र अपनी प्यास बुझाने में लग गए।

"आज सवेरे आई हूँ। चलिए, उधर ही बैठेंगे। आपका कोई घंटा तो नहीं है?" दोनों बरामदे से होते हुए इमली की ओर चल पड़े।

"जले पर नमक डालकर ही तो किसी को तड़पाने में मज़ा है। अब आप नहीं ऐसा कहेंगी तो और कौन कहेगा?"

रंजना हरनाथ के मुँह को निहारने लगी। "बड़ा क्रोध है। लीजिए दो-चार थप्पड़ मार लीजिए। सिर झुकाऊँ?"

हरनाथ के होठों पर मुस्कराहट फैल गई और वह भी उसकी आँखों में आँखें डालकर देखने लग गया।

"मुझे क्या देख रहे हैं ?" रंजना के पूछने में विशेष भाव था।

"क्यों ? अब देखने पर भी रोक लगा दी गई है ? अभी तर्क तो पत्रों पर ही थी।"

रंजना हँसी, "अन्त में कह डाला ही गया, रोके नहीं रुका। इन्हीं उतावलेपनों के कारण तो स्त्रियाँ पुरुषों पर अपना रंग जमा लेती हैं वरना उनमें और कौनसी विशेषता है।" दोनों इमली के नीचे पहुँच गए थे, "बैठिए।" वह बोली।

हरनाथ बैठ गया। रंजना भी बैठ गई।

"पापा का ट्रान्सफर होगया है।"

"ट्रान्सफर होगया ! कहाँ !!"

"दिल्ली।"

हरनाथ के चेहरे पर उदासी की छाया फैल गई, "बड़ा गड़बड़ होगया। अब आपकी पढ़ाई का क्या होगा ?"

"क्या बताया जाए ? सम्भवत: भाग्य में बदा नहीं है। एक साल पहले खराब हो चुका है और··· ।"

"मगर आप तो यहाँ भी रह सकती हैं।" हरनाथ की खिन्नता अधिक बढ़ गई थी, "बेकार साल खराब करने से फायदा।"

"फायदा तो नहीं लेकिन पापा को कौन समझाए ? वह इस मामले में बड़े स्ट्रिक्ट हैं अन्यथा मैं तो आपके ही घर रह जाती।"

"बिल्कुल। कहिए तो आज शाम को आपके पापा से बात करूँ ?"

"यूज़लेस है।" उसने मुँह बिचकाया, "ममी ने कहा था, लेकिन उन्होंने नाहीं कर दी। उनको सन्देह है कि हमारी आपकी घनिष्ठता बढ़ने पर कहीं··· ।"

"तो क्या हुआ ? अगर ऐसा होता भी है तो उनका नुकसान क्या है ?"

"नुकसान और फायदा से मुझे क्या मतलब, लेकिन दुख यही है कि

आपके यहाँ रहने से उन्होंने इन्कार कर दिया है।" रंजना गम्भीर बनी हुई थी।

"और होस्टल में रहने के लिए ?"

"कहा था पर उसके लिए भी इन्कार करते हैं।"

"क्यों ?"

"कोई कारण होगा। मैं जहाँ तक अनुमान लगाती हूँ, उन्हें आपको लेकर मुझ पर सन्देह होने लगा है। मुझे अकेला इलाहाबाद नहीं छोड़ना चाहते।"

"तो क्या दिल्ली अमरीका है ? मैं वहाँ भी तो पहुँच सकता हूँ। और वैसे भी इस प्रकार की रोक-थाम कहाँ तक चल सकती है ?"

"चल तो नहीं सकती पर मैं भी अब सोचती हूँ कि जिस काम में पेरेन्टस् को आपत्ति हो उसे नहीं करना ही लाभकर होता है। हम लोगों का एक-दूसरे से अलग होजाना ही उचित है।"

हरनाथ के काटो तो खून नहीं। वह क्षणभर तक रंजना को अवाक् देखता रह गया था फिर गर्दन झुका ली। उसका चेहरा रुआँसा हो आया था। हृदय कचोटने लगा था। वह धीरे से बोला, "आपने सही सोचा है। चतुर लोग ऐसा ही करते हैं।" वह तनिक रुका, "आप युनिवर्सिटी जा रही हैं या घर ?"

"घर, क्यों ?"

"घंटा बोलने वाला है। यह क्लास अटेन्ड करना हमारे लिए बहुत आवश्यक है। अब उठिए।" वह रंजना के उठने के पहले ही खड़ा होगया।

रंजना बड़ी ज़ोरों से हँस पड़ी और कुछ देर तक हँसती रही। हँसी रुकने पर बोली, "बैठिए तो सही। आप तो आपे से बाहर होगए। मैं दिल्ली नहीं जा रही हूँ। आप ही के यहाँ रहूँगी।"

हरनाथ के अब समझ में आया कि रंजना ने उसे बुद्धू बनाया है। वह शर्म के मारे पानी-पानी होगया। वह बैठ गया और आँखें तरेरता हुआ बोला, "मेरा भी अवसर आयेगा तब मैं पूछूँगा।"

रंजना पुनः टहलने लगी और हरनाथ के टोन में बोली, "घंटा बजने वाला है। यह क्लास अटेन्ड करना हमारे लिए बहुत आवश्यक है।" और

वह फिर हँसने लगी।

हरनाथ क्या कहता ? चुपचाप उसे देखता रहा। रंजना की लावण्यता इस समय अधिक बढ़ गई थी।

"आज या कल शाम को घर आइएगा। पापा अगले सप्ताह में चले जाएँगे। मैं दो-एक दिन के भीतर होस्टल में शिफ्ट कर जाऊँगी। आज आइएगा या कल ?"

"जिस दिन कहिए। मैं तो आज कल दोनों दिन आ सकता हूँ।"

"तो दोनों दिन आइए। आपकी तबीयत पर है। घर आपका है। अब मुझे जाने की आज्ञा है ?" उसने प्यार भरे नेत्रों से देखा और खड़ी होगई।

दोनों अलग हो गए।

× × ×

रंजना के पापा दिल्ली चले गए। रंजना होस्टल में रहने लगी। अब दूसरे-तीसरे संध्या समय सिविललाइन्स में हरनाथ और रंजना की भेंट होने लगी। जीवन का आनन्द आने लगा। कभी कॉफी-हाउस में बैठकर तो कभी सुनसान सड़कों पर टहलकर एक-दूसरे में मिल जाने की मनोरंजक बातें होने लगीं। परन्तु वक्त की पाबन्दी के कारण बच्चों द्वारा निर्मित बालू के घर के समान नित्य अरमान बनते और नित्य ढह जाया करते थे, किन्तु इस नित्य के निर्माण में भी तो अवर्णनीय आकर्षण और आनन्द था। यह विरलों को ही प्राप्त होता है।

एक दिन शाम को टहलते हुए हरनाथ ने प्रस्ताव रखा, "कल छुट्टी है। किसी तरह होस्टल से दिनभर की परमीशन नहीं मिल सकती ?"

"क्यों ?"

"आपको शहर से बाहर किसी गाँव में ले चलकर जामुन खिला लाते।"

"ऊहूँ ! मैं नहीं जा सकती। योंही बड़ी बदनामी है। अगर किसी ने मोटर में जाते देख लिया तो और भी आफत आजाएगी।"

"इसमें क्या आफत आती है ? क्या कोई पाप कर रहे हैं ?"

"पाप नहीं तो पुण्य कर रहे हैं। जिस काम के करने में भय है वह पाप तो हुआ ही।"

हरनाथ अनायास उसका हाथ पकड़कर खड़ा होगया, "देखो, मैं तुमसे बहस तो करता नहीं पर इतना अवश्य कहूँगा कि कल तुम्हें दिनभर साथ रखने की बड़ी इच्छा है। मैं...।"

"हाथ तो छोड़िए। यह क्या तरीका?" उसने हाथ खींचना चाहा।

"तरीका हो या बेतरीका मैं हाथ नहीं छोड़ सकता जब तक तुम कल के लिए हाँ न कह दो।"

"मैं हाँ नहीं कहूँगी।"

"तो मैं भी नहीं छोड़ूँगा।"

रंजना ने उसकी आँखों में आँखें डालीं, "छोड़िए।"

"बिल्कुल नहीं। पहले हाँ कहो।"

रंजना विवश हो गई, "अच्छा कल आऊँगी। बस?"

"नहीं मेरी सौगन्ध खाओ।"

"जी नहीं। सौगन्ध खाने का क्या मतलब?"

"न खाओ। जब गरज़ मालूम पड़े तो खा लेना।"

"बड़े ज़िद्दी हैं आप?"

"बिना ज़िद किए कोई काम नहीं होता।"

रंजना को सौगन्ध खानी पड़ी, "अब तो छोड़िए।"

हरनाथ मुस्कराया, "कहाँ आइएगा?"

"मैं क्या जानूँ कहाँ आना है?" उसने मुँह लटका लिया।

"कम्पनी बाग में सवेरे साढ़े आठ बजे।" हरनाथ ने हाथ छोड़ दिया।

"अब आप जाइए। मैं इधर से चली जाऊँगी।"

"अभी तो समय है।"

"नहीं। आप जाइए। कोई आरहा है। नमस्ते।" रंजना आगे बढ़ गई।

दूसरे दिन सवेरे आकाश में बादलों की जमघट अधिक थी। पानी बरसने का भय था। परन्तु प्रेम के संसार में विचरण करनेवाला पानी और पत्थर से कब डरा है? हरनाथ ने बड़े दादा से बहाना बनाकर मोटर लेजाने की अनुमति लेली। और आठ बजते-बजते कम्पनी बाग में आ खड़ा

हुआ। नौ बजे के लगभग रंजना का रिक्शा आया। रंजना के रूप पर आज नेत्र नहीं टिक रहे थे। हरनाथ ने बढ़कर रिक्शेवाले को पैसे दिए। वह चला गया। रंजना ने न तो हरनाथ की ओर देखा और न कुछ कहा। चुपचाप मोटर में आकर बैठ गई। हरनाथ ने मोटर स्टार्ट की, "किधर चलूं ?" उसने पूछा।

"मुझे नहीं मालूम।"

हरनाथ ने मुस्कराते हुए गाड़ी बढ़ा दी।

"मुँह बन्द कीजिये। शहर से बाहर हँस लीजिएगा। जब देखिये तब हँसी आ रही है।"

गाड़ी कैनिंग रोड से मुड़ती हुई कुलभास्कर आश्रम, रामबाग और फिर जमुनापुल की ओर बढ़ गई। जमुनापुल पर पहुँचते-पहुँचते बादलों में भयंकर गड़गड़ाहट हुई और कड़कती हुई बिजली नभ मण्डल में अपनी शक्ति की ऐंठन का परिचय देकर विलीन होगई। भीमकाय मेघ अपनी आश्रिता का यह अहंकार कब सहन करने वाले थे ? झमझम करके बरस उठे। सारी गरमी ठंडी कर दी।

हरनाथ बोला, "भगवान, तुम्हें बारम्बार धन्यवाद है। ठंडक बढ़े तो, लोगों के दिमाग में भी कुछ ठंडक आये। आज तो बोलने-हँसने सबकी सौगन्ध खा ली गई है।"

कार पुल पार करती नैनी से आगे बढ़ गई। पानी और तेज़ बरसने लगा। काले मेघ सघन हो आये थे।

निर्जन-पथ पर एक किनारे लगाते हुए हरनाथ ने कार को एक सघन वृक्ष के नीचे खड़ा कर दिया, "यह क्या ?" रंजना इतनी देर बाद बोली।

"नेचुरल ब्यूटी देखिये और हमसे बातें कीजिये। ऐसी सुहानी छटा शहर में देखने को कहाँ मिलेगी ?"

रंजना चुप रही।

हरनाथ पुनः बोला, "आइये, पीछे की सीट पर बैठें, आपसे कुछ बताना है।"

"यहीं ठीक है। पीछे क्या होगा ?"

"आइये तो सही।" वह अन्दर-ही-अन्दर पीछे आगया।

रंजना को भी आना पड़ा।

"आपको मेरे जीवन के विषय में पूरी जानकारी है?" हरनाथ ने पूछा।

रंजना ने गर्दन ऊपर उठाई, "क्यों?"

"मैंने इस छोटी-सी ज़िन्दगी में बड़े उलटे-सीधे काम किये हैं रंजनाजी। मेरा विचित्र स्वभाव रहा है और विचित्र प्रकार के काम करता रहा हूँ। मैंने जो कुछ किया है सदैव अपने और परिवार वालों के अहित के लिए किया है, परन्तु जब से आप मेरे जीवन में आई हैं, मुझे ऐसा मालूम पड़ रहा है कि मैं जानवर से मनुष्य बन गया हूँ। मेरी काया पलट गई है। आपको सुनकर आश्चर्य होगा कि मैंने लाख-डेढ़ लाख के गहने केवल मोटरबाज़ी में बेच डाले हैं।" और फिर हरनाथ अपने विगत जीवन की सारी घटनाएँ एक-एक करके घण्टों बताता रहा।

यद्यपि रंजना को इस विषय में थोड़ी-बहुत जानकारी थी, परन्तु वह नहीं के बराबर ही कही जा सकती थी। कहानी समाप्त होने पर उसने आश्चर्य प्रगट किया और क्षणभर रुककर बोली, "तब तो आपको मेरा आभारी होना चाहिए।"

"होना चाहिए नहीं बल्कि हूँ।"

"केवल मुँह से या कुछ देकर?"

"अब भी देने को कुछ शेष रह गया है?" उसने फूल जैसी उसकी मुलायम हथेली को अपनी दोनों हथेलियों के बीच दबा लिया, "सर्वस्व तो अर्पित कर चुका हूँ।" हरनाथ उसे अपलक निहारने लगा। आँखें कुछ चाहने लगी थीं। शरीर में रोमांच हो आया था।

तभी बड़ी तेज़ी से बिजली चमकी। रंजना 'उफ' कहती हुई हरनाथ के कंधे से सट गई। हरनाथ ने बाँह फैलाकर उसे घेर लिया और धीरे से बोला, "आपकी आँखों को किस करलूँ रंजनाजी?" उसका मुँह सटने लगा था।

रंजना ने पलकें झुका लीं। हरनाथ ने उन्हें चूम लिया। रंजना के नेत्र बन्द रहे। हरनाथ ने पुनः चूमा। रंजना के नेत्र अब भी बन्द थे।

४६

उमेश अब ऐश की दुनिया में आगया था। हर तरह की तफ़रीह होने लगी थी। जब-तब लखनऊ का भी चक्कर लगने लगा तथा समाज में जो चीज़, 'प्राइवेट हाउस' के नाम से जानी जाती है, वहाँ पैसा ठीकरों की भाँति फेंका जाने लगा। संसार में समस्त वस्तुएँ भोग्य हैं और मनुष्य उन्हें भोगने के लिए जन्मा है—बस इसी नीति का अक्षरशः पालन हो रहा था। बड़ी मौज की कट रही थी और यह मौज सालभर तक चलती रही कि उसका तबादला चिल्ला बैरियर को होगया। बैरियर अर्थात् वह रोक वाला स्थान जहाँ दो प्रान्तों अथवा दो जिलों की सीमाएँ मिलती हों। चिल्ला बाँदा से तीन-चार कोस दूर जमुना के किनारे पर बसा हुआ एक छोटा-सा गाँव है। यहीं पर केन नदी भी जमुना में आकर संगम बनाती है। जमुना के उस पार फतेहपुर जिला है। यहाँ पर उमेश को दो चपरासी, एक कामदार, एक नाव और दो मल्लाह मिले थे। यहाँ नाव से दौरा करना होता था।

चिल्ला आने पर जो सबसे अनोखी बात हुई वह थी शराब से मुक्ति। चौधरीसाहब क्या छूटे जैसे शराब ने भी उमेश का साथ छोड़ दिया हो। अब कानपुर या लखनऊ जाने पर ही कभी-कभी ज़बान पर सान रख ली जाती थी। अकेलेपन ने पुनः उसके लिखनेवाली भावना को उभारा। उसे विगत जीवन पर बड़ा पश्चाताप था। उसने एक वर्ष में एक और पुस्तक तैयार करली होती यदि पीनेवाली लत न पड़ी होती। ख़ैर, 'बीती ताहि विसारि दे आगे की सुधि लेहु' को सोचता हुआ वह लिखने का वातावरण तैयार करने लगा।

विजय चाहे जिस प्रकार मिली हो किन्तु उमेश ने अब मदिरा पर विजय पा ली थी और निस्संदेह यह उसके चरित्र की अनोखी देन थी। मगर वेश्यागमनवाली वृत्ति अब भी उसमें विद्यमान थी। यद्यपि उसमें भी अब सत्तर फीसदी कमी आगई थी तथा दायरा भी संकुचित होकर

केवल कानपुर ही रह गया था, फिर भी था तो। वह अधिकतर ठेले में बैठकर कानपुर आजाया करता था। छुट्टी लेने की आवश्यकता नहीं थी। कारण, इधर किसी अफसर के आने का भय नहीं था।

एक दिन वह इसी काम से कानपुर आया हुआ था। जिस एजेन्ट के द्वारा यह धंधा हुआ करता था, उससे उसने भेंट की। वह उमेश को देखते ही बोल उठा, "खूब आए बाबूजी ! कल से आपकी याद कर रहा था। बड़ी नायाब चीज आपके लिए ढूंढ़ निकाली है, बिल्कुल सोलह साल की। तबीयत खुश हो जाएगी। अल्लाह ने उसे कमाल का हुस्न बख्शा है। क्या बताएँ वह तो शीशे में…।"

"बस करो। बहुत तारीफ होगई। पहले चीज़ तो दिखलाओ।"

"दिखलाना क्या है ? जब चाहें चले चलिए। प्राइवेट भी नहीं बिल्कुल घरेलू माल है।"

"अच्छा !"

"जी हाँ। ऐसा ही है।"

"पैसे ?"

"आपकी तबीयत पर है। वहाँ आपसे माँगा नहीं जाएगा।"

"तो दोपहर में रखूँ ?"

"रखिये। मैं आपको बारह बजे यहाँ मिल जाऊँगा।"

"ठीक।" उमेश ने पाँच रुपए का नोट बख्शीश के रूप में उसके हाथ पर रख दिया।

वह सलाम करता हुआ चला गया।

डिप्टी पड़ाव के चौराहे से आगे चलने पर दाहिनी ओर कई गलियों में से होता हुआ उमेश अपने एजेन्ट के साथ एक छोटेसे मकान के सामने आकर खड़ा होगया। उमेश को खड़ा रहने के लिए कहकर वह मकान के अन्दर गया। थोड़ी देर में अन्दर से आवाज़ आई, "चले आइए बाबूजी।"

आँगन में एक वृद्ध टूटी खटोली पर बैठे हुए थे जो सूरत शक्ल से ज़माने के सताए हुए मालूम पड़ रहे थे। उन्होंने खाँसते हुए झुककर सलाम किया और आँखें नीची करलीं। एजेन्ट ने बगल की कोठरी की ओर संकेत किया और बोला, "अब मैं जारहा हूँ। मेरे रुकने की ज़रूरत तो नहीं ?"

"नहीं। जा सकते हो।" उमेश कोठरी में चला गया।

अन्दर एक छोटी-सी खाट पर मैली दरी बिछी हुई थी और खाट के पैताने, कोने की ओर एक शलवार और कुरता पहिने एक सोलह-सत्तरह वर्षीय लड़की खड़ी थी जिसका मुँह दुपट्टे के कारण छिपा हुआ था। वह गौरवर्ण थी ऐसा उसकी पतली-पतली उँगलियों से मालूम पड़ रहा था। उमेश ने खाट पर बैठते हुए कहा, "आइए बैठिए। खड़ी क्यों हैं?"

उधर से कोई उत्तर नहीं मिला।

"अच्छा न बैठिए लेकिन मेरी तरफ देखने में तो गुनाह नहीं है? यकीन मानिए, मैं आपके पसन्द आऊँगा। हटाईये दुपट्टा।"

फिर भी लड़की उसी प्रकार चुपचाप खड़ी रही।

उमेश ने सोचा, सम्भवतः प्रथम अवसर होने के कारण वह झेंप रही है। उसने उसका हाथ पकड़ते हुए अपने बगल में बिठला लिया। लड़की सिसक उठी। दुपट्टा उसके मुँह से हट गया था। उमेश अवाक् देखता रह गया। युवती की सिसकी और उसके चेहरे की करुणा किसी भी मनुष्य के हृदय में व्यथा उत्पन्न करने में समर्थ थीं। उमेश का भावुक मन तिलमिला उठा। क्षण-दो क्षण तक उसे निहारते रहने के उपरान्त उसके मुँह से निकला, "क्या बात है?"

वह फफक कर उसके पैरों पर गिर पड़ी, "मेरी इज़्ज़त न बरबाद कीजिए साहब। अब्बा ने यह सब पेट की खातिर किया है। मैं किसी क़ाबिल नहीं रह जाऊँगी।" वह पुनः रोने लगी।

उमेश का हृदय भर आया। उसने उसके सिर पर हाथ फेरा और स्वयं खड़ा होगया। उसने पर्स से दस-दस के तीन नोट निकाले और उसके हाथ पर रख दिये, "अपने अब्बा को दे देना।" वह कोठरी से निकला और तेज़ी से घर के बाहर होगया। मालूम पड़ रहा था जैसे वह स्वयं रोने वाला है।

चिल्ला आने पर कई दिनों तक उमेश का हृदय ग्लानि से भरा रहा। नानाप्रकार की बातें सोचता रहा। सामाजिक और असामाजिक कार्यों पर सोचता रहा, इन्सानियत और हैवानियत पर सोचता रहा तथा पुण्य और पाप पर सोचता रहा। क्या दूसरों की कमज़ोरियों और कमियों से

नाव लौटी ही थी कि अचानक उसके कानों में किसी की सुरीली आवाज़ पड़ी। कोई स्त्री गारही थी। वह सीधा बैठ गया। सामने दूर से आती हुई किसी नाव से आवाज़ आरही थी। बड़ी टीस थी गायिका के कण्ठ में। ज्यों-ज्यों सामीप्य बढ़ता गया गीत के शब्द भी साफ-साफ सुनने मे आने लगे। गज़ल गाई जारही थी—

मेरी फ़रियाद सुन लीजिये
ग़ौर जब चाहिए कीजिये,
जब हो महफ़िल में छाया अलम
रुख़ से पर्दा हटा लीजिये,
यों तो सुनने में आया है कुछ
असलियत आप कह दीजिये,
सबकी रुकने लगी है नज़र
अब तो ज़ुल्फ़ों में ख़म दीजिये,
हमको कहना नहीं है बहुत
राज़े उलफत समझ लीजिये।

नाव और समीप आगई थी। दूर से श्वेत साड़ी में चाँदनीसदृश गायिका चमक रही थी। उसके रूप से चाँद मानो शरमा रहा हो। आयु लगभग बीस-इक्कीस के बीच लग रही थी। वह लेटी हुई थी और उसके बगल में चिल्लाघाट के ठेकेदार बैठे हुए थे जो यहाँ नवाबसाहब के नाम से सम्बोधित होते थे।

नीयतें हो गई हैं बुरी
अब सँभलकर चला कीजिये,

नाव बगल से होती हुई आगे निकल गई। एक पंक्ति और सुनाई पड़ी—

जब किसी को हो देनी हयात
हलके हलके सँवर लीजिये,

उमेश ने मल्लाहों से पूछा, "यह नवाबसाहब की बीवी हैं ?"

"जी सरकार। दूसरा ब्याह है।" एक बोला।

"बच्चे-वच्चे हैं ?"

"जी नहीं।"

"नवावसाहव की क्या उम्र होगी। मैं समझता हूँ चालीस-पैंतालीस से कम न होंगे?"

"और क्या? कुछ अधिक ही समझें।"

उमेश ने आगे कुछ नहीं पूछा। वेगमसाहेवा की गज़ल उसके कानों में गूँजती रही।

चिल्लाघाट का ठेका उठा करता था और यह ठेका कई वर्षों से नवावसाहव ही ले रहे थे। नवावसाहव लखनऊ के रहने वाले थे। कभी इनके पास भी अच्छी ज़मींदारी थी, लेकिन ज़मींदारी उन्मूलन में सब समाप्त होगई। फलस्वरूप जीवित रहने के लिए कुछ-न-कुछ तो करना था ही। मुआवज़ा के मिलते ही उन्होंने ठेके का धंधा आरम्भ कर दिया। ठेके में आमदनी होने लगी और धीरे-धीरे वह वड़े-बड़े घाटों के ठेके लेने लगे। एक बार उन्होंने चिल्लाघाट का भी ठेका लिया। आशा से अधिक वचत हुई। उन्होंने पुनः ठेका लिया और तब से आज तक ठेका उन्हीं के पास है।

नवाबसाहब का परिवार केवल दो व्यक्तियों का परिवार था—स्वयं और उनकी पत्नी। घर में और कोई नहीं था। ससुराल में अवश्य कई साले और सास थीं। सास अधिकतर दामाद के साथ ही रहा करती थीं। पहली पत्नी की मृत्यु के उपरान्त इन्होंने दूसरी शादी की थी। इस समय नवावसाहब की आयु पैंतालीस के आसपास थी। और बेगमसाहेवा की सत्ताईस की। किन्तु वह अब भी बीस-इक्कीस की दिखती थीं जबकि नवावसाहब पचास के आँके जाते थे।

जहाँ बाँदा की ओर से आती हुई सड़क जमुना में समाप्त होती थी, वहीं सटे हुए पहाड़ीजैसे ऊँचे कगार पर एक बरगद का विशाल वृक्ष था और इसी वृक्ष की छाया में नवाबसाहब का बँगलानुमा कच्चा मकान था जो फूल-पत्तियों से हरा-भरा और सुन्दर दिखता था। कगार के किनारे-किनारे लोहे की रेलिंग लगी हुई थी जो वचाव के हेतु थी। रेलिंग के सहारे खड़े होकर कलकल बहती हुई जमुना की छटा का दूर तक अवलोकन किया जा सकता था। यहीं नीचे जमुना में अधिकतर लोग नहाया भी करते थे। गर्मी और जाड़ों में यहाँ पानी का जमाव कम रहता था।

न जाने क्यों जबसे उमेश ने बेगमसाहेवा की गज़ल सुनी थी तभी से

उसे भी अपनी गज़ल और आवाज़ सुनाने की उत्कंठा जागृत हो उठी थी। उसके कंठ में भी खिंचाव और मिठास है—इसे वह बेगमसाहेबा को जता देना चाहता था। फलस्वरूप उसने एक नई गज़ल तैयार की। एक दिन संध्या को जब बिल्कुल सन्नाटा हो गया तब वह जमुना में नहाने गया। पहले वह इधर-उधर तैरता हुआ गुनगुनाता रहा। फिर धीरे-धीरे उसकी आवाज़ खुली और वह अपने स्वर से गाने लगा—

मुझे हाल अपना सुनाने से पहले
मेरे हाले ग़म को भी सुन लीजियेगा
मुहब्बत की दुनियाँ में आने से पहले
मुहब्बत का रस्ता समझ लीजियेगा
शिकायत नहीं है हमें ज़िन्दगी से
नहीं उज्र करते किसी बन्दगी से
हमें राज़े क़ुदरत बताने से पहले
मेरी राज़े उलफ़त समझ लीजियेगा

उमेश की आवाज़ सुनकर बेगमसाहेबा रेलिंग पर आकर खड़ी हो गई थीं। उमेश के कंठ में और मिठास आगई। उसने आगे की पंक्तियाँ सुनाईं—

सभी शक्ल दुनिया की फ़ानी बनी है
बुढ़ापे की ख़ातिर जवानी बनी है
मुझे यह हक़ीक़त बताने से पहले
हक़ीक़त इस दिल की समझ लीजियेगा
यह कैसी हुई आज हालत है अपनी
शक्ल उनकी शीशे में दिखती है अपनी
इस दिवानगी को मिटाने से पहले
दिवाने की हालत समझ लीजियेगा
जो आग़ोश-काँटों का 'गुल' को न मिलतीं
न दामन उलझता न नज़रें अटकतीं
मेरी बज़्म को अबे मिटाने से पहले
कशिश-दिल की थोड़ी समझ लीज़ियेगा

ग़ज़ल समाप्त हुई। बेगमसाहेबा अब भी खड़ी थीं।

४७

रात को उमेश जब लेटा तो मन बड़ा प्रसन्न था। वह गज़ल अच्छी लिख लेता है तभी तो बेगमसाहेबा अन्त तक खड़ी सुनती रहीं। एक क्षण को भी हटी नहीं। हो सकता है वह नवाबसाहब से कहकर मेरी गज़ल लिखवा मंगवाएँ। मगर नहीं। नवाबसाहब से वह नहीं कहेंगी। वह यह भी तो सोच सकती हैं कि नवावसाहब इसका दूसरा अर्थ लेलें। लेकिन क्यों? इसमें दूसरे अर्थ की कैसी सम्भावना? बेगमसाहेबा तो काफी एडवान्स मालूम पड़ती हैं। अन्य मुसलमानों की भाँति रूढ़िवादी विचारधारा की नहीं है। नवाबसाहब भी स्वयं बड़े उदार दिखते हैं। उमेश के मस्तिष्क में दूसरे विचार आए—लेकिन बेगमसाहेबा को भगवान ने रूप अद्वितीय दिया है। उन्हें देखकर इच्छा होती है कि उन्हें देखता ही रहा जाए। उनके अंग-अंग से सुन्दरता टपकती है। कमाल का हुस्न पाया है। अगर बीवी किसी को मिले तो ऐसी ही मिले······। इसी प्रकार बेगमसाहेबा को लेकर उमेश के दिमाग में बहुत-सी कल्पनाएँ बुनती बिगड़ती रहीं। मन तरंगित होता रहा। तरंग ने गुनगुनाने की प्रेरणा दी और अनायास उसके मुँह मे निकल पड़ा—

जव उनकी नज़र का राज़ खुला, सब कहना कहाना भूल गये।
अब ऐसी बढ़ी है बेख़बरी, हम दिल का फ़साना भूल गये।

उमेश को यह पंक्तियाँ बड़ी पसन्द आईं। वह उठकर कमरे से कलम और कापी ले आया। इन्हें लिखा और आगे की पंक्तियाँ सोचने लगा। खटाखट एक के बाद एक पंक्ति बनती चली गई और घंटेभर के अन्दर-अन्दर गज़ल तैयार होगई। गज़ल समाप्त होने पर उसे आश्चर्य हुआ कि कैसे इतनी जल्दी गज़ल लिख ली गई जबकि पहली गज़ल समाप्त करने में उसे तीन दिनों तक मत्थापच्ची करनी पड़ी थी। उसने घड़ी में समय देखा। रात के ढ़ाई बज रहे थे। उसने कापी बन्द की और करवट बदल ली। चाँदनी ने अपना श्वेत आँचल उस पर डाल दिया। वह सोगया।

दूसरे दिन संध्या समय उमेश स्वयं नाव खेता हुआ सैर को निकला। मल्लाह साथ नहीं थे। वह बहुत दूर नहीं गया और उसीदिन वाले समय के अन्दाज़ से लौट पड़ा। सम्भवत: आज फिर बेगमसाहेबा देखने को मिल जाएँ। उसने नई गज़ल गाना आरम्भ किया और एक-एक पंक्ति को कई-कई बार दुहरा-दुहराकर गाता रहा। बीच-बीच में वह गर्दन मोड़कर देख भी लेता था पर अभी नवाबसाहब की नाव नहीं दिखलाई पड़ रही थी। नवाबसाहब की नाव विशेष प्रकार की बनी थी जो काफी दूर से पहचानी जा सकती थी।

चिल्ला जब समीप आने लगा और फिर भी नवाबसाहब की नाव नहीं दिखलाई पड़ी तो उसने पुन: अपनी नाव को मोड़ लिया। उसने सोचा अभी आने का समय है। उसने डाँड़ें रोक लिए और धीरे-धीरे नाव को अपनी गति से बहने दिया। थोड़ी ही देर में उसे किसी नाव की आभा झलकी। खुशी दौड़ गई। वह तनिक आँखें गड़ाकर ध्यान से देखने लगा। नवाबसाहब की ही नाव थी। वह नाव के बीच में तकिये के सहारे आकर उठंगता हुआ पुन: उसी गज़ल को गाने लगा—

जब उनकी नज़र का राज़ खुला सब कहना कहाना भूल गये।
अब ऐसी बढ़ी है बेखबरी, हम अपना फ़साना भूल गये।
शिकवा व शिकायत क्या करना जब दिल ही सहारा छोड़ चला।
हम ढूंढ़ते फिरते हैं साहिल कश्ती का चलाना भूल गये।
चिलमन जो उठाई महफ़िल में खामोश ज़माना झूम उठा।
कुछ ऐसी मिलाई उनने नज़र सब कहते रहे हम भूल गये।
हमको न तमन्ना अपनी है न नशेमन की ही करते हैं।
यह हालत ऐसी हालत है बिजली भी गिरी हम भूल गये।
नज़रों को नज़र आते जो नहीं तो 'गुल' उस दम कह उठता है।
इस पर्दे में कुछ पर्दा है जिस पर्दे को हम भूल गये।

उमेश आसमान की ओर आँखें किए दुहरा-दुहराकर गाता चला जा रहा था। वह जताना चाहता था कि वह किसी को सुना नहीं रहा है वरन् अपनी मस्ती में गा रहा है। नवाबसाहब की नाव समीप आई। उमेश उसी प्रकार गाता रहा। यद्यपि उसे समीपता का आभास होगया था।

तब तक उसके कानों में आवाज़ पड़ी, "इन्स्पेक्टरसाहब।"

उमेश चौंक पड़ा। उसे इतनी आशा नहीं थी। नवाबसाहब की नाव उसकी नाव से आकर सट गई। सम्भवतः नवाबसाहबा ने मल्लाहों को ऐसा ही आदेश दिया था। बगल में सुन्दरता का आगार लिए बेगमसाहेबा बैठी थीं। नवाबसाहब बोले, "क्यों साहब, मैंने क्या खता की है जो ऐसी चीज़ों से महरूम किया जाता है? वाक़ईमें जैसी तारीफ सुनी थी वैसा ही देखने में आया।"

उमेश ने बेगमसाहेबा की तरफ हाथ जोड़े। प्रत्युत्तर में उन्होंने भी हाथ जोड़ लिए। जो उनके लिए अस्वाभाविक था।

"क्या दौरे में वक्त ज़्यादा गुज़रता है?" नवाबसाहब ने पुनः पूछा।

"जी नहीं। लेकिन कोशिश करता हूँ कि जितनी तनख्वाह मिलती है उतनी मेहनत तो करी ही जाए।"

बेगमसाहेबा मुस्कराने लगीं।

"फिरभी आप दिखलाई कम पड़ते हैं। क्या ज़्यादातर घर में ही रहना होता है?"

"जीहाँ, कुछ लिखने-पढ़ने का शौक है, वही किया करता हूँ।"

"बहुत खूब। यह गज़ल भी शायद आपकी ही लिखी है?"

"गज़ल क्या मन बहलाने के लिए तुकबन्दी है।"

नवाबसाहब ने अपनी बीवी की तरफ़ देखा, "आपका कयास सही निकला। इन्स्पेक्टरसाहब जितना अच्छा पढ़ते हैं उतना ही बढ़िया लिखते भी हैं।" फिर उन्होंने उमेश की ओर गर्दन मोड़ी, "कल रात का खाना अगर मेरे यहाँ हो तो कोई तकल्लुफ···?"

"बिल्कुल नहीं। तकल्लुफकैसा? लेकिन खाना तो कभी भी हो सकता है उसके लिए इतनी फारमेल्टी की क्या आवश्यकता?" नवाबसाहब की आँखों से आँखें मिलाये उमेश बातें कर रहा था। उसने एकबार भी बेगम-साहेबा की ओर नहीं देखा था।

"फारमेल्टी इसलिए कि इसी बहाने मुझे सुनने को मिल जायेगा।"

"गोश्त से आपको," इतनी देर बाद बेगमसाहेबा बोलीं, "परहेज़

उमेश ने गर्दन हिलाई, "जी नहीं।" यद्यपि उमेश ने गोश्त खाना बन्द कर दिया था, परन्तु इस समय वह बेगमसाहेबा की बात को काटने में असमर्थ था।

"आप भी कमाल करती हैं। अगर शायर को गोश्त और शराब से परहेज़ हो तो वह शायरी क्या करेगा? उसके लिए तो दोनों चीज़ें नेमत हैं नेमत।" नवाबसाहब का कथन था।

"जी हाँ," बेगमसाहेबा ने ताना मारा, "शराब ज़रूर नेमत है, क्योंकि बदमस्त बनाकर नाली में जो गिरा देती है?" वह हँसने लगीं।

नवाबसाहब भी मुस्कराने लगे और मल्लाहों को चलने के लिए आवाज़ दी। नवाबसाहब की नाव ऐसी बनी थी कि मल्लाह सामने से दिखलाई नहीं पड़ सकते थे। "आप भी आगे चल रहे हैं?" नवाबसाहब का सम्बोधन उमेश को था।

"जी नहीं। अब मैं लौटूँगा।"

दोनों नौकाएँ अलग हुई। उमेश सोचता चला जा रहा था सुन्दरता की सीमा के विषय में।

दूसरे दिन बेगमसाहेबा ने बड़े तबीयत से उमेश को खिलाया और स्वयं भी खाती रहीं। बातों के सिलसिले में नवाबसाहब से मालूम हुआ कि बेगमसाहेबा लखनऊ विश्वविद्यालय की ग्रेजुएट हैं और उनकी नवाबसाहब से लव-मैरिज है। लव-मैरिज की बात सुनकर उमेश को महान् आश्चर्य हुआ, किन्तु यह सोचकर कि इस सृष्टि में सब सम्भव है, वह और बातें करने लगा। उमेश के विषय में जब बेगमसाहेबा को यह मालूम हुआ कि अभी उसने शादी नहीं की है तो उन्होंने इसके कारण को जानने की उत्सुकता प्रगट की। उमेश ने मुस्कराकर कहा, "मेरी भी तो तकदीर नवाबसाहब जैसी बनने दीजिए तब शादी करने में कुछ लुत्फ भी है वरना ऐसे तो तीन-सौ पैंसठ लड़कियाँ हैं। मैं ठीक कह रहा हूँ न नवाबसाहब।"

बेगमसाहेबा सिर झुकाकर मुस्कराने लगीं। नवाबसाहब हँसने लगे।

बातों में दूसरा सिलसिला आया और इसप्रकार भोजन समाप्त हुआ। तीनों उठकर सोने वाले कमरे में आए। एक पलंग पर उमेश बैठा और दूसरे पर नवाबसाहब और उनकी पत्नी। उमेश से गज़ल पढ़ने के

लिए कहा गया। उमेश अपनी कापी लेकर आया था, जिसमें उसकी और दूसरों की बहुत-सी नई और पुरानी ग़ज़लें और कविताएँ थीं। उमेश हिन्दी-उर्दू दोनों सुनाता रहा और बड़ी देर तक सुनाता रहा। परन्तु बेगमसाहेबा एक के बाद दूसरी की फरमाइश करती ही रहीं। उनकी तबीयत भर नहीं रही थी। उमेश को भी सुनाने में आनन्द आरहा था। कारण, बेगम-साहेबा की तन्मयता ऐसी ही थी।

अनायास उमेश रुक गया, "बस। अब मैं आपसे सुनूँगा।"

"मैं सुनाऊँगी! वाह। मैं आपकी तरह शायर नहीं हूँ। आपने अच्छा मज़ाक किया।"

"सुनाइये, सुनाइये। मुझसे बहाना नहीं चल सकता। मेरे कानों में अभी वह पंक्तियाँ 'नीयतें हो गई हैं बुरी, अब सँभलकर चला कीजिए—' गूँज रही है। सुनाइये।"

बेगमसाहेबा ने नवाबसाहब को देखा, "सुनाओ, जब इन्स्पेक्टर-साहब से सुना है तो तुम्हें भी सुनाना लाज़मी है।"

बेगमसाहेबा सुनाने लगीं। उमेश 'एक और', 'एक और' कहता रहा। बेगमसाहेबा के रूप में जैसा आकर्षण था, वैसा ही उनके कण्ठ में। कई ग़ज़लों के उपरान्त उन्होंने माफी माँगी। गोष्ठी समाप्त हुई। उमेश उठ खड़ा हुआ। दोनों उमेश को बाहर तक छोड़ने आये। हाथ मिलाते हुए नवाबसाहब बोले, "आज तो आपने इस चिल्ला को लखनऊ बना दिया। अब जब कभी मौका मिले तो आजाया कीजिए। इनकी भी तबीयत बहल जाया करेगी। आजकल वालिदा के न होने से ऊबा करती हैं।"

"यह तो मानी हुई बात है। नहीं, मैं जब-तब आजाया करूँगा। अच्छा।" वह मुड़ पड़ा।

रात के स्वप्नों में भी उमेश की यही गोष्ठी चलती रही।

सवेरे चपरासी ने धीरे-से जगाया, "सरकार, तार आया हुआ है।"

उमेश ने आँखें खोलीं और हड़बड़ाकर उठ बैठा। उसने लिफाफा फाड़कर तार देखा। वह हरनाथ का था। उसे तुरन्त इलाहाबाद बुलाया था। उमेश सोचने लगगया। थोड़ी देर बाद वह उठा और इलाहाबाद जाने की तैयारी करने लगा।

हरनाथ और रंजना की रंगरलियाँ बढ़ती गईं और अन्त में सीमाओं का उल्लंघन होने लगा। दोनों प्रेम की ओट में वासना की तृप्ति करने लगे। किसीप्रकार की कोई रुकावट नहीं रह गई। दोनों अन्धे हो गये थे। भले-बुरे का ध्यान मिट गया था। फलस्वरूप जो होना चाहिए था, सो हो गया। रंजना गर्भवती होगई। उसकी आँखों पर वासना का पड़ा हुआ पर्दा फट गया। और वह भविष्य की कल्पना करके काँप उठी। हे भगवान, उसने यह क्या किया? उसने अपने माता-पिता के मुँह पर कालिख पोत दी। समाज उस पर उँगलियाँ उठाएगा। वह रो पड़ी और बड़ी देर तक रोती रही। दो-एक दिन तो चिन्ता में बैठी रही, परन्तु कब तक? उसे हरनाथ को बताकर उपाय निकालना चाहिए। एक दिन उसने बन्दलिफाफे में हरनाथ को चिट्ठी दी और घर पर पढ़ने के लिए कहा। हरनाथ ने घर पर आकर पत्र पढ़ा तो पैरतले ज़मीन खिसक गई। शरीर काँप उठा। वह माथा पकड़कर बैठ गया और घंटों दुष्परिणामों पर सोचता रहा। क्या से क्या हो गया।

दूसरे दिन हरनाथ ने रंजना से भेंट नहीं की। कालेज भी नहीं गया। वह दिनभर अपने परिचितों से मिलता-जुलता रहा और परोक्षरूप से जानने का प्रयत्न करता रहा कि इस मामले में उसे क्या करना चाहिए तथा कहाँ से औषधियों को एकत्र करना चाहिए। डाक्टरों के पास जाने की उसकी हिम्मत नहीं हो रही थी। किस्सा कोताह, वह इधर-उधर की दवाइयों को एकत्र कर तीसरे दिन रंजना से मिला और उसे दवाइयाँ दीं। तत्पश्चात् वे घंटों अपनी नादानी पर पश्चात्ताप करते रहे। अपने को कोसते रहे। रंग में भंग होगया।

पन्द्रह-बीस दिन और बीते। कोई लाभ नहीं दिखलाई पड़ा। दोनों की चिन्ता बढ़ गई। हरनाथ ने अब उमेश को बुलाकर राय लेने की सोची। अभी तक न बताने में उसके झूठे ब्रह्मचारीपन का ढोंग था जिसे वह उमेश के सामने नहीं खुलने देना चाहता था, परन्तु अब परिस्थिति ने उसे विवश कर दिया था। उसने उमेश को तार देदिया। यदि उसने प्रारम्भ से उमेश से सलाह ली होती तो सम्भवतः यह स्थिति न खड़ी होपाती, परन्तु अपनी झूठी प्रतिष्ठा बनाए रखने की कमज़ोरी ने उसे सदैव तबाह किया था।

दूसरे दिन उमेश आ पहुँचा। हरनाथ ने भेंट होते ही उसने [illegible]।

"चलो कम्पनी बाग में बातचीत होगी। बहुत बातें कहनी हैं।"

दोनों कुम्पनी बाग आए। हरनाथ के भीतर पुनः अंतर्द्वन्द्व चलने लगा। उसकी दुर्बुद्धि पुनः सद्बुद्धि पर हावी होने लगी। उमेश से अपनी कनङ्गगी बताने में उसे हीनता का अनुभव होने लगा। उसका विचार बदला और बैठते ही उसने बात बदलकर बतलाई। वह बोला, "मैंने यहाँ अपने एक मिलनेवाले व्यक्ति से सौ-सौ और पचास-पचास करके लगभग पाँच सौ रुपये तक कर्ज़ ले लिया है। अब वह अपना रुपया माँग रहा है। उसे रुपयों की आवश्यकता है। उसे रुपया न मिलने पर बात बिगड़ सकने की सम्भावना है और बहुत मुमकिन है कि वह बड़े दादा से भी कह दे। इस समय तुम्हारे सिवा और कोई मेरा मददगार है नहीं। इसलिए तुम्हें तार देकर बुलाया है।"

उमेश कुछ मिनटों तक सोचता रहा तदुपरान्त बोला, "खैर, दो सौ रुपये तो तुम्हें अभी दिए देता हूँ। रहीं तीन सौ की बात उसे मैं सौ-सौ रुपये करके तीन महीने में भेज दूँगा। चिल्ला में आमदनी बिल्कुल नहीं है। वरना फौरन प्रबन्ध कर देता। फिरभी मैं समझता हूँ दो सौ से बात तो रुक जाएगी?"

"हाँ-हाँ। दो सौ रुपये पाने से उसे संतोष हो जाएगा। बाद में तुम उसे सौ-सौ रुपये मासिक भेज देना। सम्भवतः किसीने मेरे विषय में उलटी-सीधी बात कहकर उसे भड़का दिया है।"

उमेश ने मनीबेग से दो नोट सौ-सौ के निकालकर हरनाथ को दिए तदुपरान्त दूसरी बातें होने लगीं। उमेश ने हरनाथ से बेगमसाहेबा के विषय में भी बताया और उनकी सुन्दरता की अत्यधिक प्रशंसा की। हरनाथ मुस्कराया, "मैं तुम्हारी नीयत को अच्छी तरह समझता हूँ। तुम साले पुराने कुरीज़ हो।"

उमेश हँसने लगा, "बदनाम किए रहो, लेकिन मैं कहे देता हूँ कि अगर तुम कभी गिरे तो ऐसे गिरोगे कि न दिन को दिन सूझेगा और न रात को रात। वक्त आने दो। तब मैं पूछूँगा।"

हरनाथ ने दूसरा प्रसंग उठा दिया।

संध्या की गाड़ी से उमेश लौट पड़ा। वह छुट्टी लेकर आया था। हरनाथ भी यही चाह रहा था।

४८

इलाहाबाद से लौटने के तीसरे दिन उमेश, बेगमसाहेबा से मिलने उनके घर गया। बेगमसाहेबा का तौर-तरीका और उनसे बैठकर बातें करने के लुत्फ ने उस पर जादू डाल दिया था। बेगमसाहेबा को उमेश के आने की सूचना मिली। उन्होंने अन्दर लिवा लाने को कहा और स्वयं आँगन में आकर उन्होंने स्वागत किया, "आइये! खुदा का शुक्र है। मेरी याद तो बनी रही वरना शायरों को इतनी फुरसत कहाँ?"

"यही सुनने आया हूँ। बड़े भाग्य से यह अवसर मिल सका है।" वह मुस्कराने लगा।

दोनों कमरे में आकर बैठ गये। बेगमसाहेबा ने पूछा, "सुनाइये, इधर दो-तीन दिन कहाँ गायब रहे?"

"इलाहाबाद चला गया था।"

"क्यों?"

"मेरे एक दोस्त का तार आगया था।"

"खैरियत तो है?"

"हाँ, कोई खास बात नहीं। योंही बुला लिया था।"

"इलाहाबाद से कल लौटना हुआ?"

"नहीं! नरसों आगया था।"

"बहुत खूब! नरसों के आये हुए हैं और दर्शन आज दिया जारहा है? क्या दोस्त की जुदाई में नहाना-खाना सब बन्द होगया था? अल्लाह करे, ऐसे दोस्त सबको मिलें। ऐसी ही कशिश में तो ज़िन्दगी का लुत्फ है।"

"सही है। कशिश का जितना अच्छा अन्दाज़ वेगमसाहेवा को है वैसा मुझे कहाँ ? लेकिन···?"

"चोट करने में चूकते नहीं हैं," वह हँसने लगी, "और सुनाइये। इधर कोई नई गज़ल लिखी ?"

"लिखी तो नहीं, लेकिन शुरुआत करदी है।"

"क्या है मतला ?"

उमेश ने सुनाया—

तेरी रहमतों का है हमको सहारा
इसी आसरे सब खता कर रहे हैं
भरोसा है जलवा दिखेगा तुम्हारा
हम उम्मीद ऐसी लिये जी रहे हैं

"वाह बहुत खूब।" बेगमसाहेवा उछल पड़ीं, "मतला में जान डाल दी है। खुदा चाहेगा तो उम्मीद पूरी होकर रहेगी। भरोसा रखिये।" उन्होंने चुकटी ली।

"अच्छा, पूरी हो जाएगी ?"

"बिल्कुल हो जाएगी। थोड़ी सब्र की ज़रूरत है।"

"कर लूंगा। आपको तो इसका तजुरबा भी है।" उमेश मुस्कराया।

बेगमसाहेबा ने आँखें नचाईं, "किसी की कमज़ोरी जान लेने पर उससे फायदा उठाना गुनाह कहा गया है।"

उमेश हँसने लगा, "मैं उस गलती के लिए क्षमा-प्रार्थी हूँ। अपने शब्द वापस लिये।"

वेगमसाहेवा भी मुस्कराने लगीं।

"नवाबसाहब कहीं बाहर गये हुए हैं ?"

"नहीं ! सबेरे बाँदा किसी काम से जाना पड़ गया था, आते ही होंगे। मेरा अन्दाज़ है ग्यारह का वक्त होगा ?"

उमेश ने अपनी घड़ी देखी "जी हाँ ! पौने ग्यारह हैं।" उमेश ने बातों का सिलसिला बनाए रखा, "एक बात पूछूँ बेगमसाहेवा ?"

"पूछिए। कोई अहम मसला है लड़कियों के सम्बन्ध में ?"

"यही तो रोना है बेगमसाहेबा ! लड़कियाँ तो मेरे पास फटकती.ही

नहीं। ख़ुदा मियाँ ने पता नहीं कैसी शक्ल बना दी है। जहाँ भी कोशिश करता हूँ वहाँ नाकामयाबी पल्ले पड़ती है।"

बेगमसाहेबा सिर हिलाती हुई अधरों में मुस्कराने लगीं, "दुनिया को बड़ी गहराई तक समझा गया है। ख़ैर! पूछ क्या रहे थे ? उसे तो कहिये।"

"मैं यह कह रहा था कि आपके विचार से मुहब्बत दिल का सौदा है या आपसी स्वार्थों का ?"

"मेरे ख्याल से तो मुहब्बत नाम की कोई चीज़ नहीं होती। खास करके दिल के सौदे में तो बिल्कुल नहीं।"

"चलिए! आपसे एक नई बात सुनने को मिली। अगर मुहब्बत की कोई बुनियाद नहीं है तो फिर एक दूसरे के लिए पागल होकर मारे-मारे फिरना, ज़हर खाकर सो रहना, दौलत को दौलत न समझना, यह सब क्या है ?"

"एक के लिए दूसरे की कशिश है। सूरत-शकल की कशिश है, दौलत-इज़्ज़त की कशिश है; कहने का मेरा मतलब है कि दुनिया के सारे सौदे चाहे उनका दिल से रिश्ता हो या और किसी से सब कशिश के ही बदौलत हैं।"

"लेकिन कशिश में क्षणिकता है न बेगमसाहेबा। चीज़ हासिल हुई नहीं कि खिंचाव जाता रहा। फिर…।"

"तो क्या हुआ ? यह देन तो कुदरत की है, और जो देन कुदरत की है उसमें आप चाहकर भी किसी तरह की तबदीली नहीं कर सकते !"

"पर जैसा आप कह रही हैं, वैसा देखने में तो नहीं आता।"

"उसकी एक वजह है, और वह है समाज की निगाहें। हमें और आपको इससे बहुत डरकर चलना होता है। एक-एक कदम फूंक-फूंककर रखा जाता है और यही वजह है कि जैसा मैं कहती हूँ वैसा आपको देखने में नहीं मिलता, वरना आप ही सोचिये, 'व्हेन चेन्ज इज़ दी लॉ ऑफ़ नेचर व्हाई ए परसन डिड नॉट प्रीफर टू प्लक ए फ्रेश फ्रूट डेली फ्रॉम दी ट्री।'[1] और जो लोग समाज की परवाह नहीं करते उन्हें आप ऐसा करते देखते भी हैं।"

१. जब प्रकृति में ही परिवर्तन का नियम है तो क्यों नहीं एक व्यक्ति नित्य ताज़ा फल पेड़ से तोड़ना चाहेगा।

"कहती आप सही हैं, लेकिन इससे यह तो साबित होता नहीं कि जिसे आप कशिश कहती हैं वह मुहब्बत नहीं है ?"

"क्यों ?"

"जहाँ 'चेन्ज इज़ दी लॉ ऑफ नेचर' है वहीं इन्सान में यह भी तो प्रकृति है कि वह असलियत को ढूँढता हुआ नेचर के नज़दीक जाने का प्रयत्न करता है। ऐसी सूरत में आपके कहने के मुताबिक आज के समाज की दूसरी ही शक्ल होनी चाहिए थी ?"

बेगमसाहेबा मुस्कराईं, "अजी जनाब, हो तो रही है वरना आज मैं मुहब्बत जैसी पाक चीज़ को कशिश कहने की जुर्रत न करती ? आप यों भी देखें, कि तवारीख बतलाती है कि कभी एक औरत के पाँच-पाँच और सात-सात शौहर हुआ करते थे, जो कभी-कभी हकीकी भाई या चचा-भतीजे भी होते थे। इससे और पहले की तवारीख देखिये, तो किसी घर का मालिक घर की सारी औरतों का शौहर हुआ करता था, और उसके मरने के बाद अगर उसका लड़का मालिक हुआ तो वह सारी औरतों का शौहर बन जाया करता था। जिसमें उसकी माँ, बहिन, चाची, लड़की, सभी हुआ करती थीं। इसे आप मानते हैं ?"

उमेश को स्वीकार करना पड़ा।

"फिर मुहब्बत कहाँ रही ? इसे तो कशिश ही कहा जाएगा। हाँ, यह मैं ज़रूर मानती हूँ कि अगर उस कशिश को मुहब्बत के जामे-जोड़े से ढँका गया होता तो शायद हमारी सिविलिज़ेशन उस ऊँचाई तक न पहुँच पाई होती और मैं यह भी मानती हूँ कि इसके बनाने में आपके आली मुनियों और पीरों का बहुत बड़ा हाथ रहा है। उन्होंने सामाजिक बन्धन के साथ-साथ 'साइकोलाजिकल इन्वायरमेण्ट' का भी जाल बिछा दिया था। नतीजा यह हुआ कि मुहब्बत का रूप ऐसा उभरा कि असलियत की जानकारी का किसी को ख्याल ही न रहा और अगर किसी ने ख्याल करने की कोशिश भी की तो उसे ऐसी हिकारत की नज़र से देखा गया कि उसका जीना दुश्वार होगया। लेकिन आज बीसवीं सदी वाली दुनिया में वैसी हालत नहीं है। सोचने और कहने की सबको छूट है। इसलिए आज कहने में किसी को परेशानी नहीं होती।"

उमेश ने कोई उत्तर नहीं दिया। बेगमसाहेबा की ओर देखता हुआ मुस्कराता रहा।

"क्यों ? इसमें मुस्कराने की क्या बात है ?" बेगमसाहेबा के स्वर में भारीपन आ गया था। इसमें उन्हें अपना अपमान झलका था।

"इसलिए कि हिन्दी के शब्दों का भी आपको अच्छा ज्ञान है। और आपके मुँह से भले भी लगते हैं।"

बेगमसाहेबा समझ गईं कि उमेश ने अपनी हार स्वीकार कर ली है। उन्होंने आया को आवाज़ दी, "आप पान खाएँगे ? बुरा न मानियेगा। ऐसी बदतमीज़ी आपके चाँदी की तरह चमकते हुए दाँतों को देखकर की जारही है।"

"ज़रूर खाएँगे। अब आपके कहने का नाहीं करने की कहाँ हिम्मत है ?"

"मेहरबानी।"

आया आई। बेगमसाहेबा ने पान लाने के लिए कहा। पान खाने के उपरान्त उमेश बोला, "अब इजाज़त हो तो चलूँ। नवाबसाहब तो शायद अब शाम तक आएँगे।"

"नहीं आते ही होंगे। बैठिये, जल्दी क्या है ? क्या कहीं दौरे पर जाना है या भूख लग गई हो तो खाना निकलवाऊँ ?"

"अब मैं माँग लूँगा। आपके यहाँ मेरे लिए कोई तकल्लुफ नहीं रह गया है।"

"अब एक बात मैं आपसे पूछूँ ? बुरा तो नहीं मानोगे।"

"क्यों ? मैंने पूछी थी तो आप क्या बुरा मान गई थीं ? पूछिये।"

"आपने अभी तक शादी क्यों नहीं की है !"

उमेश ने सिर खुजलाया, "इसलिए कि यह बीसवीं शताब्दी है।"

"तो ?" बेगमसाहेबा उमेश का भावार्थ नहीं समझ सकी थीं।

"यही कि इस शताब्दी में सोचने और कहने की छूट सबको है इसलिए मेरी बीवी को भी यही छूट होगी तो उसे यह कहने में बिल्कुल हिचक न होगी कि दिल का सौदा कशिश का सौदा है, मुहब्बत का नहीं; जिसे मैं सही समझकर भी सही मानने को तैयार नहीं हूँ। ऐसी हालत में शादी करने से क्या फायदा ? अपनी ज़िन्दगी के साथ-साथ दूसरे की ज़िन्दगी

क्यों वरवाद की जाए ?"

"लेकिन यह तो ज़्यादती हुई न ? आप ग़लती को भी सही कहकर दूसरे पर अपनी प्रधानता लादने के हकदार कैसे हो सकते हैं ? जो हक़ आपको हासिल हैं, वही हक आपकी बीवी को भी होंगे।"

"जी हाँ, इसीलिए तो खमियाज़ा भुगत रहा हूँ। ख्यालात ही कुछ ऐसे बन गए हैं, वरना एक-एक और डेढ़-डेढ़ वजे तक मेरे भी खाने की इन्तज़ारी में कोई बैठा रहता।" वह हँसने लगा।

बेगमसाहेबा ने गर्दन झुकाकर अपने अधरों पर मुस्कान बिखेर दी, "बातों में आपसे पार पाना बड़ा मुश्किल है!"

तब तक बाहर किसी की आहट मालूम पड़ी। मुड़कर देखा गया तो नवाबसाहब चले आ रहे थे, "लीजिए आगए," उमेश ने कहा, "बड़ी उम्र है आपकी भी नवाबसाहब। आपका ज़िक्र आया नहीं कि आप सामने मौजूद।"

नवाबसाहब मुस्कराते हुए आकर बैठ गये और बोले, "इंस्पेक्टर-साहब! यही समझकर तो कच्चे धागे में बँधी चली आई थीं वरना अपने में कौन-सी खसूसियत थी ?"

सब हँसने लगे। वार्तालाप का क्रम बदला। दूसरी बातचीत होने लगी।

४९

सेमर के फूल से निकली हुई रुई के समान आजकल-आजकल करते-करते समय निकल गया। हरनाथ दवा का समुचित प्रबन्ध न कर सका। वार्षिक परीक्षा सिर पर आगई। 'प्रिपरेशन लीव' हुई। तदुपरान्त इम्तहान शुरू होगया। जैसे-तैसे रंजना ने इम्तहान दिया। उसकी हालत बिगड़

पड़ा। उसने डॉक्टरों से पूछ-ताछ आरम्भ की। डॉक्टरों ने एडवांस स्टेज बताकर कुछ करने से असमर्थता प्रगट की। हरनाथ की आखों के सामने अँधेरा छा गया। रंजना शोक सागर में डूब गई।

लगभग होस्टल की सभी लड़कियाँ जा चुकी थीं। रंजना के पिता के भी नित्य पत्र आने लगे थे और वह चिन्तित थे कि अभी तक उसके न आने का क्या कारण है? रंजना ने एक दिन हरनाथ से पूछा, "अब? होस्टल की लगभग सारी लड़कियाँ जा चुकी हैं। उधर पापा की भी चिट्ठियाँ...।"

"कल तुम दिल्ली चली जाओ।" चिन्तातुर हरनाथ के मुँह से निकला।

"फिर?"

"मैं परसों-नरसों दिल्ली आरहा हूँ। वहाँ काम बन जाएगा। तुम्हें थोड़ी सर्तकता बरतने की आवश्यकता पड़ेगी।"

रंजना ने गर्दन हिलाई और फिर चिन्ताओं में डूब गई। हरनाथ भी सोचने लग गया।

दूसरे दिन रंजना ने आँखों में आँसू भरकर हरनाथ से विदाई ली।

लाख प्रयत्न करने पर भी रंजना अपनी माँ की आँखों में धूल न झोंक सकी। रहस्य खुल गया और उसे सब कुछ बताना पड़ा। माँ ने सिर पीट लिया, "तुमने क्या कर दिया रंजना?" उनके नेत्रों से आँसू बह चले। थोड़ी देर बाद वह बोलीं, "हरनाथ तुमसे विवाह करेगा न?"

"हाँ।"

"कुछ निश्चित हुआ है?"

"अभी नहीं। दो-तीन दिनों में आने वाले हैं। आप उनसे बातें कर लीजिएगा।"

वह पुनः सोचने लग गईं।

अपने कथनानुसार हरनाथ चौथे दिन दिल्ली आगया, परन्तु रंजना से यह सुनकर कि भेद खुल गया है, उसका चेहरा उतर आया। उसे बड़ी शर्म लगने लगी। लेकिन जो सिर पर आ पड़ी थी उसे तो अब झेलने में ही कुशलता थी।

सन्ध्या समय रंजना के पापा ने प्रस्ताव रखा, "हालांकि गलती बहुत बड़ी होगई है, लेकिन अच्छाई इसी में है कि आप अपने बड़े दादा से

कहकर शादी की तारीख पक्की करें और अगर आप कुछ कहने में संकोच करते हों तो कहिए मैं जाकर बातचीत करूँ। अब ज्यादा वक्त खराब करने की गुंजाइश नहीं है।"

हरनाथ ने शीघ्रता से उत्तर दिया, "नहीं, नहीं। आपको कष्ट करने की कोई आवश्यकता नहीं है। मैं कल इलाहाबाद लौट जाऊँगा और बड़े दादा से सब कुछ तय करके आपको सूचित करूँगा। मैं रंजना से विवाह अवश्य करूँगा, बड़े दादा विरोध करेंगे तब भी।"

रंजना के पापा मौन हो रहे। हरनाथ अनुमति लेता हुआ उठकर रंजना के कमरे में आगया।

दूसरे दिन हरनाथ इलाहाबाद चला गया। एक दिन, दो दिन और तीन दिन बीत गए। हरनाथ, बड़े दादा से कहने के लिए साहस नहीं बटोर पा रहा था। कभी वह अपने को बुज़दिल कहता, कभी धिक्कारता, कभी रंजना की सौगन्ध खाता, कभी कमरे में टँगी भगवान कृष्ण की तस्वीर के सामने प्रतिज्ञा करता परन्तु बड़े दादा के सामने पहुँचते ही ये सब वेकार सिद्ध होजाते और वह विवाहवाली बात कहने में असमर्थ होजाता। प्रयत्न करने पर भी उसकी ज़बान उसका साथ न देती। हरनाथ थोड़ी देर तक इधर-उधर की बातें करने के उपरान्त उठकर चला आता। दो दिन और बीत गए। हरनाथ अपने बड़े दादा से कुछ भी न कह सका और सम्भवतः कभी कुछ कह भी नहीं सकेगा, ऐसा उसे विश्वास होगया। उसकी व्यथा बढ़ गई। नानाप्रकार के विचार मस्तिष्क में पुनः चक्कर काटने लगे। क्या होना चाहिए—मूल समस्या यही थी।

अनायास हरनाथ ने दिल्ली की तैयारी कर ली और दिल्ली आगया। हरनाथ को देखकर रंजना के माता-पिता को प्रसन्नता हुई। रंजना का तो कहना ही क्या था। हरनाथ ने विवाह के सम्बन्ध में कोई बातचीत नहीं की। स्नान, भोजन और सोने में दिन बीता। सन्ध्या समय एक सज्जन से मिलने का बहाना बताकर हरनाथ कनॉट सरकस आगया और आठ बजते-बजते पुनः घर लौट आया। भोजन किया और थकान का बहाना करते हुए तुरन्त सो गया।

रात आधी के समाप्त हो चुकी थी, परन्तु हरनाथ अभी जग रहा था।

बगल में रंजना की खाट थी। हरनाथ ने उठकर टेबिल लैम्प जलाया और बैठ गया।

"यह क्या ?" रंजना ने आँखें खोलीं, "नींद नहीं आ रही है ?" उसके अधरों पर मुस्कान की क्षीण रेखा फैल गई।

"तुम्हें आ रही है क्या ?"

रंजना ने गर्दन हिलाकर नाहीं किया।

हरनाथ ने बनावटी मुस्कराहट के साथ पूछा, "रंजना अगर बड़े दादा ने विवाह की स्वीकृति न दी हो तो क्या होगा ?"

"मुझे क्या मालूम क्या होगा ? जो तुम करोगे वही मैं भी करूँगी। लेकिन बड़े दादा स्वीकृति क्यों नहीं देंगे ? ऐसा तो कुछ भी नहीं है जिसपर उन्हें आपत्ति हो।"

हरनाथ ने जैसे रंजना की बात न सुनी हो, "अगर मैं तुम्हें छोड़कर कहीं भाग जाऊँ तो ?"

"तो क्या हुआ ? मैं ज़हर खालूँगी।"

"अच्छा !" हरनाथ ने बनावटी आश्चर्य प्रगट किया, "इतना साहस है ?"

"क्यों नहीं है ? नारकीय जीवन व्यतीत करने से तो मर जाना कहीं उत्तम होगा।"

"पर आत्महत्या करना पाप कहा गया है और फिर उस दोष रहित शिशु···।"

रंजना बीच में बोल उठी, "बड़े चतुर हो। मेरा आत्महत्या करना पाप है, परन्तु मुझे असहाय छोड़कर तुम्हारा मुँह छिपाकर भाग जाना पाप नहीं, क्यों ?"

क्षणभर सोचते रहने के उपरान्त हरनाथ ने पूछा, "और अगर संग-संग बैठकर हम दोनों ज़हर खा लें तब कैसा रहेगा ?"

"तुम्हारा सिर रहेगा। तुम क्यों ज़हर खाने लगे ? इन्हीं बेसिर-पैर की बातों के लिए मुझे जगाया है ? लाइट ऑफ करो। देखती हूँ कुछ दिनों में तुम फिलासफर न बन जाओ।"

हरनाथ आकर रंजना की खाट पर बैठ गया और मिनट-दो मिनट

झुककर उसे निहारते रहने के उपरान्त उसके कपोलों को थपथपाता और मुस्कराने लगा, "तुम पागल हो। प्रेम को अमरत्व देने का यही रास्ता है रंजना। जीवन में कटुता का आना स्वाभाविक है जो प्रेम के आदर्श का शत्रु है। केवल मृत्यु ही इस भय से मुक्ति दिला सकती है, इसलिए मैं तो समझता हूँ जीवन से मरण उत्तम है।"

"जाओ सोओ। मुझे अब नींद आ रही है।" उसने आँखें बन्द कर लीं, "मालूम पड़ता है इस बार इलाहाबाद में किसी बाबा का संग हो गया था?" उसने करवट बदल ली, "कल ममी पापा से कह रही थी कि शादी अगले महीने में कर देना ही ठीक रहेगा।"

हरनाथ उठकर अपनी खाट पर चला आया और बत्ती बुझाकर सोने का प्रयास करने लगा। उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

सबेरे तड़के हरनाथ ने स्नान किया। कपड़े बदले और नौकर से चाय लाने के लिए कहकर रंजना के कमरे में आकर बैठ गया। नौकर चाय ले आया। हरनाथ ने पूछा, "अभी बाबूजी टहलकर नहीं आए?"

"जी नहीं। देर में आते हैं।"

"रंजना को भेज दो।"

"जी।" नौकर चला गया।

रंजना अपना प्याला लिये आई और बगल की कुर्सी पर बैठ गई, "क्या है?" उसने पूछा।

"तुमसे एक ज़रूरी बात कहनी है।"

"कहो।"

"बड़े दादा ने शादी की परमीशन नहीं दी।" हरनाथ ने झूठ बोला।

"क्या!"

"वह ऐसी शादी करके खान्दान की इज्ज़त पर धब्बा नहीं लगाएंगे।"

"इसमें धब्बा लगने की क्या बात है?" रंजना को रुलाई आने लगी थी।

"उनसे बहस कौन करता? जो उन्होंने कह दिया वह ब्रह्मा की लकीर होगई।"

"अब तुमने क्या सोचा है?"

"बताता हूँ। उसने जेब से एक छोटी शीशी निकाली और जल्दी से

मुँह में उड़ेल ली।

"यह क्या !" रंजना को कुछ सन्देह हुआ और उसने झपटकर शीशी छीन ली। शीशी पर अंग्रेजी में 'पायज़न' लिखा हुआ था। वह चिल्लाने को हुई। हरनाथ ने उसका मुँह दबा दिया, "अब चिल्लाने से फायदा ? मैं तुमसे अलग रहकर जीवित नहीं रह सकता था रंजना। मेरे लिए यही मार्ग उचित था।"

रंजना ने भी झट से शेष शीशी को अपने मुँह में उलट लिया।

"रंजना।" हरनाथ के छीनने से पहले उसने विष निगल लिया था।

"जब तुम मेरे लिए ज़िन्दगी मिटा सकते हो तो क्या मैं तुम्हारे लिए नहीं मिट सकती ? अच्छा, अब अन्तिम नमस्कार स्वीकार करो।" उसने हाथ जोड़े और कुर्सी से उठकर खाट पर जा लेटी, "अब तुम ?"

"मैं भी तुम्हारे पास रहूँगा।"

थोड़ी ही देर में रंजना की आँखें मुँदने लगीं और पूर्ण रूप से मुँद गई। पता नहीं क्या सोचकर हरनाथ उठ खड़ा हुआ और तेज़ी से बाहर निकला। सड़क पर आकर टैक्सी की और स्टेशन चलने को कहा। हरनाथ का बलिष्ठ शरीर अब भी मृत्यु से लड़ रहा था, यद्यपि विष सारे शरीर में व्याप्त हो चुका था। स्टेशन आया। तब तक ड्राइवर के कानों में आवाज़ पड़ी, "लौटाओ। वहीं ले चलो जहाँ से लाए हो।"

ड्राइवर ने गर्दन मोड़कर देखा। वह धक से रह गया। हरनाथ के मुँह से फिचकुर निकल रहा था और उसकी लाल-लाल आँखें झपकती जा रही थीं। चतुर ड्राइवर ने शीघ्रता बरती और समीप के पुलिस स्टेशन में लाकर गाड़ी खड़ी कर दी। उसने दारोगाजी से जाकर हाल बताया। वह उठकर आए। हरनाथ के नेत्र बन्द हो चुके थे और उसका शरीर गद्दी पर लुढ़क चुका था, परन्तु अब भी उसके अन्दर चेतना थी। दारोगा जी ने झटपट उसे नीचे उतरवाया और लगे अपने कागज़ की खाना-पूरी करने। काश अगर कागज़ के स्थान पर उन्होंने हरनाथ के जीवन के कागज़ की खाना-पूरी की होती तो सम्भवतः वह काल के गाल से बचा लिया गया होता।

हरनाथ कुछ भी न बता सका और उसकी जीवन-लीला समाप्त

होगई। डाक्टर उस समय बुलाया गया जब हरनाथ के स्थान पर हरनाथ की लाश पड़ी हुई थी।

५०

बेगमसाहेबा और उमेश के बीच रब्त-ज़ब्त बढ़ने लगा। आये दिन बैठकें होने लगीं। हँसी-मज़ाक चलने लगे। नज़्में और गज़लें गाई जाने लगीं। उमेश के जीवन में आनन्दवाले दिन लहलहाने लगे। परन्तु यह लहलहाना उस मालिक को पसन्द हो तब न। अभी दो मास भी व्यतीत नहीं हुए होंगे कि एक दिन अकस्मात हेडआफिस कानपुर से आदेश आया कि चिल्ला बरियर तोड़ दिया गया और उसे बाँदा में डिप्टी रीजनल मार्केटिंग आफिसर को चार्ज देकर शीघ्र झाँसी चला जाना है। तूफान ने शान्तिपूर्वक बहती हुई नदी को खलबला दिया। सुख का स्वप्न टूट गया। खुशी की दुनिया मिट गई। सब बिगड़ गया।

आदेश आने के एक सप्ताह बाद उमेश ने व्यथाभरे हृदय से नवाबसाहब और बेगमसाहेबा से विदा ली तथा अपनी ज़िन्दगी और नौकरी को कोसता हुआ झाँसी को चल पड़ा। थोड़े दिनों तक अतीत के चित्र आँखों के सामने नाचते रहे फिर धीरे-धीरे सब मिट गये। काम अधिक नहीं था इसलिए उपन्यास के शेष पृष्ठों को पूरा किया और विभिन्न प्रकाशकों से प्रकाशन के सम्बन्ध में पत्र व्यवहार करने लगा। लेखक की प्रथम कृति होने के कारण प्रकाशक सीधे मुँह बात नहीं कर रहे थे यद्यपि उपन्यास प्रत्येक रूप से सुन्दर था। बड़ी कठिनाइयों के उपरान्त एक प्रकाशक बहुत थोड़ी रायल्टी पर छापने को तैयार हुआ। उमेश ने दे दिया।

इसी बीच ज़मींदारी उन्मूलन में वसूली के लिए नायब तहसीलदारों की माँगें निकलीं। उमेश ने भी अपनी अर्जी लगा दी। नौकरी अच्छी थी।

समय पुनः बीतने लगा। कहावत है, 'झाँसी गले की फाँसी, दतिया गले का हार; ललितपुर न छोड़िए जब तक मिले उधार'। वास्तव में उमेश के लिए झाँसी गले की फाँसी बन गई। रीजनल फूड कन्ट्रोलर जो गल्ला-विभाग का प्रधान अधिकारी होता था, झाँसी दौरे पर आया। यह बड़े कड़े और रूखे स्वभाव का व्यक्ति था। अफसरी इसके रग-रग में फैली हुई थी। बदतमीज़ इतना था कि अपने अहलकारों की प्रतिष्ठा को कुछ समझता ही नहीं था। जो मुँह में आता बक देता था। बेचारे सब सुनते और बर्दाश्त करते थे। रोज़ी की बात थी, बाल-बच्चों की बात थी।

दफ्तर का निरीक्षण आरम्भ हुआ। फूड कन्ट्रोलर स्वयं सब कागज़ात देख रहा था। उमेश भी अपनी फाइलें दिखलाता रहा। एक फाइल पर कन्ट्रोलर रुक गया, "क्यों जी, इस लेटर का जवाब अभी तक तुमने क्यों नहीं दिया?"

'तुम' का प्रयोग उमेश को अखरा, परन्तु वह शान्त रहा, "आज दे दूँगा।"

"काम ठीक से करो। मुफ्त की तनख्वाह नहीं मिलती है।" वह दूसरी फाइल देखने लगा।

चार-छै फाइलें देखने के उपरान्त पुनः एक उसी प्रकार का पत्र देखने को मिल गया। बस, वह आपे से बाहर हो गया, "तुम तो बिल्कुल इस डिपार्टमेण्ट में रखने के काबिल नहीं हो। मैं ऐसे काहिल और गैर ज़िम्मेदार आदमी को कतई पसन्द नहीं करता।" उसने घण्टी बजाई।

चपरासी आया।

"डिप्टीसाहब को बुलाओ।"

डिप्टीसाहब आये। कन्ट्रोलर बोला, "इसका एक्सप्लेनेशन तलब कीजिये। यह बिल्कुल काम नहीं करता है। काम कैसे करे? इसके कपड़े नहीं देखते, जैसे आई० सी० एस० रैंक का कोई ऑफीसर हो। मैं...।"

उमेश के लिए इतना सहन करना असम्भव था। वह बीच में बोल उठा, "मैं कन्ट्रोलरसाहब से रीक्वेस्ट करूँगा कि वह अपनी ज़बान पर कुछ रोक-थाम रखें। मैंने नौकरी की है, अपनी इज़्ज़त नहीं बेची है।"

जिसप्रकार उमेश की नौकरी में यह पहली घटना थी उसीप्रकार कन्ट्रोलर के लिए उमेश पहला व्यक्ति था, जिसने ऐसी बात कहने की हिम्मत